बारह महीनों के
हिन्दुओं के पवित्र
व्रत और त्यौहार

बारह महीनों के

हिन्दुओं के पवित्र व्रत और त्यौहार

सम्पादक:

पण्डित पुनीत मिश्र

प्रकाशक:

श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार

कचौड़ीगली, वाराणसी– २२१००१

फोन नं. [0542] 2392543, 2392471

सन् २००६ ई०] **सजिल्द मूल्य– 80–** [मूल्य- 60

अनुक्रमणिका

विषय		पृष्ठाङ्क

विषय		पृष्ठाङ्क

नव संवत्सर

चैत्र मास के व्रत एवं त्यौहार

हमारे यहाँ पश्चिमी यूरोपीय लोग अपनी सभ्यता से प्रभावित होकर पहली जनवरी, वास्तव में इक्तीस दिसम्बर की मध्यरात्रि में बारह बजते ही नववर्ष मनाते हैं। हम भारतीय लोग अपने यहाँ बड़ी श्रद्धा से चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को प्रातः सूर्योदय से नवीन दिन का प्रारम्भ मानते हैं, अतः मध्यरात्रि में मनोविनोद और हुल्लड़बाजी से नहीं, चैत्र के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को प्रात:काल ब्रह्म मुहुर्त में स्नानादि से निवृत्त होकर ईश-आराधना से प्रारम्भ होता है हमारा नववर्ष। यहाँ एक अन्य विशेषता और भी है हमारा भारतीय मास तो पूर्णमासी के दूसरे दिन अर्थात् कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से प्रारम्भ होकर पूर्णिमा के दिन पूर्ण होता है और इस प्रकार मास के मध्य में आती है अमावस्या। परन्तु हमारा नव वर्ष मास के प्रथम दिवस अर्थात् कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से नहीं, आधा चैत्र मास बीत जाने के बाद चैत्र की अमावस्या के दूसरे दिन अर्थात् चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से प्रारम्भ होता है। इस प्रकार चैत्र मास का प्रथम पूर्वार्द्ध अर्थात् होली की पड़वा से चैत्र की अमावस्या तक के पन्द्रह दिन तो गत वर्ष के अन्तिम पन्द्रह दिन होते हैं और चैत्र मास का उत्तरार्द्ध अर्थात् प्रतिपदा से पूर्णिमा तक के पन्द्रह दिन नवीन वर्ष के अन्तर्गत आते हैं।

नवरात्र (दुर्गापूजन)

हम हिन्दू हैं अतः हमें चाहिए कि नववर्ष के दिन अपने घरों के दरवाजों पर आम और अशोक के पत्तों की वन्दनवारें लगाएँ तथा घरों को सजाएँ। नववर्ष के स्वागत में मकानों के ऊपर गेरूए रंग की धर्म-ध्वजाएँ भी हमें फहरानी चाहिए। ब्राह्मणों, गुरुजनों और अपने से बड़ों को प्रणाम करके उनसे आशीर्वाद तो हमें लेने ही चाहिए, नव वर्ष का पंचांग सुनने का भी विशिष्ट धार्मिक महत्त्व है। इसके लिए उचित तो यही है कि नए वर्ष का पंचांग अथवा जन्त्री पहले ही घर लाकर रख ली जाए।

वासन्तीय नवरात्र पर्व चैत्र शुक्ल की प्रतिपदा से लेकर रामनवमी तक मनाया जाता है। इन दिनों भगवती दुर्गाजी की पूजा तथा कन्या पूजन का विधान है।

प्रतिपदा के दिन कलश की स्थापना एवं जौ बोने की क्रिया की जाती है। नौ दिन तक ब्राह्मण द्वारा या स्वयं देवी भगवती दुर्गा का पाठ करने का विधान है।

कथा-- प्राचीन समय में सुरथ नाम के राजा थे। राजा प्रजा की रक्षा में उदासीन रहने लगे थे। परिणाम स्वरूप पड़ोसी राजा ने उन पर चढ़ाई कर दी। सुरथ की सेना भी शत्रु से मिल गई थी। परिणाम स्वरूप राजा सुरथ की हार हुई और वह जान बचाकर जंगल की तरफ पलायन कर गया।

उसी वन में समाधि नामक एक वणिक् अपनी स्त्री एवं संतान के दुर्व्यवहार के कारण निवास करता था। उसी वन में वणिक् समाधि और राजा सुरथ की भेंट हुई। दोनों में परस्पर परिचय हुआ। वे दोनों घूमते हुए महर्षि मेधा के आश्रम में पहुँचें। महर्षि मेधा ने उन दोनों के आने का कारण जानना चाहा तो वे दोनों बोले कि हम अपने ही सगे-सम्बन्धियों द्वारा अपमानित एवं तिरस्कृत होने पर भी हमारे हृदय में उनका मोह बना हुआ है, इसका क्या कारण है?

महर्षि मेधा ने उन्हें समझाया कि मन शक्ति के आधीन होता है और आदि शक्ति के विद्या और अविद्या दो रूप हैं। विद्या ज्ञान-स्वरूप है और अविद्या अज्ञान स्वरूपा। जो व्यक्ति अविद्या के आदिकरण रूप में उपासना करते हैं, उन्हें वे विद्या स्वरूपा प्राप्त होकर मोक्ष प्रदान करती हैं।

इतना सुन राजा सुरथ ने प्रश्न किया— हे महर्षि! देवी कौन है? उसका जन्म कैसे हुआ? महर्षि बोले— आप जिस देवी के विषय में पूछ रहे हैं वह नित्य स्वरूपा और विश्व व्यापिनी हैं। उसके बारे में ध्यान पूर्वक सुनो। कल्पांत के समय विष्णु भगवान् क्षीर सागर में अनन्त शैय्या पर शयन कर रहे थे, तब उनके दोनों कानों से मधु और कैटभ नामक दो दैत्य उत्पन्न हुए। वे दोनों विष्णु की नाभि कमल से उत्पन्न ब्रह्माजी को मारने दौड़े। ब्रह्माजी ने उन दोनों राक्षसों को देखकर विष्णुजी की शरण में जाने की सोची। परन्तु विष्णु भगवान् उस समय सो रहे थे। तब उन्होंने विष्णु भगवान् को जगाने

हेतु उनके नयनों में निवास करने वाली योगनिद्रा की स्तुति की।

परिणामस्वरूप तमोगुण अधिष्ठात्री देवी विष्णु भगवान् के नेत्र, नासिका, मुख तथा हृदय से निकलकर ब्रह्मा के समाने उपस्थित हो गई। योगनिद्रा के निकलते ही विष्णु भगवान् उठकर बैठ गए। भगवान् विष्णु और उन राक्षसों में पाँच हजार वर्षों तक युद्ध चलता रहा। अन्त में मधु और कैटभ दोनों राक्षस मारे गए।

ऋषि बोले— अब ब्रह्माजी की स्तुति से उत्पन्न महामाया देवी की वीरता तथा प्रभाव का वर्णन करता हूँ, उसे ध्यानपूर्वक सुनो।

एक समय देवताओं के स्वामी इन्द्र तथा दैत्यों के स्वामी महिषासुर में सैकड़ों वर्षों तक घनघोर संग्राम हुआ। इस युद्ध में देवराज इन्द्र की पराजय हुई और महिषासुर इन्द्रलोक का स्वामी बन बैठा।

अब देवतागण ब्रह्मा के नेतृत्व में भगवान् विष्णु और भगवान् शंकर की शरण में गए।

देवताओं की बातें सुनकर भगवान् विष्णु तथा भगवान् शंकर क्रोधित हो गए। भगवान् विष्णु के मुख तथा ब्रह्मा, शिवजी तथा इन्द्र आदि के शरीर से एक तेज पुंज निकला जिससे समस्त दिशाएँ जलने लगीं और अन्त में यही तेज पुंज एक देवी के रूप में परिवर्तित हो गया।

देवी ने सभी देवताओं से आयुद्ध एवं शक्ति प्राप्त करके उच्च स्वर में अट्टहास किया जिससे तीनों लोकों में हलचल मच गई।

महिषासुर अपनी सेना लेकर इस सिंहनाद की ओर दौड़ा। उसने देखा कि देवी के प्रभाव से तीनों लोक आलोकित हो रहे हैं।

महिषासुर की देवी के सामने एक भी चाल सफल नहीं हुई और वह देवी के हाथों मारा गया। आगे चलकर यही देवी शुम्भ और निशुम्भ राक्षसों का वध करने के लिए गौरी देवी के रूप में अवतरित हुईं।

इन उपरोक्त व्याख्यानों को सुनाकर मेधा ऋषि ने राजा सुरथ तथा वणिक् से देवी स्तवन की विधिवत् व्याख्या की।

राजा और वणिक् नदी पर जाकर देवी की तपस्या करने लगे। तीन वर्ष घोर तपस्या करने के बाद देवी ने प्रकट होकर उन्हें आशीर्वाद दिया। इससे वणिक् संसार के मोह से मुक्त होकर आत्मचिंतन में लग गया और राजा ने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करके अपना वैभव प्राप्त कर लिया।

*

गणगौर या गनगौर

(चैत्र शुक्ल तृतीया)

भारत के सभी प्रान्तों में थोड़े-बहुत नाम भेद से पूर्ण-धूमधाम के साथ (गणगौर) मनाया जाता है गौरी पूजन का यह त्यौहार, जबकि राजस्थान क़ा तो यह अत्यन्त विशिष्ट त्यौहार है। पुराणों और अन्य धर्मग्रन्थों में गौरी-तृतीया, गौरी उत्सव, ईश्वर गौरी और गनगौर आदि नाम से इसके विधि-विधान और महत्त्व का विस्तृत वर्णन मिलता है। हमारे यहाँ स्त्रियाँ इस व्रत को सदा सुहागिन रहने के लिए करती हैं।

शास्त्रों के अनुसार एक बार भगवान् शिव पार्वती के साथ भूलोक भ्रमण हेतु आए। चैत्र शुक्ला तृतीया के दिन पार्वती जी एक नदी पर स्नान करने गई तथा वहाँ उन्होंने बालू का शिवलिंग बनाकर उसकी भक्तिभाव से पूजा की। यह पूजा उन्होंने एकांत में शिवज़ी से छिपकर की थी, फिर भी अन्तर्यामी भगवान् शिव ने उन्हें अटल सौभाग्य का वरदान दिया। कुछ समय बाद वहाँ गाँव की अन्य स्त्रियाँ आईं और उन्होंने भक्तिभावपूर्वक पार्वतीजी की पूजा की। इस पूजा से प्रसन्न होकर पार्वतीजी ने सभी स्त्रियों को अटल सौभाग्य का वरदान प्रदान किया। यह व्रत और पूजा पार्वतीजी ने शिवज़ी से छिपकर की थी। यही कारण है कि केवल स्त्रियाँ ही इस व्रत में सभी कार्य करती हैं, पुरुषों को तो इसका प्रसाद तक नहीं दिया जाता।

इस दिन स्त्रियाँ सुन्दर से सुन्दर वस्त्र और आभूषण धारण करके सम्पूर्ण शृंगार करती हैं। घर के किसी कमरे में एक पवित्र स्थान पर चौबीस अंगुल चौड़ी और चौबीस अंगुल लम्बी वर्गाकार वेदी बनाकर हल्दी, चंदन, कपूर, केसर आदि से उस पर चौक पूरा जाता है। फिर इस पर बालू से गौरी अर्थात् पार्वती बनाकर उन पर सुहाग की सभी वस्तुएँ, काँच की चूड़ियाँ, महावर, सिन्दूर, रोली आदि चढ़ाते हैं। गौरी की इस प्रतिमा को फल-फूल, नैवेद्य आदि अर्पण पूर्ण भक्ति भाव से की जाती है पार्वती जी अर्थात् गौरी की पूजा। गौरी पर चढ़ाया हुआ सिन्दूर महिलाएँ अपनी माँग में भरती हैं। पूजन दोपहर को होता है और इसके बाद कभी भी भोजन किया जा सकता है, परन्तु पूरे दिन मे एक ही बार भोजन करने का ही विधान है।

गनगौर पर विशेष रूप से मैदा के गुने बनाए जाते हैं जो कई दिन तक खराब न होने वाले एक प्रकार की मिठाई होते हैं। लड़की की शादी

के बाद लड़की अपने मायके में गणगौर मनाती है और इन गुनों तथा सास के कपड़ों का वायना निकालकर ससुराल में भेजती हैं। यह प्रथम वर्ष में ही होता है, बाद में प्रतिवर्ष गणगौर लड़की अपनी ससुराल में ही मनाती है। ससुराल में भी बहु गणगौर का उद्यापन करती है और अपनी सास को वायना, कपड़े तथा सुहाग का सारा सामान देती है। इसके साथ ही सोलह सुहागिन ब्राह्मणियों को भोजन कराकर प्रत्येक को सम्पूर्ण श्रृंगार की वस्तुएँ और यथाशक्ति दक्षिणा दी जाती है। इस विधि-विधान में देश और काल के अनुरूप थोड़ा बहुत अन्तर हो सकता है, परन्तु आधारभूत विधान यही रहता है। गणगौर पूजन के समय महिलाएँ एक कहानी भी कहती हैं जो इस प्रकार है—

कथा– एक समय महादेवजी नारदजी के साथ देश भ्रमण को निकले। साथ में पार्वतीजी भी थीं। चलते-चलते तीनों एक गाँव में पहुँचे। उस दिन चैत्र शुक्ला तृतीया थी। गाँव वालों ने जब सुना कि भगवान् शिवजी पार्वतीजी सहित यहाँ पर पधारे हैं तब कुलीन स्त्रियाँ उनके पूजन के लिए सुन्दर-सुन्दर और स्वादिष्ट भोजन बनाने लगीं। इसी तैयारी में उन्हें देर हो गई। किन्तु निम्न वर्ग की स्त्रियाँ जैसे बैठी थी वैसे ही थालियों में हल्दी-चावल रखकर दौड़ती हुई शिव-पार्वती के पास पहुँच गई। पार्वतीजी ने उनकी पूजा स्वीकार करके उनके ऊपर तमाम सुहाग-रस छिड़क दिया। वे अटल सौभाग्य प्राप्त कर लौट गईं। इसके बाद उच्च कुल की नारियाँ सोलहों श्रृंगार और आभूषणों से सजी हुई, अनेक प्रकार के पकवान और पूजा की सामग्रियाँ सोने-चाँदी के थालों में सजाकर पूजन के लिए आई। उन्हें देखकर शिवजी ने कहा— हे पार्वती! तुमने तमाम सुहाग-रस तो साधारण स्त्रियों में बाँट दिया, अब इन्हें क्या दोगी?

पार्वतीजी ने उत्तर दिया— आप इसकी चिंता न करें। उन्हें सिर्फ ऊपरी पदार्थों से बना रस दिया गया है। इसलिए उनका सुहाग धोती से रहेगा, परन्तु इनको मैं अपनी अंगुली चीरकर अपने रक्त का सुहाग-रस दूँगी। जिसकी माँग में यह सुहाग-रस पड़ेगा वह मेरे समान ही तन-मन से सौभाग्यवती होगी। जब स्त्रियाँ पूजन कर चुकीं तब पार्वतीजी ने अपनी उंगली चीरकर उन पर छिड़की। जिस पर जैसे छींटे पड़े, उसने वैसा ही सुहाग पाया। इसके बाद पार्वतीजी ने शिवजी की आज्ञा से नदी तट पर जाकर स्नान किया। फिर बालू के महादेव बनाकर वह उनका पूजन करने

लगीं। पूजन के बाद बालू के पकवान बनाकर शिवजी को भोग लगाया। इसके बाद प्रदक्षिणा की और नदी के किनारे की मिट्टी का टीका माथे पर लगा कर दो कण बालू का प्रसाद पाया और शिवजी के पास लौट आई। इस सब पूजन आदि में पार्वतीजी को नदी के किनारे बहुत देर हो गई थी। महादेवजी ने उनसे देरी का कारण पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया कि वहाँ मेरे भाई-भावज आदि मायके से आ गये थे, इसी कारण देर हो गई। शिवजी ने फिर पूछा कि तुमने पूजन करके किस वस्तु का भोग लगाया और स्वयं क्या प्रसाद पाया?

पार्वतीजी ने उत्तर दिया कि मेरी भावजों ने मुझे दूध-भात खिलाया है, उसे ही खाकर मैं चली आ रही हूँ। ऐसा सुनकर शिवजी भी दूध-भात खाने के लिए वहाँ चल पड़े। पार्वतीजी दुविधा में पड़ गई। उन्होंने शिवजी का ध्यान करके प्रार्थना की कि हे प्रभु! यदि मैं आपकी अनन्य दासी हूँ तो आप ही इस समय मेरी लाज रखिए। इस प्रकार प्रार्थना करते हुए वे भी शंकरजी के पीछे-पीछे चलने लगीं। अभी कुछ ही दूर चले थे कि उन्हें नदी के किनारे एक सुन्दर माया का महल दिखाई देने लगा। जब वे उस महल के भीतर पहुँचे तब वहाँ शिवजी के साले और सलहज आदि परिवार के सभी लोग मौजूद थे। उन्होंने बहन-बहनोई का बड़े प्रेम से स्वागत किया। दो दिन तक खूब मेहमानदारी होती रही। तीसरे दिन सबेरे पार्वतीजी ने शिवजी से चलने के लिए कहा किन्तु वे तैयार न हुए। पार्वतीजी रूठकर चल दीं। तब तो शिवजी को उनका साथ देना ही पड़ा। नारदजी भी साथ ही थे। तीनों चलते-चलते बहुत दूर निकल गये।

सायंकाल होने पर शिवजी बोले कि मैं तुम्हारे मायके में अपनी माला भूल आया हूँ। पार्वतीजी माला लेने के लिए जाने को तैयार हुई, किन्तु शिवजी के आग्रह पर वे न जा सकीं और नारदजी वहाँ गये। नारदजी ने जाकर देखा कि वहाँ किसी महल का निशान भी नहीं है। चारों ओर घोर वन है और हिंसक पशु घूम रहे हैं। नारदजी घंटों तक अन्धकार में भूलते-भटकते रहे। सहसा बिजली के चमकने पर उन्हें शिवजी की माला एक वट वृक्ष पर टंगी हुई दिखाई दी। नारदजी उसे लेकर वहाँ से भागे और शिवजी के पास पहुँचकर अपना कष्ट सुनाने लगे। शिवजी ने हँसते हुए कहा कि यह पार्वतीजी की लीला है। गौरी पार्वती ने विनम्र होकर कहा— कि मैं किस योग्य हूँ, यह सब तो आपकी ही कृपा का प्रभाव है।

शिव-पार्वती की बात सुनकर नारदजी ने उन्हें मस्तक झुकाकर प्रणाम किया और कहा— माता! आप पतिव्रताओं में सर्वश्रेष्ठ हैं, सौभाग्यवती आदिशक्ति हैं। यह सब आपके पतिव्रत धर्म का ही प्रभाव है। संसार की स्त्रियाँ आपके नाम का स्मरण करने मात्र से अटल सौभाग्य प्राप्त कर सकती हैं और समस्त सिद्धियों को अपना बना सकती हैं। फिर आज के दिन आपकी भक्तिभाव से पूजा- आराधना करने वाली नारियों को तो अटल सौभाग्य मिलेगा ही।

वैनायकी गणेश चतुर्थी

चैत्रमास की शुक्ल पक्ष की चतुर्थी को मोदक आदि से गणपति का पूजन करें तो विघ्न-बाधाओं का नाश होता है तथा कामनाओं की पूर्ति होती है।

चैत्र पंचमी (चैत्र शुक्ल पंचमी)

इस दिन भगवान् विष्णु ने लक्ष्मीजी को अपनी प्राण वल्लभा स्वीकार किया था। इस दिन भगवान् विष्णु तथा भगवती लक्ष्मी का एक साथ पूजन करने से अपार वैभव तथा अतुल सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।

इस उत्सव की सफलता के लिए सौभाग्यवती, सुंदर, सुलक्षण विप्र–पत्नी को वस्त्रालंकार देकर आशीर्वाद लेना चाहिए तथा स्वयं भी कुटुम्ब के लोगों सहित भगवती लक्ष्मी से सत्य-धर्म से उपलब्ध होने वाले कीर्ति वैभव सुख प्राप्ति की प्रार्थना करनी चाहिए। इस दिन भागवत दशम स्कन्ध उत्तरार्ध की कथा, लक्ष्मी अवतार, रूक्मणी हरण तथा श्रीकृष्ण विवाह आदि सुनना चाहिए।

व्रती को चाहिए कि तृतीया को स्नानादि से निवृत्त होकर स्वच्छ वस्त्र धारण करे। वस्त्र यदि श्वेत हो तो अच्छा है। माला भी सफेद लें। इस दिन सारा समय व्रत करके, दही, घी और भात का भोजन किया जाता है।

एक दिन पूर्व अर्थात् चतुर्थी को स्नान करके यह व्रत रखें और पंचमी को प्रातः स्नानादि करके लक्ष्मीजी का पूजन करें। पूजन में धान्य, हल्दी, अदरक, गन्ने, गुड़ और लवण अर्पित करें तत्पश्चात् कमलपुष्पों से लक्ष्मीसूक्त से हवन करें।

यदि कमल पुष्प न मिले तो बेल के टुकड़ों का और यदि वे भी उपलब्ध न हो तो केवल घी का हवन करें। कमलयुक्त तालाब में स्नान करके यदि स्वर्ण का दान करें तो श्री अर्थात् लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

अशोकाष्टमी

अशोकाष्टमी का त्यौहार चैत्र मास की शुक्ल पक्ष की अष्टमी को मनाया जाता है। इस दिन अशोक वृक्ष के पूजन का विधान बताया गया है।

कथा– कहते हैं कि इस दिन हनुमान्जी ने माता सीता को लंका में अशोक वाटिका में भगवान् राम का संदेश व अंगूठी दी थी। इस दिन अशोक वृक्ष की कलिकाओं का रस निकालकर पीना चाहिए। इससे शरीर के रोगों का समूल नाश हो जाता है।

महाअष्टमी (दुर्गाअष्टमी)

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को नवरात्र पूजा का जो विशेष आयोजन प्रारम्भ होता है वह आज या आगामी दिन अर्थात् नवमी को पूर्णता प्राप्त करता है। इस अष्टमी का अत्यन्त विशिष्ट महत्त्व है क्योंकि आज के दिन ही आदिशक्ति भवानी ने अवतार धारण किया था। भगवती भवानी अजेय शक्तिशालिनी महानतम शक्ति हैं और यही कारण है कि— महाष्टमी कहा जाता है इस अष्टमी को।

महाष्टमी को भगवती के भक्त उनके दुर्गा, काली, भवानी, जगदम्बा, नव दुर्गाएँ आदि रूपों में पूजा-आराधना करते हैं। मूर्ति को शुद्ध जल से स्नान कराकर वस्त्राभूषणों द्वारा पूर्ण शृंगार किया जाता है और फिर विधि-विधानपूर्वक आराधना की जाती है। हवन की अग्नि जलाकर उसमें धूप, कपूर, घी, गुग्गुल और हवन-सामग्री की आहुतियाँ तो दी ही जाती हैं सिन्दूर में लपेट कर एक जायफल की आहुति देने का भी विधान है। शुद्ध जल में शहद अथवा गुड़ डालकर इस मीठे शर्बत को पीपल अथवा गाय के खूटे पर चढ़ाने का भी विधान है। धूप, दीप, नैवेद्य से देवी की पूजा करने के बाद मातेश्वरी की जय बोलते हुए उनकी एक सौ एक परिक्रमाएँ दी जाती हैं। इस व्रत में एक बार तो फलाहार किया ही जाता है। अशोक के पत्ते खाने की परम्परा भी है कुछ क्षेत्रों में गोबर से पार्वतीजी की प्रतिमा बनाकर पूजने का विधान भी है।

अधिकांश परिवारों में नवदुर्गा पूजा का विसर्जन आज ही होता है जिसमें छोटे बालक-बालिकाओं की पूजा करके उन्हें पूड़ी, हलवा चने और कुछ भेंट दी जाती है।

*

रामनवमी (चैत्र शुक्ल नवमी)

चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि को पुनर्वसु नक्षत्र तथा कर्क लग्न में सूर्यवंश में कौशल्या की कोख में मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम का जन्म हुआ था। इसलिए यह तिथि रामनवमी के नाम से जानी जाती है। भारतीय जनमानस में यह दिन पुण्य पर्व माना जाता है। महाकवि तुलसीदास ने भी इसी दिन से रामचरितमानस की रचना आरम्भ की थी।

पूरे भारतवर्ष के हिंदू परिवारों में राम का यह जन्म महोत्सव मनाया जाता है। इस दिन पुण्य सलिला सरयू में अनेक लोग स्नान करके पुण्य-लाभ कमाते हैं। रामभक्तों के लिए तो यह पर्व अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है ही, वैसे पूरे भारतवर्ष में यह पर्व सर्वत्र आनन्दोल्लास पूर्वक मनाया जाता है।

अयोध्या में इस दिन बड़ा भारी मेला लगता है। सुदूर अंचलों से आए हुए यात्री श्रीरामचन्द्रजी के दर्शन और सरयू में स्नान करने के लिए आते हैं।

इस दिन व्रत रखकर भगवान् राम और रामचरित मानस की पूजा करनी चाहिए। भगवान् राम की मूर्ति को शुद्ध पवित्र ताजे जल से स्नान कराकर, नवीन वस्त्राभूषणों से सुसज्जित करें। भगवान् राम को, दही, दूध, घी, शहद, चीनी से बनाया हुआ पंचामृत तथा भोग अर्पित किया जाता है। फिर भगवान् का भजन, कीर्तन, पूजन आदि करके प्रसाद को पंचामृत सहित वितरित किया जाता है।

चैत्र मासीय नवरात्र को वांसतीय नवरात्र के नाम से भी जाना जाता है। जो मनुष्य भक्तिभाव से रामनवमी का व्रत करते हैं, उन्हें महान् फल मिलता है। इस दिन के व्रत का पारण दशमी को करके व्रत का विसर्जन करें। इस दिन सारा समय भगवान् का भजन-स्मरण, स्तोत्र पाठ, दान-पुण्य, हवन और उत्सव में बिताएँ।

वास्तव में नवमी को पुनर्वसु नक्षत्र मिलने पर ही यह पर्व होता है। पुनर्वसु नक्षत्र के न मिलने पर यदि दोपहर में नवमी मिले तो भी यह पर्व मनाया जाता है। इस दिन कुछ लोग दोपहर तक व्रत रखते है। किंतु व्रत का यह विधान शास्त्रानुमोदित नहीं है। व्रत पूरे आठ पहर का ही होना चाहिए।

इस व्रत को करके हमें मर्यादा पुरुषोत्तम के चरित्र के आदर्शों को अपनाना चाहिए। भगवान् राम की गुरु सेवा, जाति-पाँति का भेदभाव मिटाना, शरणागत की रक्षा, भ्रात प्रेम, मातृ-पितृ भक्ति, एक पत्नीव्रत,

पवनसुत हनुमान् व अंगद की स्वामी भक्ति, गिद्धराज की कर्त्तव्यनिष्ठा तथा गुह केवट आदि के चरित्रों को महानता को अपनाना चाहिए। ऐसा करने से भगवान् श्रीराम सदा मंगल करते हैं।

*

कामदा एकादशी व्रत

(चैत्र शुक्ल एकादशी)

चैत्र शुक्ला एकादशी को कामदा एकादशी कहते हैं। इस दिन भगवान् वासुदेव का पूजन किया जाता है। प्रातःकाल स्नानादि के पश्चात् भगवान् की पूजा अर्चना करें। तदुपरान्त गरीबों तथा ब्राह्मणों को भोजन करायें व दान आदि दें। तत्पश्चात् स्वयं फलाहार करें। इस व्रत में अन्न व नमक नहीं खाया जाता।

कथा– प्राचीन समय में पुण्डरीक नामक एक राजा नागलोक में राज्य करता था। उसका दरबार किन्नरों व गंधर्वों से भरा रहता था। एक दिन गन्धर्व ललित दरबार में गाना कर रहा था कि अचानक उसे अपनी पत्नी की याद आ गई। इससे उसका स्वर, लय एवं ताल बिगड़ने लगे। इस त्रुटि को कर्कट नामक नाग ने जान लिया और यह बात राजा को बता दी। राजा को ललित पर बड़ा क्रोध आया। राजा ने ललित को राक्षस होने का श्राप दे दिया। ललित सहस्रों वर्ष तक राक्षस योनि में अनेक लोकों में घूमता रहा। उसकी पत्नी भी उसी का अनुकरण करती रही।

अपने पति को इस हालत में देखकर वह बड़ी दुःखी होती। एक दिन घूमते-घूमते ललित की पत्नी ललिता विन्ध्य पर्वत पर रहने वाले ऋष्यमूक ऋषि के पास गई और अपने श्रापित पति के उद्धार का उपाय पूछने लगी। ऋषि को उन पर दया आ गई। उन्होंने चैत्र शुक्ल पक्ष की कामदा एकादशी व्रत करने का आदेश दिया। एकादशी व्रत के प्रभाव से इनका श्राप मिट गया और अपने गंधर्व स्वरूप को प्राप्त हो गए।

इस व्रत की कथा को सुनकर हमें ज्ञात होता है कि कभी-कभी छोटी-छोटी भूलों की बहुत बड़ी सजा मिलती है। ऐसे में यदि हम साहस व धैर्य से काम लें तो उन पर विजय पाई जा सकती है।

*

चैत्र पूर्णिमा (हनुमान् जयन्ती)

वैसे तो प्रत्येक मास की पूर्णिमा तिथि पवित्र मानी जाती है। इस दिन स्त्री, पुरुष, बाल, वृद्ध पवित्र नदियों में स्नान कर अपने को पवित्र बनाते हैं। इस दिन घरों में स्त्रियाँ भगवान् लक्ष्मी-नारायण को प्रसन्न करने के लिए व्रत रखती हैं और प्रभु सत्यनारायण की कथा सुनती हैं।

चैत्र की पूर्णिमा को चैती पूनम भी कहा जाता है। इसी दिन भगवान् श्रीकृष्ण ने ब्रज में रास उत्सव रचाया था। जिसे महारास के नाम से जाना जाता है। यह महारास कार्तिक पूर्णिमा से प्रारम्भ होकर चैत्र मास की पूर्णिमा को समाप्त हुआ था।

इस दिन श्रीकृष्ण ने अपनी अनन्त योग शक्ति से अपने असंख्य रूप धारण कर जितनी गोपी उतने ही कान्हा का विराट् रूप धारण कर विषय लोलुपता के देवता कामदेव को योग पराक्रम से आत्माराम और पूर्ण काम स्थिति प्रकट करके विजय प्राप्त की थी। भगवान् श्रीकृष्ण के योगनिष्ठा बल की यह सबसे कठिन परीक्षा थी। जिसे उन्होंने अनासक्त भाव से निस्पृह रहकर योगारूढ पद से रास पंचाध्यायी के श्रीकृष्ण के रास प्रसंग को तात्त्विक दृष्टि से श्रवण और मनन करना चाहिए।

शास्त्रों में एकमत न होने पर चैत्र शुक्ल पूर्णिमा को हनुमान्‌जी का जन्म दिवस मानाया गया जाता है। वैसे वायु-पुराणादिकों के अनुसार कार्तिक की चौदस के दिन हनुमान्‌जी को सजांकर उनकी पूजा-अर्चना एवं आरती करें। भोग लगाकर सबको प्रसाद देना चाहिए।

*

पजूनो-पूनो व्रत (चैत्र पूर्णिमा)

चैत्र पूर्णिमा पजूनो-पूनो भी कहलाती है। इस दिन पजून कुमार का पूजन होता है, व्रत नहीं रखा जाता। पूजन उन्हीं घरों में होता है, जिनके कोई लड़का होता है। जिस घर में लड़कियाँ ही होती हैं, वहाँ पूजन नहीं होता ऐसा विधान है।

इस दिन किसी के यहाँ पाँच और किसी के यहाँ सात मटकियाँ पूजी जाती है। मटकियों में एक करवा भी होता है। करवे समेत ही पांच या सात

की गिनती पूरी की जाती है। मटकियाँ चूने या खड़िया मिट्टी से रंगी जाती है और करवे पर हल्दी से पजूनकुमार और उनकी दोनों माताओं के चित्र बनाये जाते है। शुद्ध स्थान में गोबर से लीप कर चौक पूरा जाता है। बीच में पजूनकुमार का करवा और चारों ओर दूसरी मटकियाँ रखी जाती हैं। चन्दन, अक्षत, धूप, दीप और नैवेद्य से मटकियों की पूजा करके कथा कही जाती है। एक स्त्री कथा कहती है और अन्य सभी स्त्रियाँ हाथ में अक्षत लेकर बैठ जाती हैं। कथा पूरी होने पर वे सब मटकियों पर अक्षत छोड़ती हैं और मटकियों को दण्डवत् प्रणाम करती हैं। इसके बाद लड़का सब मटकियों को हिला-हिलाकर उन्हीं की जगह रख देता है। पजूनकुमार की मटकी में-से लड़का लड्डू पकवान निकालकर माँ की झोली में डालता है। तब माँ लड़के को लड्डू पकवान आदि देती है और फिर घर के सब लोगों को मटकियों का पकवान प्रसाद बाँटा जाता है। प्रसाद के रूप में बाँटते समय कहा जाता है—

पजून के लडुवा पजूने खाय। दौर-दौर वही कोठरी में जाय।।

कथा- प्राचीन समय में वासुकी नामक राजा की दो रानियाँ थीं। एक का नाम सिकौली तथा दूसरी का नाम रूपा था। दोनों ही रानियों के कोई संतान नहीं थी। बड़ी रानी सिकौली, सास-ननद की प्यारी थी, जबकि छोटी रानी रूपा राजा को प्यारी थी।

अपने प्रति सास-ननद का यह व्यवहार देखकर छोटी रानी रूपा का मन बहुत दुखी होता था। परन्तु चूंकि राजा उसका पूरा ध्यान रखते थे और उसे बहुत प्यार करते थे, इसलिए वह किसी प्रकार की चिंता नहीं करती थी। किंतु अन्य स्त्रियों की तरह उसकी भी चाह थी कि उसके भी पुत्र हो और वह भी माँ कहलाए। किंतु बहुत समय गुजर जाने पर भी वह माँ नहीं बनी।

तब एक दिन उसने बड़ी-बूढ़ी स्त्रियों से पुत्रवती होने का उपाय पूछा। इस पर एक वृद्धा ने कहा— संतान तो सास-ननद के आशीर्वाद से प्राप्त होती है। यह सुनकर छोटी रानी ने सोचा कि यह कैसे हो पाएगा, क्योंकि सास-ननद तो उससे नाराज रहती हैं।

जब छोटी रानी ने अपनी समस्या उस वृद्धा को बताई तो उसने एक उपाय बता दिया— तुम ग्वालिन का वेष बनाकर अपनी सास-ननद के पैर छुओ, वे तुम्हें आशीर्वाद देंगी।

रानी रूपा ने वैसा ही किया। उसकी बात मानकर दूसरे दिन ही छोटी रानी ग्वालिन का वेश बनाकर और सिर पर दूध की मटकियाँ रखकर सास-ननद के महल में जा पहुँची। उसने अपने चेहरे पर घूंघट निकाल रखा था। महल में जैसे ही उसने सास-ननद को अपने सामने देखा, वैसे ही सिर से दूध की मटकियाँ उतारी और उनके पावँ छू लिए। इस पर सास-ननद ने उसे पुंत्रवती होने का आशीर्वाद दिया।

आशीर्वाद के प्रभाव से छोटी रानी कुछ ही दिनों में गर्भवती हो गई। यह खबर सुनकर राजा भी खुश हुए। गर्भ रहने से छोटी रानी जितना प्रसन्न थी उससे कहीं ज्यादा छोटी रानी दुःखी थी कि प्रसव के समय उसकी देखभाल कौन करेगा। उसने यह बात राजा को बताई तो राजा ने कहा— तुम किसी प्रकार की चिंता मत करो। मैं तुम्हारे महल में घंटियाँ लगवा देता हूँ। जब तुम्हें कोई कष्ट हो या प्रसव काल नजदीक हो तो तुम डोरी खींच देना। जैसे ही घंटी बजेगी, मैं तुम्हारे पास चला आऊँगा।

कुछ समय बीत जाने पर एक दिन रानी ने राजा की परीक्षा लेने के लिए डोरी खींचकर घंटी बजा दी। घंटी की आवाज सुनकर राजा दरबार छोड़कर छोटी रानी के समक्ष उपस्थित हो गया। किंतु जब उसे यह पता चला कि रानी ने केवल परीक्षा लेने के लिए घंटी बजाई है तो वह नाराज होकर राजदरबार में वापस यह कहता हुआ चला गया— अब मैं प्रसव काल में घंटी बजाने पर भी नहीं आऊँगा। यह सुनकर छोटी रानी को दुःख हुआ। उसने सोचा कि मैंने राजा को व्यर्थ ही परेशान किया।

कुछ दिनों पश्चात् रानी को सचमुच ही प्रसव पीड़ा हुई तो उसने घंटी बजा दी। किंतु इस बार राजा नहीं आया। उसने यही सोचा कि इस बार भी शायद रानी ने यूँ ही घंटी बजाई। तब प्रसव पीड़ा से त्रस्त लाचार होकर वह सास-ननद के पास पहुँची और अपनी समस्या बताई। उन्होंने कहा— जिस समय तेरे पेट में तेज दर्द हो तो तू कोने में मुँह करके ओखली पर बैठ जाना। सब ठीक हो जाएगा तथा तेरा प्रसव सुखपूर्वक हो जाएगा।

सीधी-सादी छोटी रानी उनके छल को न समझ सकी। वह अपने महल में वापस आ गई और सब इन्तजाम करवा लिया। जब प्रसव का समय आया तो उसने वैसा ही किया। बच्चा पैदा होकर ओखली में गिर गया।

उधर सास-ननद भी इसी ताक में थीं तथा बड़ी रानी सिकौली भी उनके साथ मिली हुई थी। वे सभी तुरन्त वहाँ आ गई। सास-ननद ने बच्चे

को निकालकर ओखली में कंकर-पत्थर भरवा दिए तथा एक दासी को बच्चा देकर कहा— इसे घूरे में फेंक आ।

कुछ देर बाद रानी रूपा को होश आया तो उन्होंने कहा— तुमने तो कंकर-पत्थर जन्में हैं। इसी बीच प्रसव का समाचार सुनकर राजा भी वहाँ आ पहुँचा। लेकिन जब पता चला कि रानी ने कंकर-पत्थर जन्मे हैं तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। लेकिन माँ-बहन को वहाँ मौजूद देखकर और उनके द्वारा पुष्टि किए जाने पर वह चुप हो गया। परन्तु उसे यह समझते देर नहीं लगी कि अवश्य ही इन्होंने कोई चालाकी की है।

जिस दिन रूपा ने बच्चे को जन्म दिया था, उस दिन चैत्र शुक्ल पूर्णिमा थी। सौभाग्वश उस दिन जब एक कुम्हारी घूरे पर कूड़ा फेंकने आई तो नवजात बालक को वहाँ पड़े देखा। वह निःसंतान थी, अतः उसे उठाकर अपने घर ले गई।

इस बात का उसने किसी से भी जिक्र नहीं किया, ताकि कहीं बच्चा छिन न जाए। वह बड़े लाड़-प्यार से उसका पालन-पोषण करने लगी। जब बालक थोड़ा बड़ा हुआ तो कुम्हार ने उसके खेलने के लिए मिट्टी का एक घोड़ा बना दिया।

लड़का उस घोड़े को नदी के किनारे ले जाकर उसका मुँह पानी में डुबोकर कहता— मिट्टी के घोड़े पानी पी चें, चें, चें !

उसी घाट पर रनिवास की स्त्रियाँ नहाने के लिए आती थीं। लड़के को रोज-रोज ऐसा कहते देखकर, एक दिन एक स्त्री ने सुनकर उसे फटकारा—ऐ कुम्हार के छोकरे ! तुम्हारा दिमाग खराब है क्या ? क्या तुम पागल हो ? कहीं मिट्टी का घोड़ा भी पानी पीता है?

रानी के कंकर-पत्थर पैदा होने का समाचार सब जगह फैल चुका था। अतः वह लड़का यह जान गया था। इसलिए लड़के ने तुरन्त उत्तर दिया— सिर्फ मैं ही पागल नहीं हूँ, इस संसार में सब ही लोग पागल हैं। यदि रानी के गर्भ से कंकर-पत्थर पैदा हो सकते हैं तो मेरा मिट्टी का घोड़ा भी पानी पी सकता है।

लड़के की बात सुनकर स्त्रियाँ समझ गई कि यह रानी रूपा का ही बेटा है। उन्होंने महल में लौटकर रानी सिकौली को सारा वृत्तांत सुनाया। उन्होंने कहा तुम्हारी सौतन का लड़का तो कुम्हार के घर पल रहा है।

तब यह सुनकर बड़ी रानी ने उसे मरवाने का षड्यंत्र रचा और मैले-कुचैले वस्त्र पहनकर कोप भवन में लेट गई। राजा ने महल में जाकर कारण पूछा तो उसने कहा— कुम्हार का जो लड़का है वह हमारी दासियों को चिढ़ाता है। अतः जब तक वह लड़का मौत के घाट नहीं उतार दिया जाएगा, मैं अन्न-जल ग्रहण नहीं करूँगी।

लेकिन राजा समझदार था। उसने कहा— इस छोटे से अपराध के कारण उसको प्राणदण्ड देना उचित नहीं। फिर भी मैं उसे देश निकाला देकर इस राज्य से निकाल सकता हूँ। रानी मान गई और रानी की इच्छानुसार उस लड़के को राज्य से निकाल दिया गया।

वह दूसरे राज्य में जाकर रहने लगा। थोड़े दिनों बाद वह लड़का वेष बदलकर सुंदर वस्त्र पहनकर राजा वासुकी के दरबार में आने लगा। राजा उसे किसी दरबारी का पुत्र समझता रहा और राजमंत्री उसे राजा का संबंधी। फलतः उसे कभी संदेह की दृष्टि से नहीं देखा गया।

उसके आचरण से सब प्रसन्न तथा सन्तुष्ट थे। वह प्रतिदिन दरबार में बैठकर राजकाज की सारी कार्यवही देखता और हर बात ध्यान में रखता। इस प्रकार दिन गुजरते गए और एक साल बीत गया।

अगले साल उस राजा के राज्य में वर्षा नहीं हुई। पूरा वर्ष बीत गया, राज्य में अकाल पड़ने लगा। राज पण्डितों ने राजा को सलाह दी— यदि राजा-रानी रथ में बैल की तरह कंधा देकर चलें और चैत्र पूर्णिमा को पैदा हुआ कोई द्विज बालक रथ को हांके तो वर्षा होने का योग बन सकता है।

यह सुनकर राजा-रानी रथ में जुतने को तैयार हो गए। जब द्विज बालक की खोज होने लगी, तब कुम्हार के बालक ने बताया- मेरा जन्म चैत्र शुक्ल पूर्णिमा को हुआ है। मेरा जन्म तो क्षत्राणी के गर्भ से हुआ लेकिन पालन-पोषण नीच घर में हुआ है। मैं रथ भी हाँक सकता हूँ।

यह सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुए और रथ चलाने की तैयारियाँ होने लगी। इसी बीच वह बालक रानी रूपा के पास पहुँचा और अपना परिचय देकर बोला— माँ! यदि कोई तुमसे रथ संबन्धी काम करने को कहे तो तुम कह देना कि पहले बड़ी रानी रथ में जुतेगी। इसी भाँति अन्य कामों में भी तुम बड़ी रानी को ही आगे रखना।

रूपा ने उसकी बात मान ली। इधर रथ चलने की तैयारी होने लगी।

रानी रूपा को जगह लीपने के लिए कहा गया। रूपा ने कहा— पहले बड़ी रानी लीपे, फिर मैं लीपूँगी। इस तरह रानी सिकौली के लीपने के बाद रूपा ने भी जगह लीप दी।

इसी प्रकार जब रथ में कँधा देने की बारी आई तो रानी रूपा ने साफ इन्कार कर दिया। उसने कहा— पहले बड़ी रानी कन्धा दे, फिर मै दूँगी। लाचार सिकौली को ही पहल करनी पड़ी और रथ को कंधा देना पड़ा।

रथ को कंधा देते ही तेज धूप निकल आई। बालक रूपी राजकुमार ने पहले से ही मार्ग में गोखरू के कांटे बिखेर दिए थे। रथ आगे बढ़ रहा था। रानी के पैरों में नीचे से कांटे चुभते तथा ऊपर से वह बालक कोड़े बरसाता। बड़ी रानी आगे बढ़ती रही और असहनीय कष्ट झेलती रही। परन्तु इनसे उसे तभी छुटकारा मिला जब रथ निश्चित जगह पर पहुँच गया।

अब रानी रूपा की बारी थी। उसके रथ में कन्धा देते ही आकाश में सावनी घटाएँ छा गईं। रास्ते में गोखरू के काँटे हट गए और उनकी जगह फूल खिल गए। रानी रूपा को जरा भी कष्ट नहीं हुआ। रथ चलाने का काम पूरा होते ही वर्षा होने लगी। यह देखकर पूरे राज्य में खुशी छा गई, लोग फूले न समाए और खुशी से नाचने लगे।

तभी उस बालक ने रानी रूपा के पास जाकर उसके चरण छुए। अब सभी जान गए कि यही रानी रूपा का पुत्र है। राजा ने उसे अपना पुत्र जान गले से लगा लिया। यह समाचार पाकर सब जगह आनन्दोल्लास की लहर दौड़ गई।

अंत में राजकुमार पजून कुमार सबसे मिलने रनिवास में गया। सबसे पहले वह अपनी दादी के पास गया और कहने लगा-दादी! हम आए, क्या तुम्हारे मन भाए?

दादी ने उत्तर दिया— बेटा! नाती-पोते किसे बुरे लगते हैं?

पजून कुमार बोला— तुमने मेरे मन की बात नहीं कही। तुम्हारी बात बेकार और अधूरी है। मैं तुम्हें शाप देता हूँ तुम अगले जन्म में दहलीज हो जाओगी। फिर वह अपनी बुआ के पास जाकर बोला— बुआ री बुआ! हम आए, क्या तुम्हारे मन भाए?

बुआ ने कहा— भतीजे किसे बुरे लगते हैं? परिणामतः पजून कुमार ने बुआ को चौका लगाने वाला मिट्टी का बर्तन हो जाने का शाप दे दिया। फिर वह अपनी सौतेली माँ सिकौली के पास जाकर बोला— माँ ! माँ !

हम आए, क्या तुम्हारे मन भाए?

माता सिकौली ने उत्तर दिया— आए सो अच्छे आए, जेठी के हो या लहूरी के, हो तो लड़के ही। राजकुमार ने कहा— तुमने भी मेरे मन बात नहीं कही। तुमने तो रूखी बात कही है, इसलिए तुम घुँघची बनोगी। घुँघची आधी काली तथा आधी लाल होती है।

अंत में पजून कुमार अपनी सगी माँ रानी रूपा के पास गया और बाला- माँ! माँ! हम आए, तुम्हारे मन भाए या न भाए?

रानी रूपा बोली— बेटा ! आए-आए ! हमने न पाले, न पोसे, न खिलाए, न पिलाए! हम क्या जाने कैसे आए?

यह सुनते ही वह बच्चे की तरह फूट-फूट कर रोने लगा। छोटी रानी ने उसे गोद में उठा लिया। रूपा के दूध उतर आया और मातृ-भाव से विह्वल होकर उसे दूध पिलाने लगी।

यह समाचार जब राजा के पास पहुँचा, तो मारे हर्ष के गद्‌गद् हो गया। यह सब देख वह बहुत प्रसन्न हुआ और पूरे राज्य में उत्सव मनाने का आदेश दिया। गरीबों को दान दिया गया। राज्य में शहनाइयाँ बजने लगी, तोपें अपने आप छूटने लगीं।

कहते हैं उसी दिन से पजून पूनो व्रत उत्सव मनाया जाने लगा।

*

वैशाख मास के व्रत-त्यौहार

शीतलाष्टमी

वैशाख मास कृष्ण पक्ष की अष्टमी को शीतला देवी की पूजा की जाती है। शीतला देवी की पूजा चेचक निकलने के प्रकोप से बचने के लिए की जाती है। ऐसी प्राचीन मान्यता है कि जिस घर की महिलाएँ शुद्ध मन से इस व्रत को करती हैं उस परिवार को शीतला देवी धन-धान्य से पूर्ण एवं प्राकृतिक विपदाओं से दूर रखती हैं।

इस पर्व को बसौड़ा भी कहते हैं। बसौड़ा का अर्थ है बासी भोजन। इस दिन घर में ताजा भोजन नहीं बनाया जाता है। एक दिन पहले ही भोजन बनाकर रख देते हैं। शीतला देवी का पूजन करने के बाद घर के सब व्यक्ति बासी भोजन को खाते हैं। जिस घर में चेचक से कोई बीमार हो उसे यह व्रत नहीं करना चाहिए।

*

बरूथिनी एकादशी
(वैशाख कृष्ण एकादशी)

यह पुण्यदायिनी, सौभाग्य प्रदायिनी एकादशी वैशाख बदी एकादशी को पड़ती है। इस दिन भक्ति-भाव से भगवान् मधुसूदन की पूजा करनी चाहिए। बरूथिनी एकादशी का व्रत करने से भगवान् मधुसूदन की प्रसन्नता प्राप्त होती है। भगवान् की प्रसन्नता से सम्पूर्ण पापों का नाश होता है और सुख-सौभाग्य की वृद्धि होती है तथा भगवान् का चरणामृत ग्रहण करने से आत्म शुद्धि होती है।

कथा– प्राचीन समय में नर्मदा नदी के तट पर मान्धाता नाम का राजा राज्य करता था। वह अत्यन्त दानशील तथा तपस्वी था। एक दिन जब वह तपस्या कर रहा था, उसी उसमय जंगली भालू ने आकर राजा का पैर चबा डाला और फिर उसे घसीटता हुआ वन में ले गया। राजा ने करुण भाव से भगवान् विष्णु को पुकारा। भक्तवत्सल भगवान् ने प्रकट होकर भालू से राजा के प्राण बचाये। राजा का पैर भालू खा चुका था इससे वह बहुत ही शोकाकुल हुआ।

भगवान् बोले— वत्स! शोक मत करो। यह तुम्हारे पूर्व जन्म के कर्मों के कारण तुम्हें कष्ट भोगने पड़े हैं। अब तुम बरूथनी एकादशी को मथुरा में जाकर मेरे बाराह अवतार की मूर्ति की पूजा और व्रत करो। उसके प्रभाव से तुम पुनः सुदृढ़ अंगों वाले हो ज़ाओगे। भगवान् की आज्ञा मान राजा ने श्रद्धापूर्वक इस व्रत को किया और प्रभु की कृपा से पुनः सुन्दर अंगों वाला हो गया।

*

अक्षय तृतीया अर्थात् अखतीज
(वैशाख शुक्ल तृतीया)

यह दिन बहुत पवित्र माना गया है। इस दिन होम, जप, तप, दान, स्नान आदि से प्राप्त होने वाले पुण्य अक्षय रहते हैं। इसी कारण इस तिथि का नाम अक्षय तृतीया पड़ा। इसी दिन भगवान् परशुराम का जन्म हुआ था। अतः इसे परशुराम तीज भी कहते हैं। इस दिन गंगा-स्नान का भारी माहात्म्य है। जो मनुष्य इस दिन गंगा में स्नान करता है, वह निश्चय ही सारे पापों से मुक्त हो जाता है। इस दिन प्रातः काल घड़ा, पंखा, चावल, दाल, नमक, घी, चीनी, साग, इमली, फल, वस्त्र और दक्षिणा ब्राह्मणों को देनी चाहिए।

इसी दिन श्री बद्री नारायणजी का चित्र सिंहासन पर रख कर मिश्री और भीगीं हुई चने की दाल का भोग लगावें। तुलसी दल चढ़ावे और भगवान् की श्रद्धा व भक्तिपूर्वक पूजा करके आरती करें। अक्षय तृतीया के सम्बन्ध में नीचे लिखी कथा प्रचलित है—

कथा– एक बार महाराज युधिष्ठिर ने श्रीकृष्णचन्द्र से पूछा– हे भगवान्! कृपा करके अक्षय तृतीया का माहात्म्य वर्णन करें। इसे सुनने की मेरी बड़ी प्रबल इच्छा है।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले— हे राजन् ! सुनो। यह परम पुण्यमयी तिथि है। इस दिन दोपहर से पहले स्नान, जप, तप, होम, स्वाध्याय, पितृतर्पण और दानादि करने वाला महाभाग अक्षय पुण्य फल का भागी होता है। इसी दिन से सत्ययुग का भी आरम्भ होता है, इसलिए यह युगादि तृतीया के नाम से भी प्रसिद्ध है। हे युधिष्ठिर! प्राचीनकाल में एक बहुत निर्धन, सदाचारी और देव-ब्राह्मणों में श्रद्धा रखने वाला वैश्य था। कुटुम्ब-परिवार बहुत बड़ा था, जिसके कारण वह सदैव व्याकुल रहता था। उसने किसी से वैशाख शुक्ल तृतीया के माहात्म्य में सुना कि इस दिन किये हुए दान, जप, हवन आदि से अक्षय पुण्य प्राप्त होता है। उसने अक्षय तृतीया के दिन प्रातःकाल गंगाजी के पावन जल में स्नान करके विधिपूर्वक देवताओं और पितरों का पूजन किया। फिर उसने गोले के लड्डू, पंखा, जल से भरे घड़े, जौ, गेहूँ, नमक, सत्तू, दही, चावल, गुड़, स्वर्ण, वस्त्र आदि दिव्य वस्तुओं का भक्तिपूर्वक दान किया। स्त्री के बार-बार मना करने तथा कुटुम्बीजनों से चिन्तित और बुढ़ापे के कारण अनेक रोगों से पीड़ित होने

पर भी वह अपने धर्म-कर्म से विमुख नहीं हुआ। यह सब अक्षय तृतीया का ही पुण्य-प्रभाव है।

मोहिनी एकादशी

वैशाख शुक्ल एकादशी

यह व्रत भी कृष्ण पक्ष की एकादशी की भाँति ही किया जाता है। इस व्रत को करने से निंदित कर्मों के पाप से छुटकारा मिल जाता है तथा मोह बन्धन एवं पाप समूह नष्ट होते हैं।

सीताजी की खोज करते समय भगवान् श्री रामचन्द्रजी ने भी इस व्रत को किया था। उनके बाद मुनि कौण्डिन्य के कहने पर धृष्टबुद्धि ने और श्रीकृष्ण के कहने पर युधिष्ठिर ने इस व्रत को किया था।

इस दिन भगवान् राम पुरुषोत्तम रूप की पूजा का विधान है। इस दिन भगवान् की प्रतिमा को स्नानादि से शुद्ध कर उत्तम वस्त्र पहनाना चाहिए, फिर उच्चासन पर बैठाकर धूप, दीप से आरती उतारनी चाहिए और मीठे फलों का भोग लगाना चाहिए। तथा ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा देनी चाहिए। रात्रि में भगवान् का कीर्तन करते हुए मूर्ति के समीप ही शयन करना चाहिए।

कथा– एक राजा का बड़ा पुत्र बहुत दुराचारी था। उसके दुर्गुणों से दु:खी होकर राजा ने उसे घर से निकाल दिया। वह वन में रहकर लूटमार करता और जानवरों को मारकर खाता था। एक दिन वह एक ऋषि के आश्रम में पहुँचा। आश्रम के पवित्र वातावरण से उसका हृदय पाप कर्मों से विरत हो गया। ऋषि ने उसको पिछले पाप कर्मों से छुटकारा पाने के लिए मोहिनी एकादशी का व्रत विधिपूर्वक करने को कहा। उसने ऋषि के आदेशानुसार व्रत किया। व्रत के प्रभाव से उसकी बुद्धि निर्मल हो गई और उसके सब पाप कर्म नष्ट हो गए।

नृसिंह जयन्ती

भक्त प्रह्लाद की मान-मर्यादा की रक्षा हेतु वैशाख शुक्ल चतुर्दशी के दिन भगवान् नृसिंह के रूप में प्रकट हुए थे। इसलिए यह तिथि एक पर्व के रूप में मनायी जाती है।

व्रत विधान- इस व्रत को प्रत्येक नर-नारी कर सकते हैं। व्रती को दोपहर में वैदिक मंत्रों का उच्चारण करके स्नान करना चाहिए। नृसिंह भगवान् की मूर्ति को गंगाजल से स्नान कराकर मंडप में स्थापित करके विधिपूर्वक पूजन करने का विधान है। ब्राह्मणों को यथा शक्ति दान-दक्षिणा, वस्त्र आदि देकर भोजन कराना चाहिए। इस विधि से व्रत करके उसका पारण करने वाला व्यक्ति लौकिक दुःखों से मुक्त हो जाता है।

कथा- राजा कश्यप के हिरण्याक्ष और हिरण्यकश्यपु नाम के दो पुत्र थे। राजा के मरने क बाद बड़ा पुत्र हिरण्याक्ष राजा बना। परन्तु हिरण्याक्ष बड़ा क्रूर राजा निकला। वाराह भगवान् ने उसे मौत के घाट उतार दिया। इसी का बदला लेने के लिए उसके भाई हिरण्यकश्यपु ने भगवान् शंकर को प्रसन्न करने के लिए कठोर तप किया। तप-सिद्धि होने पर उसने भगवान् शिव से वर माँगा- मैं न अन्दर मरूँ न बाहर, न दिन में मरूँ न रात में। न भूमि पर मरूँ न आकाश में, न जल में मरूँ, न अस्त्र से मरूँ न शस्त्र से, न मनुष्य के हाथों मरूँ न पशु द्वारा मरूँ। भगवान् शिव तथास्तु कहकर अन्तर्ध्यान हो गए।

यह वरदान पाकर वह अपने को अजर अमर समझने लगा उसने अपने को ही भगवान् घोषित कर दिया।

उसके अत्याचार इतने बढ़ गए कि चारों ओर त्राहिमाम् त्राहिमाम् मच गया। इसी समय उसके यहाँ एक बालक का जन्म हुआ। जिसका नाम प्रह्लाद रखा गया। प्रह्लाद के बड़ा होने पर एक ऐसी घटना घटी की प्रह्लाद ने अपने पिता को भगवान् मानने से इंकार कर दिया। घटना यह थी कि कुम्हार के आवे में एक बिल्ली ने बच्चे दिए थे। आवे में आग लगाने पर भी बिल्ली के बच्चे जीवित निकल आए। प्रह्लाद के मन में भगवान् के प्रति निष्ठा बढ़ गई।

हिरण्यकशिपु ने अपने बेटे को बहुत समझाया कि मैं ही भगवान् हूँ। परन्तु वह इस बात को मानने को तैयार नहीं हुआ। हिरण्यकशिपु ने उसे मारने के लिए एक खम्भे से बाँध दिया और तलवार से वार किया। खम्भा फाड़कर भयंकर शब्द करते हुए भगवान् नृसिंह प्रकट हुए। भगवान् का आधा शरीर पुरुष का तथा आधा शरीर सिंह का था। उन्होंने हिरण्यकशिपु

को उठाकर अपने घुटनों पर रखा और दरवाजे की चौखट पर ले जाकर गोधुलि बेला में अपने नाखूनों से उसका पेट फाड़ डाला। ऐसे विचित्र भगवान् का लोकमंगल के लिए स्मरण करके ही इस दिन व्रत करने का माहात्म्य है।

*

आसमाई की पूजा

वैशाख, आषाढ़ और माघ इन तीन महीनों में किसी भी रविवार के दिन आस माई की पूजा की जाती है। किसी-किसी कुल में यह पूजा वर्ष में दो या तीन बार भी होती है। प्रायः लड़के की माँ यह व्रत करती हैं। उस दिन वह बगैर नमक का भोजन करती है। एक पान पर सफेद चन्दन से एक पुतली का चित्र बनाया जाता है। उसी पर चार कौड़ियाँ रखकर उसकी पूजा की जाती है। चौक पूर कर उसी पर कलश स्थापित किया जाता है। उसी के पास एक चौकी पर आस माई की स्थापना की जाती है। पण्डित पंचांग-पूजन कराकर कलश और आस माई का विधिपूर्वक पूजन कराते हैं। पूजन के बाद पण्डित बारह गाँठ वाला एक गंडा व्रत करने वाले को देते हैं। उसी गंडे को हाथ में पहनकर आस माई को भोग लगाया जाता है। इस पूजन के सम्बन्ध में नीचे लिखी कथा कही जाती है—

कथा– राजा का इकलौता राजकुमार था। वह माँ-बाप का बहुत लाड़ला था। इसलिए वह बहुत ऊधम मचाता था। राजा ने उसे बहुत समझाया, परन्तु उसकी शैतानियाँ कम नही हुईं। अंत में दुःखी होकर राजा ने उसे देश निकाला दे दिया।

राजकुमार अपने घोड़े पर बैठ दूसरे देश को चला जा रहा था कि वन में कुछ दूरी पर उसे चार बूढ़ी स्त्रियाँ रास्ते में बैठी दिखाई दीं। तभी अचानक राजकुमार का चाबुक गिर गया। उसें उठाने के लिए घोड़े से उतरा और फिर सवार होकर आगे बढ़ा। वृद्धाओं ने समझा कि इस यात्री ने घोड़े से उतर कर हमें प्रणाम किया है। अतः जब वह उनके पास पहुँचा तब उन्होंने उससे पूछा कि उसने घोड़े से उतर कर उनमें किसको प्रणाम किया था। राजकुमार ने उत्तर दिया कि तुम में से जो सबसे बड़ी हैं, मैंने उसी को प्रणाम किया था। उन्होंने बताया कि यह उत्तर तो ठीक नहीं है, क्योंकि हम सब समान अवस्था वाली हैं। अपनी-अपनी जगह सब बड़ी

हैं। तुम्हें किसी एक को बताना चाहिए। तब राजकुमार ने उनके अलग-अलग नाम पूछे।

एक बुढ़िया ने कहा— मेरा नाम भूख माई है। दूसरी बोली— मेरा नाम प्यास माई है। तीसरी ने कहा— मुझे नींद माई कहते है। चौथी बुढ़िया ने कहा— मेरा नाम आस माई है। राजकुमार बोला— जिस प्रकार ये तीनों भूख, प्यास और नींद मनुष्य को व्याकुल कर देने वाली है। वैसे ही तुम उसकी बैचेनी को नष्ट कर उसे शान्ति देने वाली हो, अतएव मैंने तुम्हें ही प्रणाम किया है।

राजकुमार की यह बात सुनकर आस माई बहुत प्रसन्न हुई और उस राजकुमार को चार कौड़ियाँ देकर आशीर्वाद दिया कि जब तक ये कौड़ियाँ तुम्हारे पास रहेंगी तब तक कोई भी तुमसे युद्ध में या जुए आदि में न जीत सकेगा। जो भी काम की तुम इच्छा करोगे वह अवश्य ही तुम्हें प्राप्त होगा। आस माई का आशीर्वाद शिरोधार्य कर राजकुमार वहाँ से चल दिया।

घूमते-घूमते राजकुमार कुछ दिनों बाद एक राजा की राजधानी में पहुँचा। उस राजा को जुआ खेलने का भारी शौक था। राजा ने राजकुमार के साथ जुआ खेलने की इच्छा प्रकट की। दोनों जुआ खेलने बैठ गये। राजकुमार ने थोड़ी ही देर में राजा की धन-दौलत और राज-पाट सब कुछ जीत लिया। राजा हार गया। उसने अपने मन्त्रियों-मित्रों को इकट्ठा करके सलाह ली कि अब क्या करना चाहिए। किसी ने राजकुमार को मार डालने की सलाह दी, तो किसी ने उसे राज्य का एक अंश देकर राजी कर लेने को कहा। राजा के पिता के समय के एक बूढ़े मंत्री ने कहा कि विजयी यात्री के साथ अपनी राजकुमारी का विवाह कर दीजिए। यह आपका ही लड़का हो जाएगा।

राजा की समझ में बूढ़े मंत्री की बात आ गई और उसने राजकुमार के साथ अपनी बेटी का विवाह कर दिया। विवाह हो जाने पर राजकुमारी और राजकुमार अलग महल में आनन्दपूर्वक रहने लगे। राजकन्या सदाचारिणी और विनयशीला थी। उस घर में उसकी साँस-ननद तो थी नहीं, जिनकी आज्ञा का वह पालन करती। इसलिए उसने कपड़े की गुड़ियाएँ बना कर रख लीं। वह उनको सास-ननद मानकर उनके चरण छूती और आँचल पसार कर उनका आशीर्वाद लेती।

एक दिन राजकुमार ने उसे गुड़ियों के पावँ छूते देख लिया, तो उसने उससे पूछा कि यह तुम क्या करती हो। राजकुमारी ने बताया कि मैं स्त्री

धर्म का पालन कर रही हूँ। यदि मैं आपके घर में होती तो नित्यप्रति सास-ननद आदि के चरण छूती और उनसे आशीर्वाद प्राप्त क़रती। किन्तु यहाँ सास-ननद कोई नहीं है, इसलिए मैं इन्हें ही सास-ननद मानकर अपना धर्म पालन करती हूँ। यह सुनकर राजकुमार ने कहा कि यदि ऐसी ही बात है तो गुड़ियों के चरण छूने की क्या आवश्यकता है? हमारे परिवार में तो सभी हैं। तुम्हारी इच्छा हो तो मेरे घर चलो। राजकुमारी तैयार हो गई। राजा के पास यह समाचार पहुँचा तो उसने उनकी यात्रा का सब प्रबन्ध ठीक करके बेटी को विदा कर दिया। राजकुमार नई बहू को लेकर कुछ दिनों में अपनी सेना सहित अपने पिता की राजधानी के निकट जा पहुँचा। राजकुमार के वियोग में राजा और रानी रोते-रोते अन्धे हो गए थे। तभी राजकुमार ने महल के द्वार पर आकर राजा को अपने आने की सूचना दी। यह समाचार पाकर राजा-रानी बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने परम्परा अनुसार पहले अपनी बहू को महल में प्रवेश कराया। महल में पहुँच कर बहू ने सास के चरण हुए। सास ने आशीर्वाद दिया। कुछ दिनों बाद बहू के गर्भ से एक अत्यन्त सुन्दर बालक ने जन्म लिया। इसी बीच राजा-रानी की दृष्टि भी ठीक हो गई। जिस घर में अंधकार छाया था, उसमें आस माई की कृपा से आनन्द छा गया। तभी से संसार में आस माई की पूजा हो रही है।

*

धर्मराज व्रत, सत्यविनायक पूर्णिमा एवं बुद्ध पूर्णिमा (वैशाख पूर्णिमा)

यह व्रत वैशाख की पूर्णिमा को किया जाता है। इस दिन धर्मराज की पूजा करने का विधान है। इस दिन जल से भरा नया घड़ा दान करने से स्वर्ण कलश दान के समान फल मिलता है। इस व्रत से धर्मराज की प्रसन्नता प्राप्त होती है। और अकाल मृत्यु का भय नहीं कहता। श्रीकृष्ण ने अपने मित्र सुदामा को इसी सत्य विनायक व्रत को करने का विधान बताया था, जिसके प्रभाव से सुदामा की दरिद्रता दूर होकर वह अत्यन्त वैभवशाली हो गये थे।

वैशाख की पूर्णिमा को ही भगवान् विष्णु का तेइसवाँ अवतार

भगवान् बुद्ध के रूप में हुआ था। भगवान् बुद्ध ने लोगों को सत्य और अहिंसा का मार्ग दिखाया था। वैशाख की पूर्णिमा को ही बुद्ध का निर्वाण हुआ था। भगवान् बुद्ध के अनुयायी इस दिवस को बहुत धूम-धाम से मनाते हैं।

*

ज्येष्ठ मास के व्रत एवं त्यौहार

अचला एकादशी

ज्येष्ठ मास में कृष्ण पक्ष की एकादशी को अचला एकादशी कहते हैं। इसे अपरा एकादशी भी कहते हैं।

इस व्रत के करने से ब्रह्महत्या, परनिन्दा, भूत योनि जैसे निकृष्ट कर्मों से छुटकारा मिल जाता है तथा कीर्ति, पुण्य एवं धन-धान्य में अभिवृद्धि होती है।

कथा– प्राचीन काल में महीध्वज नामक धर्मात्मा राजा राज्य करता था। विधि की विडम्बना देखिये कि उसी का छोटा भाई वज्रध्वज बड़ा ही क्रूर, अधर्मी तथा अन्यायी था। वह अपने बड़े भाई को अपना वैरी समझता था। उसने एक दिन अवसर पाकर अपने बड़े भाई राजा महीध्वज की हत्या कर दी और उसके मृत शरीर को जंगल में पीपल के वृक्ष के नीचे गाढ़ दिया।

राजा की आत्मा पीपल पर वास करने लगी और आने जाने वालों को सताने लगी। अकस्मात् एक दिन धौम्य ऋषि उधर से निकले। उन्होंने तपोबल से प्रेत के उत्पात का कारण तथा उसके जीवन वृतांत को समझ लिया। ऋषि महोदय ने प्रसन्न होकर प्रेत को पीपल के वृक्ष से उताकर परलोक विद्या का उपदेश दिया। अंत में ऋषि से प्रेत योनि से मुक्ति पाने के लिए अचला एकादशी व्रत करने को कहा। अचला एकादशी व्रत करने से राजा दिव्य शरीर धारण कर स्वर्गलोक को चला गया।

*

वट सावित्री व्रत या बड़-मावस

(ज्येष्ठ अमावस्या)

यह सौभाग्यवती स्त्रियों का प्रमुख पर्व है। इस दिन वट वृक्ष की पूजा

की जाती है। स्त्रियाँ बड़े सबेरे स्नान करती हैं और केशों को धोती हैं। जल, मौली, रोली, चावल, गुड़,भीगें चने,धूप-दीप से वट् वृक्ष की पूजा की जाती है और उसके चारों ओर कच्चे सूत का धागा लपेटा जाता है। भीगें हुए चनों का वायना निकाला जाता है। कहीं-कहीं पर यह त्यौहार ज्येष्ठ कृष्ण त्रयोदशी से अमावस्या तक मनाया जाता है। यह व्रत स्त्रियों द्वारा अखण्ड सौभाग्यवती रहने की कामना से किया जाता है।

सुहागिन नारियाँ नहा धोकर पूर्ण शृंगार करके और सुन्दर वस्त्राभूषण पहनकर प्रायः सामूहिक रूप से पूजा करने जाती हैं। वट वृक्ष के तने पर जल चढ़ाकर रोली के छींटे लगाए जाते हैं। और पूजन के लिए लाई गई सभी सामग्री चढ़ा दी जाती है। घी का दीपक जलाकर कच्चे सूत के धागे को हल्दी से रंगकर वृक्ष के तने पर लपेटते हुए वृक्ष की सात परिक्रमाएँ की जाती हैं। यदि आपके आस-पास बड़ का कोई पेड़ न हो तब भी निराश न हों, कहीं से एक टहनी मँगा लें अथवा दीवार पर वट वृक्ष को अंकित करके पूजा कर लें। पूजा-आराधना में मुख्य महत्त्व भावना, श्रद्धा विश्वास और आस्था का है। अतः आप दीवार पर बड़ के पेड़ का अंकन करें अथवा वास्तविक वट वृक्ष का पूजन, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। इस अवसर पर सत्यवान-सावित्री की यह कहानी कही और सुनी जाती है-

कथा– बहुत समय पूर्व मद्रदेश में अवश्पति नामक एक परम ज्ञानी राजा थे। उन्होंने संतान प्राप्ति के लिए पण्डितों की सम्मति से भगवती सावित्री की आराधना की। इस पूजा से उनके यहाँ एक पुत्री का जन्म हुआ। उन्होंने इसका नाम सावित्री रखा।

सावित्री सर्वगुण सम्पन्न थी। जब वह विवाह योग्य हुई तब राजा ने उसे स्वयं अपना वर चुनने को कहा। एक दिन महर्षि नारद राजा अवश्पति के घर आये हुए थे। तभी सावित्री भी अपने लिए वर चुनकर लौटी उसने आदरपूर्वक नारदजी को प्रणाम किया। नारदजी के पूछने पर सावित्री ने बताया कि महाराज, राज्यच्युत राजा द्युमत्सेन के आज्ञाकारी पुत्र सत्यवान को मैंने अपना पति बनाने का निश्चय किया है।

तीनों लोको में भ्रमण करने वाले नारदजी ने उसके भूत, वर्तमान और भविष्य को देखकर राजा से कहा— राजन्! तुम्हारी कन्या ने वर खोजने में निःसन्देह भारी परिश्रम किया है। सत्यावन गुणवान और धर्मात्मा है। वह सावित्री के लिए सब प्रकार से योग्य है परन्तु उसमें एक भारी दोष

है। वह अल्पायु है और एक वर्ष के पश्चात् वह मृत्यु को प्राप्त होगा।

नारदजी के वचन सुनकर राजा ने पुत्री को कोई अन्य वर खोजने की सलाह दी। परन्तु सावित्री ने दृढ़तापूर्वक कहा कि जिसे मैंने एक बार मन से पति स्वीकार कर लिया है, वह अब चाहे जैसा भी है, वही मेरा पति होगा।

सावित्री के ऐसे दृढ़ वचन सुनकर राजा अश्वपति ने उसका विवाह सत्यवान के साथ कर दिया। सावित्री अपने पति और अन्धे सास-ससुर की सेवा करती हुई सुखपूर्वक वन में रहने लगी।

नारदजी के कथनानुसार— जब उसके पति के जीवन के तीन दिन बचे, तभी से वह उपवास करने लगी। तीसरे दिन उसने पितरों का पूजन किया। तत्पश्चात् वह सत्यवान के साथ वन में जाने को उद्यत हुई। इसके लिए उसने सास-ससुर से आज्ञा प्राप्त कर ली। सत्यवान लकड़ी काटने के लिए एक वृक्ष पर चढ़ा, परन्तु शीघ्र ही सिर में पीड़ा होने के कारण नीचे उतर आया और सावित्री की गोद में सिर रखकर लेट गया। तभी सावित्री ने यमराज और उसके दूतों को सत्यवान का जीव निकालकर ले जाते हुए देखा। यह देख वह भी उनके पीछे-पीछे चल पड़ी। यमराज ने उसे समझाकर वापस लौट जाने के लिए कहा। प्रत्युत्तर में सावित्री ने कहा— धर्मराज, पति के पीछे जाना ही स्त्री का धर्म है। पतिव्रत के प्रभाव और आपकी कृपा से कोई मेरी गति नहीं रोक सकता।

सावित्री के धर्मयुक्त वचनों से प्रसन्न होकर यमराज ने उसे वर माँगने को कहा। सावित्री ने अपने सास-ससुर को दिखाई देने का वरदान माँगा। वर प्राप्त करके भी सावित्री ने अपने पति का साथ न छोड़ा। यमराज ने दूसरी वार वर माँगने को कहा। सावित्री ने अपने ससुर के खोए हुए राज्य की प्राप्ति का वरदान माँगा।

वर देने के बाद यमराज ने पुनः सावित्री को वापस लौट जाने का आग्रह किया, किन्तु सावित्री अपने प्रण पर अडिग रही। तब यमराज ने उससे अंतिम वर माँगने के लिए कहा। सावित्री ने सत्यवान से सौ पुत्र प्राप्त होने का वरदान माँगा। सावित्री की पतिभक्ति और युक्तिपूर्ण वचनों के बंधन में बंधे यमराज ने सत्यवान के जीव को पाश से मुक्त कर दिया।

सावित्री को वर देकर यमराज अंतर्ध्यान हो गये और वह लौटकर वट वृक्ष के नीचे आई। सत्यवान के मृत शरीर में पुनः जीवन का संचार हो

गया था। इस प्रकार सावित्री ने अपने पतिव्रत धर्म का पालन करके अपने ससुर कुल एवं पितृकुल दोनों का कल्याण कर दिया। *

गंगा दशहरा

गंगा दशहरा का पर्व ज्येष्ठ मास की शुक्ल पक्ष की दशमी को मनाया जाता है। ज्येष्ठ शुक्ल दशमी को सोमवार को हस्त-नक्षत्र में गंगावतरण हुआ था। इसलिए यह तिथि अधिक महत्त्वपूर्ण है। इस तिथि में स्नान, दान, तर्पण से दस पापों का नाश होता है। इसलिए इसे दशहरा कहते है।

इस दिन गंगा में स्नान का विशेष महत्त्व है। गंगा स्नान से व्यक्ति के सारे पापों का नाश हो जाता है। यह जल वर्षभर रखने पर भी सड़ता नहीं है।

कथा– प्राचीन काल में अयोध्या में सगर नाम के राजा राज्य करते थे। उनके केशिनी तथा सुमति नामक दो रानियाँ थीं। केशिनी से अंशुमान नामक पुत्र हुआ तथा सुमति के साठ हजार पुत्र थे। एक बार राजा सगर ने अश्वमेघ यज्ञ किया। यज्ञ की पूर्ति के लिए एक घोड़ा छोड़ा। इन्द्र यज्ञ को भंग करने हेतु घोड़े को चुराकर कपिल मुनि के आश्रम में बाँध आये। राजा ने यज्ञ के घोड़े को खोजने के लिए अपने साठ हजार पुत्रों को भेजा। घोड़े को खोजते-खोजते वे कपिल मुनि के आश्रम में पहुँचे तो उन्होंने यज्ञ के घोड़े का वहाँ बँधा पाया। उस समय चोर-चोर कहकर पुकारना शुरू कर दिया। कपिल मुनि की समाधि टूट गई। तथा राजा के सारे पुत्र कपिल मुनि की क्रोधाग्नि में जलकर भस्म हो गये।

अंशुमान पिता की आज्ञा पाकर अपने भाइयों को खोजता हुआ जब मुनि के आश्रम में पहुँचा तो महात्मा गरुड़ ने उसके भाइयों के भस्म होने का सारा वृतान्त कह सुनाया। गरुड़ जी ने अंशुमान को यह भी बताया कि यदि इनकी मुक्ति चाहते हो तो गंगा जी को स्वर्ग से धरती पर लाना होगा। इस समय अश्व को ले जाकर अपने पिता के यज्ञ को पूर्ण कराओ। इसके बाद गंगा को पृथ्वी पर लाने का कार्य करना। अंशुमान ने घोड़े सहित यज्ञमंडप में पहुँचकर राजा सगर से सब वृतान्त कह सुनाया।

महाराज़ सगर की मृत्यु के पश्चात् अंशुमान ने गंगाजी को पृथ्वी पर लाने के लिए तप किया परन्तु वह असफल रहे। इसके बाद उनके पुत्र दिलीप ने भी तपस्या की परन्तु वह भी असफल रहे।

अन्त में दिलीप के पुत्र भगीरथ ने गंगाजी को पृथ्वी पर लाने के लिए

गोकर्ण तीर्थ में जाकर कठोर तपस्या की। तपस्या करते-करते कई वर्ष बीत गये, तब ब्रह्माजी प्रसन्न हुए तथा गंगाजी को पृथ्वी लोक पर ले जाने का वरदान दिया। अब समस्या यह थी कि ब्रह्माजी के कमण्डल से छूटने के बाद गंगा के वेग को पृथ्वी पर कौन सँभालेगा। ब्रह्माजी ने बताया कि भूलोक में भगवान् शंकर के अतिरिक्त किसी में यह शक्ति नहीं है जो गंगा के वेग को सँभाल सके। इसलिए उचित यह है कि गंगा का वेग सँभालने के लिए भगवान् शिव से अनुग्रह किया जाये। महाराज भगीरथ एक अंगूठे पर खड़े होकर भगवान् शंकर की आराधना करने लगे। उनकी कठोर तपस्या से प्रसन्न होकर शिवजी गंगा को अपनी जटाओं में सँभालने के लिए तैयार हो गये। गंगाजी जब देवलोक से पृथ्वी की ओर बढ़ी तो शिवजी ने गंगाजी की धारा को अपनी जटाओं में समेट लिया। कई वर्षों तक गंगाजी को जटाओं से बाहर निकालने का पथ न मिल सका।

भगीरथ के पुनः अनुनय-विनय करने पर शिवाजी गंगा को अपनी जटाओं से मुक्त करने के लिए तैयार हुए। इस प्रकार शिव की जटाओं से छूट कर गंगाजी हिमालय की घाटियों में कलकल निनाद करके मैदान की ओर बढ़ी। जिस रास्ते से गंगाजी जा रही थी उसी मार्ग में ऋषि जन्हु का आश्रम था। तपस्या में विघ्न समझकर वे गंगा जी को पी गये। भगीरथ के प्रार्थना करने पर उन्हें पुनः जाँघ से निकाल दिया। तभी से गंगा जन्हु पुत्री या जाह्नवी कहलाई। इस प्रकार अनेक स्थलों को पार करती हुई जाह्नवी ने कपिल मुनि के आश्रम में पहुँचकर सगर के साठ हजार पुत्रों के भस्म अवशेषों को तारकर मुक्त किया। उसी समय ब्रह्माजी ने प्रकट होकर भगीरथ के कठिन तप तथा सगर के साठ हजार पुत्रों के अमर होने का वर दिया तथा घोषित किया कि तुम्हारे नाम पर गंगाजी का नाम भागीरथी होगा। अब तुम जाकर अयोध्या का राज सँभालो। ऐसा कहकर ब्रह्माजी अन्तर्ध्यान हो गये।

*

अपरा अर्थात् निर्जला एकादशी

वर्ष में चौबीस एकादशियाँ आती हैं किन्तु इन सबमें ज्येष्ठ शुक्ल एकादशी सबसे बढ़कर फल देने वाली है। इस एकादशी का व्रत रखने से

ही वर्षभर की एकादशियों के व्रत का फल प्राप्त होता है। इस एकादशी में सूर्योदय से द्वादशी के सूर्यास्त तक जल भी न ग्रहण करने का विधान होने के कारण इसे निर्जला एकादशी भी कहते हैं। यह व्रत अत्यन्त संयम-साध्य है। ज्येष्ठ मास में दिन बहुत बड़े होते है और प्यास भी अधिक लगती है। ऐसी दशा में इतना कठिन व्रत रखना सचमुच बड़ी साधना का काम है।

इस एकादशी के दिन अपनी शक्ति और सामर्थ्यानुसार ब्राह्मणों को अनाज, वस्त्र, छतरी, फल, जल से भरे कलश और दक्षिणा देने का विधान है। सभी व्यक्ति प्रायः मिट्टी के घड़े अथवा सुराहियों और अनाज का दान करते ही हैं, अनेक व्यक्ति आज के दिन मीठे शर्बत की प्याऊ भी लगवाते हैं। इस एकादशी की महिमा का वर्णन स्वयं व्यासजी ने इन शब्दों में किया है—

कथा– एक समय भीमसेन ने व्यासजी से कहा कि हे पितामह! युधिष्ठिर, अर्जुन, नकुल, सहदेव, कुन्ती और द्रौपदी सभी एकादशी के दिन भोजन नहीं करते हैं और मुझसे भी यही कहा करते हैं कि हे भीमसेन! एकादशी के दिन भोजन न किया करो। मैं उनसे यही कहता हूँ कि मैं भूख सहन नहीं कर सकता। मैं विधिपूर्वक दान दे दूँगा और भगवान् वासुदेव की पूजा करके उन्हें प्रसन्न कर लूँगा। किन्तु व्रत किये बिना मुझे एकादशी के व्रत का फल किस प्रकार प्राप्त हो, ऐसा कोई उपाय बताइए।

व्यासजी बोले— हे वृकोदर! यदि तुम्हें स्वर्ग प्रिय है और तुम नरक में नहीं जाना चाहते तो दोनो पक्षों की एकादशियों में तुम्हें भोजन नहीं करना चाहिए।

भीमसेन ने कहा— पितामह! एक समय के भोजन से भी तो मेरा निर्वाह नहीं होता। मेरे पेट में वृक् नाम की अग्नि सदैव जलती रहती है। बहुत मात्रा में भोजन करने पर ही मेरी भूख शान्त होती है। हे मुनिराज! मुझे कोई ऐसा व्रत बतलाइए। जिसके करने से मेरा कल्याण हो। उसे मैं अवश्य ही विधिपूर्वक करूँगा।

व्यासजी ने कहा— ज्येष्ठ शुक्ल एकादशी को निर्जल व्रत किया करो। स्नान आचमन में जल ग्रहण करने का कोई दोष नहीं है। एक माशा सोने की मणि जितने जल में डूब जाए ऐसा आचमन शरीर को शुद्ध करने वाला कहा गया है। अन्न बिलकुल न खायें। अन्न खाने से व्रत खंडित हो

जाता है। तुम सदैव इसी एकादशी का व्रत रखा करो। इससे तुम्हारा सब एकादशियों को अन्न खाने का पाप दूर हो जायेगा और साथ ही पूरे वर्ष की एकादशियों के व्रत का पुण्य प्राप्त होगा।

*

आषाढ़ मास व्रत एवं त्यौहार

योगिनी एकादशी

(आषाढ़ कृष्ण एकादशी)

इस एकादशी को भगवान् नारायण की पूजा-आराधना की जाती है। श्री नारायण भगवान् विष्णु का ही नाम है। इस दिन व्रत रहकर भगवान् नारायण की मूर्ति को स्नान कराके भोग लगाते हुए पुष्प, धूप, दीप से आरती उतारनी चाहिए। अन्य एकादशियों के समान ही भगवान् विष्णु अथवा उनके लक्ष्मीनारायण रूप की पूजा-आराधना और दान आदि की क्रियाएँ करें। गरीब ब्राह्मणों को दान देना परम श्रेयस्कर है। इस एकादशी का व्रत करने से संपूर्ण पाप नष्ट हो जाते है। और पीपल वृक्ष के काटने जैसे पाप तक से मुक्ति मिल जाती है। किसी के दिए हुए शाप का निवारण हो जाता है। इस व्रत को करने से व्रती इस लोक में सुख भोगकर अंत में मोक्ष प्राप्त कर स्वर्गलोक की प्राप्ति करता है। यह एकादशी देह की समस्त आधि-व्याधियों को नष्ट कर सुंदर रूप, गुण और यश देने वाली है।

कथा– प्राचीन काल में अलकापुरी में राजा कुबेर के यहाँ हेम नामक एक माली रहता था। उसका कार्य नित्यप्रति भगवान् शंकर के पूजनार्थ मानसरोवर से फूल लाना था। एक दिन उसे पत्नी के साथ स्वच्छन्द विहार करने के कारण फूल लाने में बहुत देर हो गई। वह दरबार में विलम्ब से पहुँचा। इससे क्रोधित होकर कुबेर ने उसे कोढ़ी होने का शाप दे दिया। शाप से कोढ़ी होकर हेम माली इधर-उधर भटकता हुआ एक दिन दैवयोग से मार्कण्डेय ऋषि के आश्रम में जा पहुँचा। ऋषि ने अपने योगबल से उसके दु:खी होने का कारण जान लिया। तब उन्होंने उसे योगिनी एकादशी का व्रत करने को कहा। व्रत के प्रभाव से हेम माली का

कोढ़ समाप्त हो गया और वह दिव्य शरीर धारण कर स्वर्गलोक को प्रस्थान कर गया।

*

जगन्नाथजी की रथयात्रा

(आषाढ़ शुक्ल द्वितीया)

जगन्नाथपुरी में भगवान् जगन्नाथजी का एक बहुत ही भव्य और विशाल मंदिर है। इस मंदिर की एक अन्य विशेषता यह भी है कि यहाँ भगवान् श्रीकृष्ण के साथ राधाजी की नहीं, बल्कि उनकी बहिन सुभद्रा और भाई बलरामजी की मूर्तियाँ स्थित हैं और तीनों भाई बहिनों की ही सयुंक्त रूप में आराधना की जाती है। इन तीनों मूर्तियों को वर्ष में एक बार आषाढ़ के शुक्ल पक्ष की द्वितीया को मंदिर से निकालकर जनकपुरी ले जाया जाता है, जहाँ ये मूर्तियाँ तीन दिन तक लक्ष्मीजी के निकट रहती हैं और तीन दिन बाद पुनः उन्हीं रथों में जगन्नाथपुरी के मंदिर मे वापस लाई जाती है।

रथयात्रा के लिए भगवान् जगन्नाथजी, बलरामजी और सुभद्रा के लिए प्रतिवर्ष तीन नए रथ बनाए जाते हैं। अत्यन्त भव्य होते हैं ये रथ। जगन्नाथजी का रथ ४५ फुट ऊँचा, ३५फुट लम्बा और उतना ही चौड़ा बनाया जाता है। उसमें ७ फुट व्यास के १६ पहिए लगाए जाते हैं। बलभद्रजी का रथ २२ फुट ऊँचा होता है और उसमें १२ पहिए लगाए जाते हैं। मंदिर के सिंहद्वार पर भगवान् रथों में बैठ कर जनकपुरी की ओर आते हैं। रथों को चार हजार से अधिक मनुष्य खींचते हैं। इन्हें खींचने के लिए मोटे-मजबूत और बहुत लम्बे-लम्बे रस्से लगाए जाते हैं। हजारों व्यक्ति पूर्ण भक्तिभाव से मिलकर खींचते हैं इन रथों को। इस रथयात्रा की सबसे बड़ी विशेषता तो यह है कि यहाँ जाति-पाँति धर्म का कोई अन्तर नहीं रखा जाता। इस यात्रा में चाण्डाल तक को रथ खींचने में सहयोग देने का अधिकार प्राचीन काल से ही चला आ रहा है। जगन्नाथपुरी में दूर-दूर से लाखों व्यक्ति इस महोत्सव में भाग लेने के लिए आते हैं, अब तो स्थानीय स्तर पर अनेक नगरों में निकाली जाने लगी हैं। परन्तु वैसे यह मुख्य तौर पर जगन्नाथपुरी का ही विशिष्ट उत्सव है।

देवशयनी एकादशी

आषाढ़ शुक्ल एकादशी को देवशयनी एकादशी कहते हैं। पुराणों में उल्लेख आया है कि इस दिन से भगवान् विष्णु चार-मास तक पाताल लोक में निवास करते हैं और कार्तिक मास की शुक्ल पक्ष की एकादशी को प्रस्थान करते है। इसी कारण इसे देवशयनी एकादशी तथा कार्तिक मास वाली एकादशी को देवोत्थान एकादशी कहते है। आषाढ़ मास से कार्तिक मास के समय को चातुर्मास्य कहते हैं। इन चार महीनों में भगवान् क्षीर सागर की अनन्त शैय्या पर शयन करते हैं। इसलिए इन चार महीनों में विवाहादि शुभ कार्य करना वर्जित है। इन दिनों में साधु लोग एक ही स्थान पर रहकर तपस्या करते हैं।

कथा– सतयुग में मान्धाता नगर में एक चक्रवती राजा राज्य करता था। एक बार उसके राज्य में तीन वर्ष तक का सूखा पड़ गया। राजा के दरबार में प्रजा ने दुहाई मचाई। राजा सोचने लगा कि मेरे से तो कोई बुरा काम नहीं हो गया जिससे मेरे राज्य में सूखा पड़ गया। राजा प्रजा का दुःख दूर करने के लिए जंगल में अंगिरा ऋषि के आश्रम में पहुँचे। मुनि ने राजा का आश्रम में आने का कारण पूछा। राजा ने कर-बद्ध होकर प्रार्थना की–– भगवान् मैंने सब प्रकार से धर्म का पालन किया है फिर भी मेरे राज्य में सूखा पड़ गया। तब ऋषि ने आषाढ़ मास की शुक्ल पक्ष की एकादशी का व्रत करने को कहा। इस व्रत के प्रभाव से अवश्य वर्षा होगी।

राजा राजधानी लौट आया और एकादशी का व्रत किया। राज्य में व्रत के प्रभाव से मूसलाधार वर्षा हुई और राज्य में खुशियाँ छा गई।

*

गुरु पूर्णिमा

(आषाढ़ पूर्णिमा)

आषाढ़ मास की पूर्णिमा व्यास पूर्णिमा कहलाती है। इस दिन गुरु की पूजा की जाती है। पूरे भारत में यह पर्व बड़ी श्रद्धा के साथ मनाया जाता है। वैसे तो व्यास नाम के कई विद्वान् हुए हैं परन्तु व्यास ऋषि जो चारों वेदों के प्रथम व्याख्याता थे, आज के दिन उनकी पूजा की जाती है।

हमें वेदों का ज्ञान देने वाले व्यासजी ही थे। अतः वे हमारे आदिगुरु हुए। उनकी स्मृति को बनाए रखने के लिए हमें अपने-अपने गुरुओं को व्यासजी का अंश मानकर उनकी पूजा करनी चाहिए।

प्राचीन काल में जब विद्यार्थी गुरु के आश्रम में निःशुल्क शिक्षा ग्रहण करते थे तो इसी दिन श्रद्धाभाव से प्रेरित होकर अपने गुरु की पूजा किया करते थे, और इन्हें यशाशक्ति दक्षिणा अर्पण किया करते थे। इस दिन केवल गुरु की ही नहीं अपितु कुटुम्ब में अपने से जो बड़ा है अर्थात् माता-पिता, भाई-बहन आदि को भी गुरुतुल्य समझना चाहिए।

इस दिन प्रातःकाल स्नान पूजा आदि नित्यकर्मों से निवृत्त होकर उत्तम और शुद्ध वस्त्र धारण कर गुरु के पास जाना चाहिए। उन्हें ऊँचे सुसज्जित आसन पर बैठाकर पुष्पमाला पहनानी चाहिए। इसके बाद वस्त्र, फल, फूल व माला अर्पण कर तथा धन भेंट करना चाहिए। इस प्रकार श्रद्धापूर्वक पूजन करने से गुरु का आशीर्वाद प्राप्त होता है। गुरु के आशीर्वाद से ही विद्यार्थी को विद्या आती है। उसके हृदय का अज्ञानान्धकार दूर होता है। गुरु का आशीर्वाद ही प्राणीमात्र के लिए कल्यायणकारी, ज्ञानवर्धक और मंगल करने वाला होता है।

संसार की संपूर्ण विद्याएँ गुरु की कृपा से ही प्राप्त होती हैं और गुरु के आशीर्वाद से ही दी हुई विद्या सिद्ध और सफल होती है। इस पर्व को श्रद्धापूर्वक मनाना चाहिए, अंधविश्वासों के आधार पर नहीं। गुरु पूजन का मंत्र है-

गुरु ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुदेवो महेश्वरः ।
गुरुसाक्षात्परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

श्रावण मास व्रत एवं त्यौहार

शिवजी के व्रत

कुछ भक्त तो पूरे श्रावण मास में शिवजी की विशेष पूजा और व्रत करते हैं तो अधिकांश व्यक्ति सभी सोमवारों को। भगवान् शिवजी,

मातेश्वरी पार्वती, गणेशजी, कार्तिकेय और शिववाहन नन्दी की संयुक्त रूप से पूजा-आराधना की जाती है। शिवजी की पूजा में गंगाजल और इसके अभाव में सामान्य जल, दूध, दही, चीनी, घी, शहद–पंचामृत, कलावा, वस्त्र, जनेऊ, चन्दन, रोली, चावल, फूल, विल्वपत्र, दूर्वा, फल, विजिया, आक, धतूरा, लौंग, इलाइची, धूप-दीप के प्रयोग का विधान है।

भगवान् पर दक्षिणा के रूप में सामर्थनुसार धन चढ़ाना चाहिए और शिव स्तोत्र, शिव चालीसा और शिव पुराण का पाठ करना चाहिए। व्रती को चाहिए कि वह एक समय भोजन करे। किसी ब्राह्मण से रुद्राभिषेक कराने से शिवजी परम प्रसन्न होकर साधक की सभी मनोकामनाएँ पूर्ण कर देते हैं और अन्त में उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है, ऐसा शास्त्रों का कथन है।

*

मंगला गौरी का पूजन और व्रत

श्रावण मास में जितने भी मंगलवार आएँ, उनमें रखे गये व्रत गौरी व्रत कहलाते हैं। यह व्रत मंगलवार को रखे जाने के कारण मंगला गौरी व्रत कहलाते हैं।

विधान– प्रातःकाल नहा-धोकर एक चौकी पर सफेद तथा लाल कपड़ा बिछाना चाहिए। सफेद कपड़े पर चावल से नौ ग्रह बनाते हैं तथा लाल कपड़े पर गेहूँ से षोडश माता बनाते हैं। चौकी के एक तरफ चावल व फूल रखकर गणेशजी की स्थापना की जाती है। दूसरी तरफ गेहूँ रखकर कलश स्थापित करते हैं। कलश में जल रखते हैं। आटा का चौमुखी दीपक बनाकर १६-१६ तार की चार बत्तियाँ डालकर जलाते हैं। सबसे पहले गणेशजी का पूजन करते हैं। पूजन करके जल, रोली, मौली, चन्दन, सिन्दूर, सुपारी, लौंग, पान, चावल, फूल, इलायची, बेलपत्र, मेवा और दक्षिणा चढ़ाते हैं। इसके बाद कलश का पूजन भी गणेश पूजन की तरह किया जाता है।

फिर नौ ग्रह तथा षोडश माता की पूजा करके सारा चढ़ावा ब्राह्मण को दे देते हैं। इसके बाद मिट्टी की मंगला गौरी बनाकर उन्हें जल, दूध, दही, आदि से स्नान करवाकर वस्त्र पहनाकर रोली, चन्दन, सिन्दूर, मेंहदी

व काजल लगाते हैं। सोलह-सोलह मेवा-सुपारी, लौंग, मेंहदी, शीशा, कंघी व चूड़ियाँ चढ़ाते हैं। कथा सुनकर सासुजी के पाँव छूकर एक समय एक अन्न खाने का विधान है। अगले दिन मंगला गौरी का विसर्जन करने के बाद भोजन करते हैं।

उद्यापन विधि– श्रावण मास के मंगलवारों का व्रत करने के बाद इसका उद्यापन करना चाहिए। उद्यापन में खाना वर्जित है। मेंहदी लगाकर पूजा करनी चाहिए। पूजा चार ब्राह्मणों से करानी चाहिए। एक चौकी के चार कोनों पर केले के चार पत्ता लगाकर मण्डप पर एक ओढ़नी बाँधनी चाहिए। कलश पर कटोरी रखकर उसमें मंगलागौरी की स्थापना करनी चाहिए। हवन के उपरान्त कथा सुनकर आरती करनी चाहिए। चाँदी के बर्तन में आटे के सोलह लड्डू, रुपया व साड़ी सासूजी को देकर उनके पैर छूने चाहिए। पूजा कराने वाले पंडितों को भी भोजन कराकर धोती व अंगोछा देना चाहिए।

अगले दिन सोहल ब्राह्मणों को जोड़े सहित भोजन कराकर धोती, अंगोछा तथा ब्राह्मणियों को सुहाग-पिटारी देनी चाहिए। सुहाग पिटारी में सुहाग का सामान व साड़ी होती है। इतना सब करने के बाद स्वयं भोजन करना चाहिए।

*

पवित्रा अथवा कामदा एकादशी

(श्रावण कृष्ण एकादशी)

श्रावण कृष्ण पक्ष की एकादशी पवित्रा एकादशी अथवा कामदा एकादशी कहलाती है। इस दिन भगवान् श्रीधर की पूजा की जाती है। इस व्रत के करने से सभी कामनाओं की पूर्ति होती है। इसीसे इसे कामदा कहते हैं। इसके करने से ब्रह्महत्या तक का दोष निवारण हो जाता है। वास्तव में यह बहुत पवित्र और पुण्यदायी व्रत है जो हर प्रकार के पापों से मुक्ति दिलाने में समर्थ है।

कथा– एक गाँव में एक वीर क्षत्रिय रहता था। एक दिन किसी बात पर उसकी एक ब्राह्मण से हाथापाई हो गई और वह ब्राह्मण मारा गया।

अपने हाथों मारे गये ब्राह्मण कि क्रिया उस क्षत्रिय ने करनी चाही, किन्तु पंडितों ने उसको क्रिया में सम्मिलित होने से इंकार कर दिया। उन्होंने क्षत्रिय से कहा कि तुम पर ब्रह्महत्या का दोष है। पहले प्रायश्चित कर इस पाप से मुक्त हो, तब हम तुम्हारे घर भोजन करेंगे। क्षत्रिय ने पूछा— इस पाप को दूर करने का क्या उपाय है? तब ब्राह्मणों ने कहा कि तुम श्रावणमास के कृष्ण पक्ष की एकादशी को भक्तिभाव से भगवान् श्रीधर का व्रत एवं पूजन करो तथा ब्राह्मणों को भोजन कराओ, तभी तुम्हारे पाप का प्रायश्चित होगा। क्षत्रिय ने भक्तिभाव और शुद्ध हृदय से भगवान् श्रीधर का व्रत व पूजन किया। शुद्ध मन से प्रायश्चित करने पर रात्रि में भगवान् ने उसे दर्शन देकर कहा कि तुम्हारे ब्रह्महत्या के पाप का निवारण हो गया है। अब तुम उस ब्राह्मण की क्रिया करो। क्षत्रिय ने भगवान् के आदेशानुसार ही किया और ब्रह्महत्या के दोष से मुक्त होकर सुखी जीवन व्यतीत अंत में विष्णु लोक को गया।

*

श्रावणी तीज (हरियाली तीज)

(श्रावण शुक्ल तृतीया)

श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की तृतीया को श्रावणी तीज कहते हैं। जनमानस में यह हरियाली तीज के नाम से जानी जाती है। यह मुख्यतः स्त्रियों का त्यौहार है। इस समय जब प्रकृति चारों तरफ हरियाली की चादर सी बिछी होती है तो प्रकृति की इस छटा को देखकर मन पुलकित होकर नाँच उठता है। जगह-जगह झूले पड़ते हैं। स्त्रियों के समूह गीत गा-गाकर झूला झूलती हैं।

इस त्यौहार पर लड़कियों को ससुराल से पीहर बुला लिया जाता है। विवाह के पश्चात् पहला सावन आने पर लड़की को ससुराल में नहीं छोड़ा जाता है। नवविवाहिता लड़की की ससुराल से इस त्यौहार पर सिंजारा भेजा जाता है।

हरियाली तीज से एक दिन पूर्ण सिंजारा मनाया जाता है। इस दिन नवविवाहिता लड़की की सुसराल से वस्त्र, आभूषण, श्रृंगार का समान, मेंहदी और मिठाई भेजी जाती हैं। इस दिन मेंहदी लगाने का विशेष महत्व

है। स्त्रियाँ अपने हाथों पर त्यौहार विशेष को ध्यान में रखते हुए भिन्न-भिन्न प्रकार की मेंहदी लगाती है। मेंहदी रचे हाथों से जब वह झूले की रस्सी पकड़कर झूला झूलती हैं तो यह दृश्य बड़ा ही मनोहारी लगता है। मानो सुहागिन आकाश को छूने चली हैं।

इस दिन सुहागिन स्त्रियाँ सुहागी पकड़कर सास के पाँव छूकर उन्हें देती है। यदि सास न हो तो स्वयं से बड़ों को अर्थात् जेठानी या किसी वृद्धा को देती है। इस दिन कहीं-कहीं स्त्रियाँ पैरों में आलता भी लगाती हैं जो सुहाग का चिह्न माना जाता है।

हरियाली तीज के दिन अनेक स्थानों पर मेले लगते हैं। माता पार्वती की सवारी बड़े धूमधाम से निकाली जाती है। वास्तव में देखा जाए तो हरियाली तीज कोई धार्मिक त्यौहार नहीं वरन् महिलाओं के लिए एकत्र होने का एक उत्सव है। नवविवाहिता लड़कियों के लिए विवाह के पश्चात् पड़ने वाले पहले सावन के त्यौहार का विशेष महत्त्व होता है।

*

नागपंचमी

(श्रावण शुक्ल पंचमी)

इस दिन नागों की पूजा होती है। इस व्रत में चतुर्थी को केवल एक बार भोजन करें और पंचमी के दिन उपवास करके शाम को भोजन करें। चाँदी, सोने, काठ या मिट्टी की कलम से हल्दी और चन्दन की स्याही बनाकर पाँच फन वाले पाँच नाग अंकित करें। पंचमी के दिन पंचामृत, खीर, कमल, धूप, नैवेद्य आदि से विधिवत नागों की पूजा करें। पूजा के बाद ब्राह्मणों को लड्डू या खीर का भोजन करावें। पंचमी को नाग की पूजा करने वाले व्यक्ति को उस दिन भूमि नहीं खोदनी चाहिए।

प्राचीन काल में तो घरों को इस दिन गोबर में गेरू मिलाकर लीपा जाता था और फिर नाग देवता की पूजा पूर्ण विधि-विधान से की जाती थी इस हेतु एक रस्सी में सात गाँठें लगा कर रस्सी का साँप बनाकर उसे एक लकड़ी के पट्टे पर साँप मानकर बिठाया जाता है। हल्दी-रोली, चावल और फूल आदि चढ़ाकर नाग देवता की पूजा करने के बाद कच्चा

दूध, घी, चीनी मिलाकर इसे काठ पर बैठे सर्प देवता को आर्पित करें। इस समय इस श्लोक से सर्प देवता की स्तुति करनी चाहिए। **अनन्तम् वासुकि, शेषम्, पद्मनाभम् च कम्बलम् कर्कोटकम् तक्षकम् ।**

पूजन करने के बाद सर्पदेव की आरती उतारें। इसके बाद कच्चे दूध में शहद, चीनी या थोड़ा-सा गुड़ घोलकर इसे जहाँ कहीं साँप की बाँबी या बिल दीखे उसमें डाल दें और उस बिल की मिट्टी लेकर चक्की, चूल्हे पर, दरवाजे के निकट दीवार पर तथा घर के कोनों में साँप बनाये। कच्चे चावल पीस कर उसमें पानी डालकर इस घोल से भी ये आकृतियाँ अंकित की जा सकती हैं। इन सबको बनाने के बाद भींगे हुए बाजरे और घी, गुड़ से इनकी पूजा करें। इन पर दक्षिणा चढ़ायी जाय, इनकी घी के दीपक से आरती उतारी जाय। अन्त में नागपंचमी की कथा कहें और सुनें।

कथा– मनिपुर नगर में एक किसान अपने परिवार सहित रहता था। उसके दो लड़के और एक कन्या थी। एक दिन उसके हल के फल से बिंधकर साँप के बच्चे, साँप दोनों मर गयें माँ नागिन ने पहले तो बहुत विलाप किया, फिर अपने बच्चों को मारने वाले से बदला लेने का निश्चय किया। रात्रि में नागिन ने किसान, उसकी स्त्री और दोनों पुत्रों को डस लिया। अगले दिन नागिन किसान की कन्या को डसने चली तो उस कन्या ने डर कर उसके आगे दूध का कटोरा रख दिया और हाथ जोड़ कर क्षमा माँगने लगी। उस दिन नागपंचमी थी। नागिन ने प्रसन्न होकर लड़की से वर माँगने को कहा। लड़की ने वर माँगा कि मेरी माता, पिता एवं भाई जीवित हो जायँ। आज के दिन जो भी नागों की पूजा करे उसे कभी नाग के डँसने की बाधा न हो। नागिन लड़की को वरदान देकर चली गई। तभी किसान, उसकी स्त्री और दोनों पुत्र जीवित हो गये।

पुत्रदा एकादशी व्रत

श्रावण शुक्ल एकादशी

पुत्रदा एकादशी व्रत श्रावण की शुक्ल पक्ष की एकादशी को किया जाता है। इस दिन भगवान् जनार्दन की श्रद्धापूर्वक पूजा की जाती है। भक्तिपूर्वक इस व्रत को करने से सभी कामनाओं की पूर्ति होती है। संतान प्राप्ति की इच्छा रखने वालों को विशेष रूप से इस व्रत को करना चाहिए।

कथा– प्राचीन काल में महीजित् नाम का एक धर्मात्मा और दानी राजा राज्य करता था। सब प्रकार के सुख वैभव होते हुए भी राजा संतान न होने से दुःखी रहता था। एक दिन राजा ने सभी ऋषि-मुनियों, संन्यासियों और विद्वानों को बुलाकर उनसे संतान प्राप्ति का उपाय पूछा। उन ऋषि मुनियों में-से लोमश ऋषि ने उठकर कहा— राजन् ! पिछले जन्म में आपने तालाब पर जल पीती हुई गौ को भगा दिया था। उसी के शाप से तुम संतान सुख से वंचित हो। यदि तुम अपनी पत्नी सहित पुत्रदा एकादशी को भगवान् जर्नादन की भक्तिपूर्वक पूजा-अर्चना और व्रत करो तो भगवान् तुम्हारे शाप का अवश्य ही निवारण करेंगे। राजा ने ऐसा ही किया। इस व्रत के प्रभाव से रानी ने शीघ्र ही एक सुन्दर बच्चे को जन्म दिया। पुत्र को पाकर राजा बहुत प्रसन्न हुए और फिर वे हमेशा ही इस व्रत को करने लगे।

*

रक्षा-बन्धन

हिन्दुओं के चार प्रसिद्ध त्यौहारों में-से रक्षा-बन्धन का त्यौहार एक है। यह श्रावण मास की पूर्णिमा को मनाया जाता है। यह मुख्यतया भाई-बहन के स्नेह का त्यौहार है। इस दिन बहन-भाई के हाथ पर राखी बाँधती है और माथे पर तिलक लगाती है। भाई प्रतिज्ञा करता है कि यथाशक्ति मैं अपनी बहन की रक्षा करूँगा।

एक बार भगवान् कृष्ण के हाथ में चोट लगने से रक्त बहने लगा था तो द्रौपदी ने अपनी साड़ी फाड़कर उनके हाथ में बाँध दी थी। इसी बन्धन से ऋणी भगवान् श्रीकृष्ण ने दुःशासन द्वारा चीर हरण के समय द्रौपदी की लाज बचायी थी।

मध्य कालीन इतिहास में एक ऐसी घटना मिलती है जिसमें चित्तौड़ की रानी कर्मवती ने दिल्ली के मुगल बादशाह हुमायूँ के पास राखी भेजकर अपना भाई बनाया था। हुमायूँ ने राखी की इज्जत की और उसके सम्मान की रक्षा के लिए गुजरात के बादशाह से युद्ध किया।

कथा– प्राचीन समय में एक बार देवताओं और दानवों में बारह वर्ष तक घोर संग्राम चला। इस संग्राम में राक्षसों की जीत हुई और देवता

रक्षाबन्धन
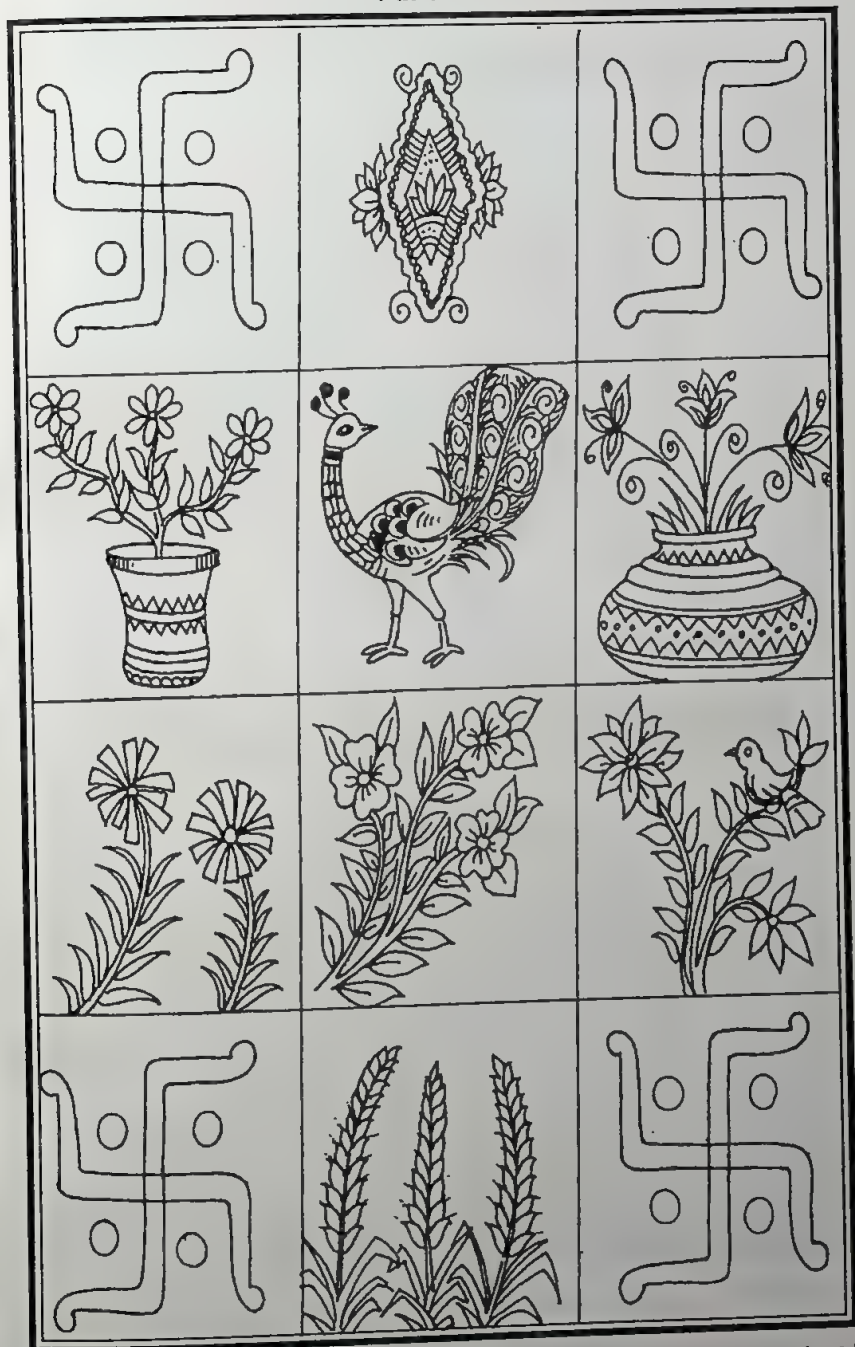
हार गए। दैत्य राज ने तीनों लोकों को अपने वश में कर लिया तथा अपने को भगवान् घोषित कर दिया। दैत्यों के अत्याचारों से देवताओं के राजा इन्द्र ने देवताओं के गुरु बृहस्पति से विचार-विमर्श किया और रक्षा विधान करने को कहा।

श्रावण पूर्णिमा को प्रातःकाल रक्षा का विधान सम्पन्न किया गया।

येन बद्धोबली राजा दानवेन्द्रो महाबलः ।
तेन त्वामभिबध्नामि रक्षे मा चल मा चल।।

उक्त मंत्रोचार से गुरु बृहस्पति ने श्रावण पूर्णिमा के दिन रक्षा विधान किया। सह धर्मिणी इन्द्राणी के साथ वृत्र संहारक इन्द्र ने बृहस्पति की वाणी का अक्षरश पालन किया। इन्द्राणी ने ब्राह्मण पुरोहितों द्वारा स्वस्तिवाचन कराकर इन्द्र के दायें हाथ में रक्षा सूत्र को बाँध दिया। इसी सूत्र के बल पर इन्द्र ने दानवों पर विजय प्राप्त की।

भाद्रपद मास के व्रत एवं त्यौहार

कजली तीज

भाद्रपद के कृष्णपक्ष की तृतीया को यह पर्व मनाया जाता है। यह पर्व उत्तर प्रदेश के बनारस तथा मिर्जापुर में विशेष रूप से मनाया जाता है। कजरी की प्रतिद्वन्दिता भी होती है। प्रायः लोग नावों पर चढ़कर कजरी गीत गाते हैं। यह वर्षा ऋतु का एक विशेष राग है। ब्रज के मल्हारों की भाँति यहाँ पर यह प्रमुख वर्षा गीत माना जाता है।

इस दिन झूला भी पड़ता है। घरों में पकवान, मिष्ठान्न बनाया जाता है। ग्रामीण अंचलो में इसे तीजा कहते है। ग्रामीण बालाएँ तथा वधुएँ हिंडोले पर बैठकर कजरी गीत गाती हैं। वर्षा ऋतु, यह गीत, पपीहा, बादलों तथा पुरवा हवाओं के झोकों से बहुत प्रिय लगता है।

*

गूगा पंचमी
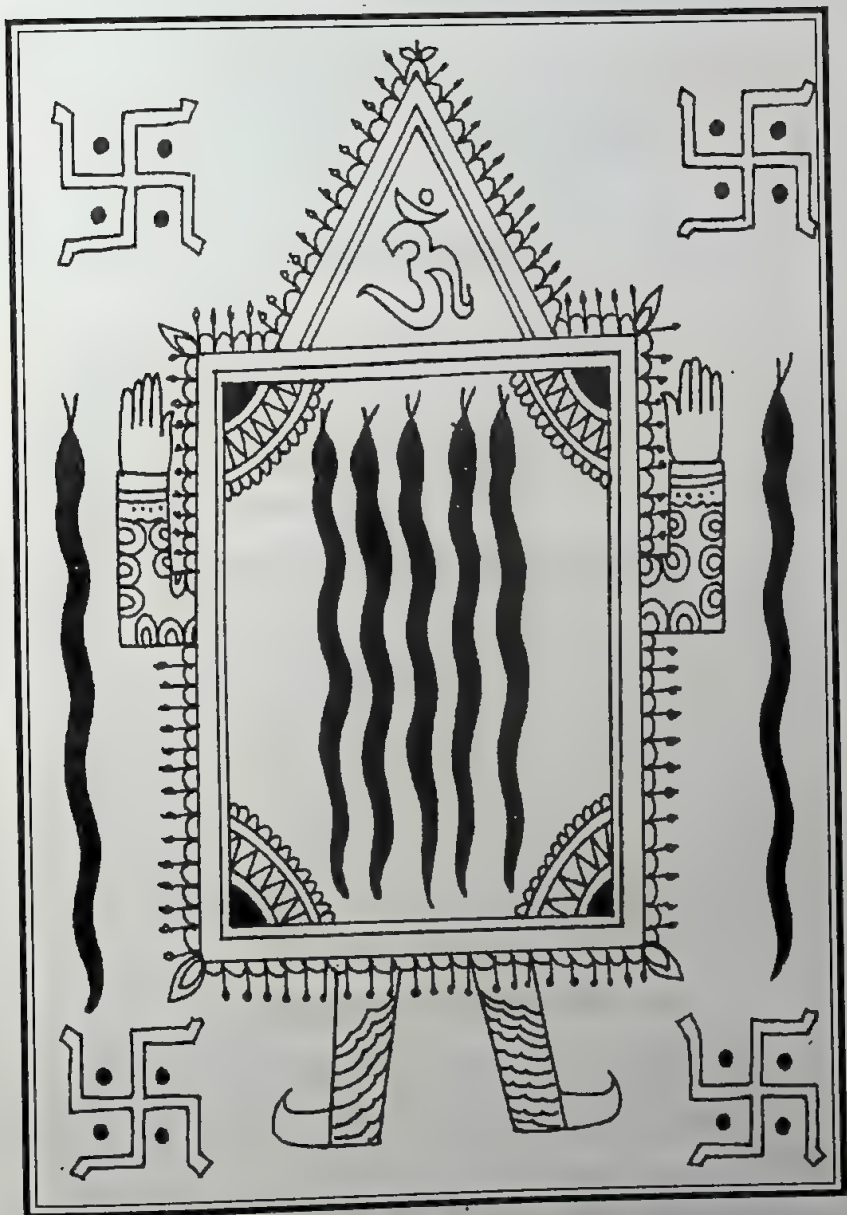
दीवार पर गेरू से बनाकर पूजन करें।

बूढ़ी तीज

बूढ़ी तीज भाद्रपद की कृष्णपक्ष की तृतीया को मनाई जाती है। इस दिन व्रत रखकर गायों का पूजन करते हैं। सात गायों के लिए आटे की सात लोई बनाकर खिलाते हैं। इसके बाद भोजन करते हैं। वधुएँ चीनी और रुपयों का बायना निकालकर सासुजी को देकर उनके चरण स्पर्श करती हैं।

बहुला चौथ

माताओं द्वारा पुत्रों की रक्षा व दीर्घायु की कामना से किया जाता है आज का व्रत। माताएँ एक समय भोजन करती हैं। गेहूँ और चावल का उपयोग नहीं करती। परम्परा के अनुसार आज के दिन गाय का दूध नहीं निकालना चाहिए, गाय का पूरा दूध उसके बछड़े को ही पीने देना चाहिए। गाय और शेर की मिट्टी की मूर्ति रखकर उनकी पूजा करने का भी विधान है।

गूगा पंचमी तथा भाई भिन्ना

आज से पन्द्रह दिन पूर्व मनाए जाने वाली नाग पंचमी के समान ही आज भी नागों की पूजा की जाती है। दीवार पर गेरू और कोयले से साँपों की पाँच आकृतियाँ बनाकर उनकी पूजा करते हैं। साँपों के बिल के पास दूध भरकर कसोरा रखा जाता है। इस सम्पूर्ण पूजा का तरीका और सुने जाने वाली कहानी नाग पंचमी के समान ही है। कुछ क्षेत्रों में आज के दिन स्त्रियाँ सुख सौभाग्य की प्राप्ति हेतु व्रत भी रखती हैं। इसी प्रकार कुछ क्षेत्रों में यह त्यौहार रक्षाबन्धन के समान बहिनों द्वारा भाइयों को टीका करके भी मनाया जाता है वैसे यह एक क्षेत्रीय त्यौहार ही है।

हल षष्ठी (हरछठ)

भाद्रपद की कृष्ण पक्ष की षष्ठी को श्रीकृष्ण के बड़े भाई बलरामजी का जन्म हुआ था। कुछ लोग माता सीता का जन्म दिवस इसी तिथि को मानते हैं।

बलरामजी का प्रधान शस्त्र हल तथा मूसल है। इसलिए उन्हें हलधर भी कहते हैं। उन्हीं के नाम पर इस पर्व का नाम हल षष्ठी पड़ा। हमारे देश

के पूर्वी जिलों में इसे ललही छठ भी कहते हैं। इस दिन महुए की दातुन करने का विधान है। इस व्रत में हल द्वारा जुता हुआ फल तथा अन्न का प्रयोग वर्जित है। इस दिन गाय का दूध, दही का प्रयोग भी वर्जित है। भैंस का दूध व दही प्रयोग किया जाता है।

विधान- इस दिन प्रातःकाल स्नानादि के पश्चात् पृथ्वी को लीपकर एक छोटा सा तालाब बनाया जाता है। जिसमें झरबेरी, पलाश, गूलर की एक-एक शाखा बाँधकर बनाई गई हर छट को गाड़ देते हैं और इसकी पूजा की जाती है। पूजन में सतनजा आदि की भुनी सामग्री भी चढ़ाई जाती है।

पूजन के बाद निम्न मन्त्र से प्रार्थना की जाती है :-

गंगा द्वारे च कुशावर्ते विल्वके नीलपर्वते।
स्नात्वा कनखले देवि हरं लब्धवतीं पतिम् ।।
ललिते सुभगे देवि सुख-सौभाग्यदायिनी।
अनन्तं देहि सौभाग्यं मह्यं तुभ्य नमो नमः।।

हे देवी ! आपने गंगाद्वार, कुशावर्त, विल्वक, नील पर्वत और कनखल तीर्थ में स्नान करके भगवान शंकर को पति रूप में प्राप्त किया है। सुख और सौभाग्य देने वाली ललिता देवी आपको बारम्बार नमस्कार है, आप मुझे अचल सुहाग दीजिये।

कथा– एक गर्भवती ग्वालिन के प्रसव का समय समीप था। उसे प्रसव पीड़ा होने लगी थी। उसका दही-मक्खन बेचने के लिए रखा हुआ था। वह सोचने लगी यदि बालक ने जन्म ले लिया तो दही-मक्खन बिक नहीं पायेगा। यह सोचकर वह उठी और सिर पर दही-मक्खन की मटकी रखकर बेचने चल दी। चलते-चलते उसकी प्रसव पीड़ा बढ़ गई। वह झरबेरी की झाड़ी की ओट में बैठ गई। उसने एक पुत्र को जन्म दिया।

अल्हड़ ग्वालिन ने बालक को कपड़े में लपेटकर वहीं लिटा दिया और स्वयं मटकियाँ उठाकर आगे बढ़ गई। उस दिन हरछठी थी। यद्यपि उसका दूध व मक्खन गाय-भैंस का मिला जुला था पर उसने बेचते समय यही बताया कि यह केवल भैंस का है। इसलिए उसका दूध दही बिक गया।

जहाँ ग्वालिन ने बच्चे को छिपाया था वहाँ एक किसान हल चला रहा था। उसके बैल बिदक कर खेत की मेंढ़ पर जा चढ़ें। हल की नोक बच्चे के पेट से टकरा जाने से बच्चे का पेट फट गया। किसान ने तत्काल

झरबेरी के काँटों से बच्चे के पेट में टाँके लगाकर उसे वहीं पड़ा रहने दिया। ग्वालिन ने लौटकर बच्चे को मृत पाया। ग्वालिन ने सोचा, यह मेरे पाप का फल है। मैंने आज हरछट के दिन व्रत करने वाली अनेक स्त्रियों को गाय का दूध दही बेचकर उनका व्रत भंग किया है। उसी का मुझे दण्ड मिला है कि मेरा बच्चा मर गया। उसने सोचा मुझे लौटकर अपना पाप स्वीकार कर प्रायश्चित करना चाहिए। वह लौटकर वहाँ आई जहाँ उसने दूध-दही बेचा था। उसने गली-मुहल्ले में घूम-घूमकर अपने दूध दही का सारा रहस्य जोर-जोर से आवाज लगाकर प्रकट कर दिया। यह सुनकर स्त्रियों ने अपने धर्म-रक्षा के विचार से उसे आशीष दी। जब वह वापस उसी खेत में पहुँची तो उसे उसका पुत्र जीवित अवस्था में मिला। उसी दिन से ग्वालिन ने पाप छिपाने के लिए कभी झूठ न बोलने का प्रण किया।

*

चन्द्र छठ

भाद्रपद की कृष्ण पक्ष की षष्ठी को हलषष्ठी एवं चन्द्र छट मनायी जाती है। इसका व्रत कुँवारी कन्याएँ रखती हैं। इस व्रत में खाना-पीना वर्जित है।

विधान– एक पटरे पर जल का कलश रखते हैं। उस पर रोली छिड़कर कर सात टीके लगाये जाते है। एक गिलास में गेहूँ एवं ऊपर से इच्छानुसार रुपये रखते हैं। हाथ में गेहूँ के सात दाने लेकर कहानी सुनते है। इसके पश्चात् चन्द्रमा को अर्घ्य देते हैं। गेहूँ तथा रुपये ब्राह्मण को देते हैं। चन्द्रमा को अर्घ्य देने के पश्चात् लड़कियाँ व्रत का पारण करती हैं।

कथा– किसी नगर में एक सेठ और सेठानी रहते थे। सेठानी मासिक धर्म के समय भी बर्तनों का स्पर्श करती फिरती थी। कुछ समय पश्चात् सेठ को बैल और सेठानी को कुतिया की योनि प्राप्त हुई। दोनों अपने पुत्र के घर में रहते थे। बैल खेत जोतता और कुतिया घर की रखवाली करती थी। पिता का श्राद्ध था। पत्नी ने खीर बनाई। वह किसी काम से बाहर गई तो एक चील खीर के बर्तन में साँप डाल गई। बहू को इस बात का पता नहीं चला। पर कुतिया यह सब देख रही थी। उसे पता था कि खीर खाने से ब्राह्मण मर जायेंगे अतः कुतिया ने खीर के भगोने में मुँह डाल दिया। गुस्से में बहू ने कुतिया को जलती लकड़ी से मारा। जिससे उसकी रीढ़ की हड्डी टूट गई। बहू ने वह खीर फेंक दी और दूसरी

खीर बनाई। सब ब्राह्मण भोजन कर चले गये परन्तु बहू ने कुतिया को जूठन तक न दी। रात होने पर कुतिया और बैल बातें करने लगे। कुतिया बोली— आज तो तुम्हारा श्राद्ध था। तुम्हें तो खूब खाने को मिला होगा। मुझे तो आज कुछ भी खाने को नहीं मिला, उल्टे मेरी पिटाई हो गई। उसने उपरोक्त खीर और साँप वाली बात बैल को बता दी। बैल बोला— आज तो मैं भी भूखा हूँ। कुछ खाने को नहीं मिला। आज तो और दिनों की अपेक्षा काम भी अधिक करना पड़ा। बेटा और बहू बैल तथा कुतिया की वार्तालाप सुन रहे थे। बेटे ने पण्डितों को बुलाकर पूछा कि उसके माता-पिता किस योनि में है। पंडितों ने बताया कि माता कुतिया योनि और बाप बैल की योनि में तुम्हारे ही घर में है। लड़का सारा रहस्य जान गया। उसने अपने माता-पिता को भर पेट भोजन कराया और पंडितों से उनकी वर्तमान योनि से छूटने का उपाय पूछा। पंडितों ने परामर्श दिया कि भाद्रपद की कृष्ण पक्ष की षष्ठी को जब कुँवारी कन्याएँ चन्द्रमा को अर्घ्य देने लगें तो ये दोनों प्राणी यदि अर्घ्य के नीचे खड़े हो जायें तो इनको इनकी योनियों से छुटकारा मिल जायेगा। तुम्हारी माँ ऋतुकाल में सब बर्तन छूती थी, इसी कारण इसी दोष से इसे यह योनि मिली थी।

आने वाली चन्द्र षष्टी पर लड़के ने उपरोक्त बातों का पालन किया, जिससे उसके माता-पिता का कुतिया एवं बैल की योनि से छुटकारा मिल गया।

*

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी

भाद्रपद कृष्ण पक्ष की अष्टमी को रात के बारह बजे मथुरा के राजा कंस की जेल में वासुदेवजी की पत्नी देवी देवकी के गर्भ से सोलह कलाओं से युक्त भगवान् श्रीकृष्ण का जन्म हुआ था। इस तिथि को रोहिणी नक्षत्र का विशेष माहात्म्य है। इस दिन देश के समस्त मन्दिरों का शृंगार किया जाता है। कृष्णावतार के उपलक्ष में झाँकियाँ सजायी जाती हैं। भगवान् कृष्ण का शृंगार करके झूला सजाया जाता है। स्त्री पुरुष रात के बारह बजे तक व्रत रखते हैं। रात को बारह बजे शंख तथा घंटों की आवाज से श्रीकृष्ण के जन्म की खबर चारों दिशाओं में गूँज उठती है। भगवान् कृष्ण की आरती उतारी जाती है। और प्रसाद वितरण किया जाता है। प्रसाद ग्रहण कर व्रत का पारण किया जाता है।

कथा– द्वापर युग में पृथ्वी पर राक्षसों के अत्याचार बढ़ने लगे। पृथ्वी गाय का रूप धारण कर अपनी कथा सुनाने के लिए तथा अपने उद्धार के लिए ब्रह्माजी के पास गई। ब्रह्माजी सब देवताओं को साथ लेकर पृथ्वी को विष्णु के पास क्षीर सागर ले गये। उस समय भगवान् विष्णु अनन्त शैय्या पर शयन कर रहे थे। स्तुति करने पर भगवान् की निद्रा भंग हो गई।

इसके पश्चात् देवता ब्रज मण्डल में आकर यदुकुल में नन्द-यशोदा तथा गोप-गोपियों के रूप में पैदा हुए।

द्वापर युग के अन्त में मथुरा में उग्रसेन राजा राज्य करते थे। उग्रसेन के पुत्र का नाम कंस था। कंस ने उग्रसेन को बलपूर्वक सिंहासन से उतारकर जेल में डाल दिया और स्वयं राजा बन गया। कंस की बहन देवकी का विवाह यादव कुल में वासुदेव के साथ हो गया। जब कंस देवकी को विदा करने के लिए रथ के साथ जा रहा था तो आकाशवाणी हुई कि "हे कंस ! जिस देवकी को तू बड़े प्रेम से विदा कर रहा है उसका आठवाँ पुत्र तेरा संहार करेगा। आकाशवाणी की बात सुनकर कंस क्रोध से भरकर देवकी को मारने को तैयार हो गया। उसने सोचा— न देवकी होगी न उसका कोई पुत्र होगा। वासुदेवजी ने कंस को समझाया कि तुम्हें देवकी से तो कोई भय नहीं है। देवकी की आठवीं संतान से तुम्हें भय है। इसलिए मैं इसकी आठवीं संतान को तुम्हें सौंप दूँगा। तुम्हारे समझ में जो आये उसके साथ वैसा ही व्यवहार करना। कँस ने वासुदेवजी की बात स्वीकार कर ली और वासुदेव-देवकी को कारागार में बन्द कर दिया।

तत्काल नारदजी वहाँ आ पहुँचे और कंस से बोले कि यह कैसे पता चलेगा कि आठवाँ गर्भ कौन-सा होगा। गिनती प्रथम से या अन्तिम गर्भ से शुरू होगी। कंस ने नारदजी के परामर्श पर देवकी के गर्भ से उत्पन्न होने वाले समस्त बालकों को मारने का निश्चय कर लिया। इस प्रकार एक-एक करके कंस ने देवकी के सात बालकों को निर्दयता पूर्वक मार डाला।

भाद्रपद के कृष्ण पक्ष की अष्टमी को रोहिणी नक्षत्र में श्रीकृष्ण का जन्म हुआ। उनके जन्म लेते ही जेल की कोठरी में प्रकाश फैल गया। वासुदेव देवकी के सामने शंख, चक्र, गदा एवं पद्मधारी चतुर्भुज भगवान् ने अपना रूप प्रकट कर कहा— अब मैं बालक का रूप धारण करता हूँ। तुम मुझे तत्काल गोकुल में नन्द के यहाँ पहुँचा दो और उनकी अभी-

अभी जन्मी कन्या को लाकर कंस को सौंप दो।

तत्काल वासुदेवजी की हथकड़ियाँ खुल गईं। दरवाजे अपने आप खुल गये। पहरेदार सो गये। वासुदेव श्रीकृष्ण को सूप में रखकर गोकुल को चल दिए। रास्ते में यमुना श्रीकृष्ण के चरणों को स्पर्श करने के लिए बढ़ने लगीं। भगवान् ने अपने पैर लटका दिए। चरण छूने के बाद यमुना घट गई।

वासुदेव यमुना पार कर गोकुल में नन्द के यहाँ गये। बालक कृष्ण को यशोदाजी की बगल में सुलाकर कन्या को लेकर वापस कंस के कारागार में आ गये। जेल के दरवाजे पूर्ववत् बन्द हो गये। वासुदेवजी के हाथों में हथकड़ियाँ पड़ गई, पहरेदार जाग गये। कन्या के रोने पर कंस को खबर दी गई। कँस ने कारागार में आकर कन्या को लेकर पत्थर पर पटक कर मारना चाहा परन्तु वह कँस के हाथ से छूटकर आकाश में उड़ गई और देवी का रूप धारण कर बोली— हे कंस ! मुझे मारने से क्या लाभ है? तेरा शत्रु तो गोकुल में पहुँच चुका है। यह दृश्य देखकर कंस हतप्रभ और व्याकुल हो गया।

कंस ने श्रीकृष्ण को मारने के लिए अनेक दैत्य भेजे। श्रीकृष्ण ने अपनी अलौकिक माया से सारे दैत्यों को मार डाला। बड़े होने पर कंस को मारकर उग्रसेन को राजगद्दी पर बैठाया।

श्रीकृष्ण की पुण्य जन्म-तिथि को तभी से सारे देश में बड़े हर्षोल्लास से मनाया जाता है।

*

प्रबोधिनी एकादशी व्रत

भाद्रपद कृष्णपक्ष की एकादशी प्रबोधिनी, जया, कामिनी तथा अजा नाम से विख्यात है। इस दिन भगवान् विष्णुजी की पूजा की जाती है। रात्रि जागरण तथा व्रत रखने से सारे पाप नष्ट हो जाते हैं।

कथा– पुराणों में वर्णन आता है कि एक बार सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र ने स्वप्न में ऋषि विश्वामित्र को अपना राज्य दान कर दिया। अगले दिन ऋषि विश्वामित्र दरबार में पहुँचे तो राजा ने उन्हें अपना सारा राज्य सौंप दिया। ऋषि ने उनसे दक्षिणा की पाँच सौ स्वर्ण मुद्राएँ और माँगी। दक्षिणा चुकाने के लिए राजा को अपनी पत्नी एवं पुत्र तथा स्वयं

को बेचना पड़ा। राजा हरिश्चन्द्र को एक डोम ने खरीदा था। डोम ने राजा हरिश्चन्द्र को श्मशान में नियुक्त करके मृतकों के सम्बधिन्यों से कर लेकर शव दाह करने का कार्य सौंपा। उनको जब यह कार्य करते हुए कई वर्ष बीत गए तो एक दिन अकस्मात् उनकी गौतम ऋषि से भेंट हो गई। राजा ने उनसे अपने ऊपर बीती सब बातें बताई तो मुनि ने उन्हें इसी अजा एकादशी का व्रत करने की सलाह दी। राजा ने यह व्रत करना आरम्भ कर दिया। इसी बीच उनके पुत्र रोहिताश को सर्प के डँसने से स्वर्गवास हो गया। जब उसकी माता अपने पुत्र को अन्तिम संस्कार हेतु श्मशान पर लायी तो राजा हरिश्चन्द्र ने उससे श्मशान का कर माँगा। परन्तु उसके पास श्मशान का कर चुकाने के लिए कुछ भी नहीं था। उसने चुँदरी का आधा भाग देकर श्मशान का कर चुकाया। तत्काल आकाश में बिजली चमकी और प्रभु प्रकट होकर बोले— महाराज! तुमने सत्य को जीवन में धारण करके उच्चतम आर्दश प्रस्तुत किया है। तुम्हारी कर्तव्यनिष्ठा धन्य है। तुम इतिहास में सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र के नाम से अमर रहोगे।

भगवत्कृपा से रोहित जीवित हो गया। तीनों प्राणी चिरकाल तक सुख भोगकर अन्त में स्वर्ग को चले गए।

*

वच्छवासर या गोवत्स द्वादशी

(भाद्रपद कृष्ण द्वादशी)

इस पर्व पर गाय और बछड़े की पूजा की जाती है। यदि किसी कारणवश गाय-बछड़े न मिलें तो मिट्टी की मूर्ति बनाकर उनकी पूजा करें। गाय बछड़े को अंकुरित मूंग, मोठ तथा चने खिलाये जाते हैं। इस दिन मूंग, मोठ, चने आदि द्विदलीय अन्न खाने का विशेष माहात्म्य है। गेहूं, जौ, चावल आदि एकदलीय अन्न और गौ-दुग्धादि का प्रयोग वर्जित है।

ऐसी मान्यता है कि इस दिन भगवान् कृष्ण पहली बार जंगल में गाय-बछड़े लेकर चराने गये थे। माता यशोदा ने ब्राह्मणों से पूजा-पाठ व हवनादि कराकर और गाय-बछड़ों को सजाकर जंगल में भेजा था। उसी की याद में यह पर्व मनाया जाता है।

*

कुशोत्पाटनी अमावस्या

(भाद्रपद अमावस्या)

भाद्रपद कृष्णपक्ष की अमावस्या को कुशोत्पाटनी अमावस कहा जाता है। वैसे तो प्रत्येक अमावस्या को पितरों का तर्पण करने का विधान है, परन्तु श्राद्धपक्ष के पन्द्रह दिन पूर्व पड़ने वाली भाद्रपद मास की अमावस्या को पितरों का पूजन एवं तर्पण विशेष विधि- विधान से किया जाता है।

इस दिन पुरोहित वर्ग वर्ष भर कर्मकाण्डादि कराने के लिए नदी, घाटियों, जंगलों से कुशा नामक घास उखाड़कर घर लाते हैं। कुशा उखाड़ते समय 'हूँ फट्' मंत्र बोला जाता है। शास्त्रों में दस प्रकार का कुश बताया गया है। इसमें जो मिल जाए, उसी को ग्रहण कर लेना चाहिए। जिस कुश का मूल सुतीक्ष्ण हो, जिसमें सात पत्तियाँ हों, अग्रभाग कटा न हो तथा हरा हो, वह कुश देव और पितृ दोनों कार्यों में उपयोग करने योग्य होती है।

कुशा नामक घास का एक छल्ला बनाकर अंगूठी की तरह दाहिने हाथ की अनामिका (छोटी उंगली के बगल वाली) उंगली में पहनकर और अंजली में जल एवं काले तिल लेकर पितरों का तर्पण किया जाता है।

हरितालिका तीज

हरितालिका तीज का व्रत भाद्रपद मास में शुक्ल पक्ष की तृतीया को किया जाता है। इस दिन शंकर-पार्वती की बालू की मूर्ति बनाकर पूजन किया जाता है। सुन्दर वस्त्रों एवं कदली स्तम्भों से गृह को सजाकर नाना प्रकार के मंगल गीतों से रात्रि जागरण करना चाहिए। इस व्रत को करने वाली स्त्रियाँ पार्वती के समान सुख पूर्वक पति रमण करके शिवलोक को जाती हैं।

कथा– इस व्रत के माहात्म्य की कथा भगवान् शंकर ने पार्वती को उनके पूर्व जन्म का स्मरण कराने हेतु इस प्रकार कही थी—

एक बार तुमने हिमालय पर गंगा तट पर अपनी बाल्यावस्था में बारह वर्ष की आयु में अधोमुखी होकर घोर तप किया था। तुम्हारी कठोर तपस्या को देखकर तुम्हारे पिता के क्लेश के कारण नारदजी तुम्हारे पिता के पास

आये और बोले कि विष्णु भगवान् आपकी कन्या से विवाह करना चाहते है। उन्होंने इस कार्य हेतु मुझे आपके पास भेजा है। तुम्हारे पिता ने विष्णुजी के प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर लिया। इसके बाद नारदजी ने विष्णुजी के पास जाकर कहा कि हिमालयराज अपनी पुत्री सती का विवाह आपसे करना चाहते हैं। विष्णुजी भी तुमसे विवाह करने को राजी हो गए।

नारदजी के जाने के बाद तुम्हारे पिता ने तुम्हें बताया कि तुम्हारा विवाह विष्णुजी से तय कर दिया है। यह अनहोनी बात सुनकर तुम्हें अत्यन्त दुःख हुआ और तुम जोर-जोर से विलाप करने लगी। एक अंतरंग सखी के द्वारा विलाप का कारण पूछने पर तुमने सारा वृतांत सखी को बता दिया। मैं शंकर भगवान् से विवाह के लिए कठोर तप कर रही हूँ, उधर हमारे पिताश्री विष्णुजी के साथ मेरा सम्बन्ध करना चाहते हैं। क्या तुम मेरी सहायता करोगी? नहीं तो मैं अपने प्राण त्याग दूँगी।

तुम्हारी सखी बड़ी दूरदर्शी थी। वह तुम्हें एक घनघोर जंगल में ले गयी। इधर तुम्हारे पिता तुम्हें घर में न पाकर बहुत चिन्तित हुए। मैं विष्णुजी से उनको विवाह करने का वचन दे चुका हूँ। वचन भंग की चिन्ता से वह मूर्छित हो गए।

इधर तुम्हारी खोज होती रही और तुम अपनी सहेली के साथ नदी के तट पर एक गुफा में मेरी तपस्या करने में लीन हो गई। भाद्रपद शुक्ल पक्ष की तृतीया को हस्त नक्षत्र में तुमने रेत का शिवलिंग स्थापित करके व्रत किया और पूजन तथा रात्रि जागरण भी किया। इस कठिन तप व्रत से मेरा आसन डोलने लगा। मेरी समाधि टूट गई। मैं तुरन्त तुम्हारे पास पहुँचा और वर माँगने का आदेश दिया। तुम्हारी माँग तथा इच्छानुसार तुम्हें मुझे अर्धांगिनी के रूप में स्वीकार करना पड़ा।

तुम्हें वरदान देकर मैं कैलाश पर्वत पर चला आया। प्रातः होते ही तुमने पूजा की समस्त सामग्री को नदी में प्रवाहित करके अपनी सहेली सहित व्रत का पारण किया। उसी समय तुम्हें खोजते हुए हिमालयराज उस स्थान पर पहुँच गए। बिलखते हुए तुम्हारे घर छोड़ने का कारण पूछने लगे। तब तुमने उन्हें बताया कि मैं शंकर भगवान् को पति रूप में वरण कर चुकी हूँ, परन्तु आप मेरा विवाह विष्णुजी से करना चाहते थे। इसीलिए मुझे घर छोड़कर आना पड़ा। मैं अब आपके साथ घर इसी शर्त पर चल सकती हूँ कि आप मेरा विवाह विष्णुजी से न करके भगवान् शिव से

करेंगे। गिरिराज तुम्हारी बात मान गये और शास्त्रोक्त विधि द्वारा हम दोनों को विवाह के बन्धन में बाँध दिया।

इस व्रत को हरतालिका इसलिए कहते हैं कि पार्वती की सखी उसे पिता के घर से हर कर घनघोर जंगल में ले गई थी। हरत अर्थात हरण करना और आलिका अर्थात् सखी, सहेली। हरतालिका। शंकरजी ने पार्वती से यह भी बताया कि जो स्त्री इस व्रत को परम श्रद्धा से करेगी उसे तुम्हारे समान ही अचल सुहाग प्राप्त होगा।

गणेश चतुर्थी

भाद्रपद मास की शुक्ल पक्ष की चतुर्थी गणेश चतुर्थी के नाम से प्रसिद्ध है। इस दिन प्रातःकाल स्नानादि से निवृत्त होकर सोना, ताँबा, चाँदी, मिट्टी या गोबर से गणेश की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करनी चाहिए। पूजन के समय इक्कीस मोदकों का भोग लगाते हैं तथा हरित दुर्वा के इक्कीस अंकुर लेकर निम्न दस नामों पर चढ़ाने चाहिए-

१. गणपति, २. गौरी सुवन, ३. अघनाशक, ४. कुमार गुरु, ५. ईशपुत्र, ६. सर्व-सिद्धिप्रद, ७. विनायक, ८. विघ्नहरण, ९. इंभवक्त्राय और १०. मूषक वाहन संत।

तत्पश्चात् इक्कीस लड्डुओं में-से दस लड्डू ब्राह्मणों को दान देना चाहिए तथा ग्यारह लड्डू स्वयं खाने चाहिए।

कथा– एक समय की बात है कि महादेवजी स्नान करने के लिए कैलास से भोगावती गए। पीछे से स्नान करते हुए पार्वतीजी ने अपने शरीर के मैल से एक पुतला बनाया और उसे जल में डाल कर सजीव किया। मैल से बने हुए उस पुतले का नाम पार्वतीजी ने गणेश रखा और उसे आज्ञा दी कि तुम मुद्गर लेकर द्वार पर बैठ जाओ, किसी भी पुरुष को भीतर न आने देना।

भोगावती स्नान करके लौटने पर जब शिवजी पार्वती के पास भीतर जाने लगे तो उस बालक ने उनको रोक लिया। महादेवजी ने अपने इस अपमान से कुपित होकर बालक का सिर काट लिया और स्वयं भीतर चले गए। पार्वती ने शंकरजी की मुखाकृति देख कर समझा कि वे कदाचित भोजन में विलम्ब हो जाने के कारण क्रुद्ध हैं। इसलिए उन्होंने तुरन्त भोजन तैयार करके दो थाली में परोस दिया और महोदवजी को भोजन के लिए बुलाया। शंकरजी ने आकर देखा कि भोजन दो थाली में

परोसा गया है तो उन्होंने पार्वतीजी से पूछा कि यह दूसरा थाल किसके लिए है। पार्वती जी ने कहा कि यह मेरे पुत्र गणेश के लिए है, जो बाहर द्वार पर पहरा दे रहा है। यह सुनकर शिवजी ने कहा कि मैंने तो उसका सिर काट डाला है। शिवजी के बात से पार्वतीजी बहुत व्याकुल हुई और उन्होंने उनसे उसे जीवित करने की प्रार्थना की। पार्वती को प्रसन्न करने के लिए शिवजी ने एक हाथी के बच्चे का सिर काट कर बालक के धड़ से जोड़ दिया और उसे जीवित कर दिया। पार्वतीजी अपने पुत्र गणेश को पाकर बहुत प्रसन्न हुई। उन्होंने पति और पुत्र दोनों को प्रेमपूर्वक भोजन कराकर पीछे स्वयं भी भोजन किया।

ऋषि पंचमी

(भाद्रपद शुक्ल पंचमी)

यह व्रत स्त्री-पुरुष दोनों ही कर सकते हैं। जाने या अनजाने किये हुए पापों के प्रायश्चित की कामना से यह व्रत किया जाता है। व्रत आरम्भ करने से पहले निकट के किसी नदी या तालाब में स्नान करना चाहिए। फिर घर आकर वेदी बनाकर और उसे गोबर से लीपकर और अनेक रंगों से सर्वतोभद्र मण्डल बनाकर उस पर ताँबे या मिट्टी का घड़ा रखना चाहिए। उसी स्थान पर अष्टदल कमल बनाकर अरुन्धती और सप्त-ऋषियों की मूर्ति बनाकर विधिपूर्वक उनकी पूजा करनी चाहिए। पूजा के बाद ब्राह्मणों को भोजन और आचार्य को पूजा की सामग्री दे देनी चाहिए। इस व्रत की कथा ब्रह्मपुराण में इस प्रकार है—

कथा– प्राचीनकाल में सिताश्व नाम के एक राजा थे। उन्होंने एक बार ब्रह्माजी से पूछा कि पितामह! सब व्रतों में श्रेष्ठ और तुरंत फल देने वाले व्रत का वर्णन आप मुझसे कहिए।

ब्रह्माजी ने कहा- हे राजन् ! ऋषि-पंचमी का व्रत सब व्रतों में श्रेष्ठ और सब पापों को नष्ट करने वाला है। विदर्भ में उत्तंक नाम एक सदाचारी ब्राह्मण के घर में दो सन्तानें थीं- एक पुत्र एक कन्या। विवाह योग्य होने पर उसने समान कुल शील वाले गुणवान् वर के साथ कन्या का विवाह कर दिया। पर कुछ ही दिनों बाद वह कन्या विधवा हो गई। उसका दुःख से अत्यन्त दुःखी हो ब्राह्मण-दम्पति अपनी उस कन्या समेत गंगाजी के किनारे कुटिया बनाकर रहने लगे।

एक दिन सोती हुई कन्या के शरीर में अचानक कीड़े पड़ गए। अपनी यह दशा देखकर कन्या ने माता से अपना दुःख कहा। माता सुशीला ने जाकर पति से सब बातें कहीं और पूछा कि देव! मेरी साध्वी कन्या की यह गति होने का क्या कारण है?

उत्तक ने समाधि लगाकर इस घटना के कारण पर विचार किया और अपनी पत्नी को बतलाया कि पूर्वजन्म में यह कन्या ब्राह्मणी थी। इसने रजस्वला होते हुए भी घर के बर्तनों को छुआ तथा इस जन्म में भी और लोगों को ऋषि-पंचमी का व्रत करते हुए देखकर भी स्वयं नहीं किया। इसी कारण इसके शरीर में कीड़े पड़ गए हैं। धर्मशास्त्रों में लिखा है कि रजस्वला स्त्री पहले दिन चाण्डालिनी के समान, दूसरे दिन गृहघातिनी के समान और तीसरे दिन धोबिन के समान अपवित्र रहती है। फिर चौथे दिन दिन स्नान करके शुद्ध होती है। यदि यह शुद्ध मन से अब भी ऋषि - पंचमी का व्रत करेगी तो इसका दुःख छूट जायेगा और यह अगले जन्म में अटल सौभाग्य प्राप्त कर सकेगी।

पिता की आज्ञा से कन्या ने विधिपूर्वक ऋषि-पंचमी का व्रत किया और वह व्रत के प्रभाव से सारे दुःखों से मुक्त हो गई । अगले जन्म में उसने अटल सौभाग्य धन-धान्य और पुत्र प्राप्ति करके अक्षय सुख भोगा।

*

बलदेव छठ और सूर्यषष्ठी व्रत

(भाद्रपद शुक्ल षष्ठी)

सप्तमी युक्त भाद्रपद शुक्ल षष्ठी को स्नान, दान, जप और व्रत करने से अक्षय फल प्राप्त होता है। विशेषकर सूर्य-पूजन, गंगा दर्शन और पंचगव्य-प्राशन का बड़ा माहात्म्य है। पूजा की सामग्री में गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य मुख्य हैं।

इस दिन श्रीकृष्णजी के बड़े भाई बलदेवजी का जन्म हुआ था। इसलिए इसे देव छठ भी कहते हैं। इस दिन भगवान् बलदेवजी का पूजन किया जाता है और मंदिरों में विशेष सजावट की जाती है। बलदेवजी को मक्खन-मिश्री का भोग लगाया जाता है और मक्खन मिश्री ही प्रसाद के रूप में बाँटते और खाते हैं।

दुबड़ी सातें

दुबड़ी सातें

भांद्रपद मास की शुक्ल की सप्तमी दुबड़ी सातें के नाम से मनाई जाती है।

विधान– एक पटरे पर दुबड़ी मिट्टी से बना लें। उनको जल, दूध, चा्वल, रोली, आटा, घी, चीनी मिलाकर लोई बनाकर उनसे पूजें और दक्षिणा चढ़ावें। भीगा हुआ बाजरा भी चढ़ावें। मोंठ बाजरे का बायना निकालकर सास के पाँव छूकर देवें। फिर कहानी सुनकर ठंडा भोजन खाना चाहिए। यदि किसी की पुत्री का.विवाह उसी वर्ष हुआ हो तो उसका भी उजमन कराना चाहिए। उजमन में मोंठ बाजरे की १३ कुड़ी करके उसके ऊपर एक साड़ी, ब्लाऊज रखकर तथा एक रूपया रखकर सासूजी के पैर छूकर दे देवें।

कथा– एक साहुकार के सात बेटे थे। जब वह अपने बेटे की शादी करता तो बेटा मर जाता। इस प्रकार उसके सात में-से छः बेटे मृत्यु को प्राप्त हो चुके थे। एक दिन छोटे बेटे के विवाह की बात चली। शादी पक्की हो गई। इस लड़के की बुआ शादी में शामिल होने के लिए आ रही थी। रास्ते में उसे एक बुढ़िया मिली। बुढ़िया ने उससे पूछा- तुम कहाँ जा रही हो तो बुआ ने बताया कि मैं अपने भतीजे के विवाह में जा रही हूँ परन्तु मेरे छः भतीजे विवाह होते ही मर गये थे। यह सातवाँ है। यह सुनकर बुढ़िया बोली, वह तो घर से निकलते ही मर जायेगा। अगर बच गया तो रास्ते में एक पेड़ के नीचे दबकर मर जायेगा। अगर बच गया तो ससुराल में दरवाजा गिरने से दबकर मर जायेगा। अगर वहाँ से बच गया तो सातवें भाँवर पर सर्प के काटने से मर जायेगा। यह सुनकर बुआ बोली— माँ बचने का कोई उपाय है? तब बुढ़िया बोली, है तो सही परन्तु कठिन है। सुन तुम लड़के को पीछे के रास्ते से निकालना। पेड़ के नीचे लड़के को मत बैठने देना। ससुराल में भी पीछे के दरवाजे से लेकर जाना। भाँवरों के समय कच्चे करवे में कच्चा दूध और गरम लकड़ी लेकर बैठ जाना। जब भाँवर पड़े तो उसे डसने के लिए साँप आयेगा तो सर्प के आगे करवा रख देना और जब सर्प दूध पीने लगे तो सर्प के गले को गर्म लकड़ी से दाग देना। बाद में साँपिन आयेगी और साँप को माँगेगी। तब तुम उससे अपने छ: भतीजों का माँग लेना, वह उन्हें जीवित कर देगी। इस बात को किसी

को बताना नहीं, नहीं तो तुम और सुनने वाला दोनों मर जाओगे, लड़का भी मर जाएगा।

बुआ घर आ गई। जब बारात जाने लगी तो बुआ अपने भतीजे को पीछे दरवाजे से निकाल कर ले गई, तो घर का मुख्य दरवाजा गिर गया। बारात के साथ बुआ भी जाने की जिद्द करने लगी। सबने मना किया परन्तु वह नहीं मानी। रास्ते में बारात एक पेड़ के नीचे रुकने लगी तो बुआ ने अपने भतीजे को धूप में ही बैठाया। दुल्हा के बैठते ही पेड़ गिर गया। सब बाराती बुआ की प्रशंसा करने लगे। बारात वहाँ से लड़की के यहाँ पहुँची तो वहाँ भी बारात पीछे के दरवाजे से ले जाने के लिए बुआ ने कहा। बुआ की बात मान ली गई। पीछे के दरवाजे से जैसे ही वर अन्दर घुसा तो घर का मुख्य दरवाजा गिर गया। जब भाँवरें पड़ने लगीं तो बुआ ने एक कच्चे करवे में कच्चा दूध मँगवाया और भट्टी में से एक गरम लकड़ी मँगाकर अपने पास रख ली। जब सातवीं भाँवर पड़ने लगी तो सर्प आया। बुआ ने दूध से भरा करवा सर्प के आगे कर दिया, जब सर्प दूध पीने लगा तो बुआ ने सर्प के गले को जलती लकड़ी से दाग दिया। बाद में साँपिन आकर अपने सर्प को माँगने लगी तो बुआ ने कहा— पहले मेरे छः भतीजे को लाओ तब तुम्हें साँप मिलेगा। साँपिन ने उसके छहों भतीजे जीवित कर दिये और साँप को लेकर चली गई। यह देखकर सब बाराती बुआ की प्रशंसा करने लगी। बारात के घर वापिस आने पर बुआ ने सप्तमी के दिन दुबड़ी की पूजा की। इसी कारण इसको दुबड़ी सातें कहते है।

दुबड़ी मैया! जैसे तूने बुआ के सातों भतीजे दिये वैसे ही सबकी रक्षा करना।

राधाष्टमी

(भाद्रपद शुक्ल अष्टमी)

यह व्रत भाद्रपद के शुक्ल पक्ष की अष्टमी को किया जाता है। इस दिन राधाजी का जन्म हुआ था। श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के पन्द्रह दिन बाद अष्टमी को ही राधाजी का जन्मदिन मनाया जाता है। इस दिन राधाजी का विशेष पूजन और व्रत किया जाता है।

सर्वप्रथम राधाजी को पंचामृत से स्नान कराएँ, फिर उनका शृंगार करें। स्नानादि से शरीर शुद्ध करके मण्डप के भीतर मण्ड़प बनाकर उसके बीच में मिट्टी या ताँबे का शुद्ध बर्तन रखकर उस पर दो वस्त्रों से ढकी हुई राधारानी की स्वर्ण या किसी अन्य धातु की बनी हुई सुंदर मूर्ति स्थापित करनी चाहिए। इसके बाद मध्याह्न के समय श्रद्धा भक्तिपूर्वक राधाजी की पूजा करनी चाहिए। भोग लगाकर धूप, दीप, पुष्प आदि से आरती उतारनी चाहिए। यदि संभव हो तो उस दिन उपवास करना चाहिए। फिर दूसरे दिन सुवासिनी स्त्रियों को भोजन कराकर और मूर्ति को दान करने के बाद स्वयं भोजन करना चाहिए। इस प्रकार इस व्रत की समाप्ति करें।

इस प्रकार विधिपूर्वक व श्रद्धा से यह व्रत करने पर मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है एवं इस लोक और परलोक के सुख भोगता है। मनुष्य व्रत का रहस्य जान लेता हैं। राधा परिकरों में निवास करता है।

*

पद्मा एकादशी

आषाढ़ माह में शेष शैया पर निद्रा-मग्न भगवान् विष्णु भादों की शुक्ल पक्ष की एकादशी को करवट बदलते हैं। इस एकादशी को पद्मा एकादशी या परिवर्तनी एकादशी भी कहते हैं। इस दिन लक्ष्मी पूजन करना श्रेष्ठ माना जाता है।

*

वामन जयन्ती

(भाद्रपद शुक्ल द्वादशी)

इस दिन वामनावतार की जयन्ती मनाई जाती है। इस तिथि को यदि श्रवण नक्षत्र हो तो वह बड़ी पुण्यमयी समझी जाती है। इस दिन उपवास करना और वामन भगवान् की सोने की मूर्ति बनाकर विधिवत् पूजन करना चाहिए। वामनावतार की कथा इस प्रकार है—

कथा— प्राचीन काल में बलि नामक परम पराक्रमी राजा ने तीनों लोकों को जीतकर देवलोक को भी अपने अधीन कर लिया। इससे भयभीत होकर तमाम देवता विष्णु भगवान् के पास गये और उनसे प्रार्थना

की— हे भगवन् ! हम लोग भारी विपत्ति में पड़े हैं। दैत्यराज बलि ने देवलोक पर भी अपना अधिकार जमा लिया है। अब हमारे लिए रहने का स्थान न होने के कारण हम जहाँ-तहाँ भटकते फिरते हैं, हमारी रक्षा कीजिए।

भगवान् श्रीविष्णु ने उन सबको धैर्य बँधाया और कहा कि आप लोग निश्चिन्त रहिए। मैं आपकी रक्षा करने को सदैव तैयार रहता हूँ। बलि मेरा भक्त गुणवान और सदाचारी है। उसने बल से नहीं, बल्कि अपनी तपस्या से देवलोक प्राप्त किया है। किन्तु देवलोक पर उसका अधिकार मैं भी नहीं चाहता और साथ ही उसकी तपस्या भी क्षीण हो चली है। इसलिए आप लोग अदिति के पास जाकर प्रार्थना करें कि वह मेरी आराधना करें जिससे उसके पुत्र-रूप में पृथ्वी पर अवतार लेकर आप सबका दुःख दूर कर सकूँ।

देवताओं की प्रार्थना पर अदिति द्वारा भगवान् विष्णु की आराधना करने पर श्रीविष्णु ने उसके गर्भ से वामन रूप में अवतार धारण किया। अदिति के पति कश्यपजी ने शास्त्रसम्मत विधि से वामन के यज्ञोपवीत आदि सभी संस्कार सम्पन्न किये। भगवान् ने तो भूतल पर अवतार लेकर देवताओं का दुःख दूर करना था। कुछ दिनों बाद दण्ड-कमण्डलु, मृगचर्म आदि धारण कर बलि को छलने के आशय से भगवान् उसके यज्ञ-मण्डप में पहुँचे।

बलि ने अपूर्व तेजस्वी वामन-ब्राह्मण को देखा तो बहुत प्रसन्न हुआ। उसने अपने भाग्य की भारी सराहना करके उनका विधिवत् सत्कार किया। फिर बलि ने कहा— हे विप्रदेव ! आपके आगमन से मैं अपने को बड़ा सौभाग्यवान् समझ रहा हूँ। आप मुझे कोई सेवा बतलाइए जिससे मैं स्वयं को कृतार्थ कर सकूँ।

वामन ने कहा— राजन् ! मैं तो गरीब ब्राह्मण हूँ। मेरा संसार के भोग-विलास की किसी वस्तु से कोई सम्बन्ध नहीं है। यदि तुम अगर दे सकते हो तो मुझे केवल तीन पग पृथ्वी नाप दो। मैं उसी में अपना आश्रम बनाकर पठन-पाठन करूँगा।

बलि ने उन्हें तीन पग भूमि देने का संकल्प कर लिया। उनके गुरु शुक्राचार्यजी ने उन्हें रोका भी, किन्तु वे न माने।

भगवान् वामन ने अपने दो पगों से आकाश-पाताल को नाप कर तीसरे पग में बलि का शरीर भी नाप लिया और उसे पाताल में भेज दिया। इस प्रकार देवताओं का संकट दूर हुआ और प्रसन्नापूर्वक देवलोक में रहने लगे।

गौ-गिरिराज व्रत

भाद्रपद शुक्ल त्रयोदशी

इस व्रत में गौओं की और भगवान् लक्ष्मी-नारायण की पूजा की जाती है। इस दिन व्रत-पूजन और गौदान करने वाला अनेक राजसूय और अश्वमेघ यज्ञों का पुण्य प्राप्त करता है।

अनन्त चतुर्दशी व्रत

भाद्रपद शुक्ल चतुर्दशी

यह व्रत भाद्रपद शुक्ल चतुर्दशी को किया जाता हैं। इनमें उदया तिथि ली जाती है। पूर्णिमा का सहयोग होने से इसका बल बढ़ जाता है। यदि मध्याह्न तक चतुर्दशी रहे तो और भी अच्छा है। व्रती को चाहिए कि प्रातःकाल नित्यक्रिया आदि से निवृत्त होकर शुद्ध स्थान में चौकी पर मण्डप बनाकर उसमें भगवान् की साक्षात् या कुशा से बनाई हुई सात कणों वाली शेष स्वरूप अनन्त की मूर्ति स्थापित करे। उसके आगे कच्चे डोरे को हल्दी में रंग कर बनाया हुआ चौदह गांठ का अनन्त रखे और गन्ध, अक्षत, पुष्प,धूप, दीप, नैवेद्य आदि से पूजन करें। तत्पश्चात् अनन्त देव का ध्यान करके शुद्ध अनन्त को अपनी दाहिनी भुजा में बाँध लें। यह डोरा अनन्त फल देने वाला और भगवान विष्णु को प्रसन्न करने वाला होता है।

भगवान् सत्यनारायण के समान ही अनन्तदेव भी भगवान् विष्णु का ही एक अन्य नाम है। यही कारण है कि इस दिन सत्यनारायण का व्रत और कथा का आयोजन प्रायः ही किया जाता है, जिसमें सत्यनारायण की कथा के साथ-साथ अनन्त देव की कथा भी सुनी जाती है।

उमा-महेश्वर व्रत

(भाद्रपद पूर्णिमा)

अन्य पूर्णिमाओं को तो भगवान् विष्णु की पूजा और श्रीसत्यनारायण की कथा का विशेष महत्त्व है। परन्तु अनन्त चतुर्दशी के दूसरे दिन भादों की इस पूर्णिमा को भगवान् महेश्वर और उमा की पूजा की जाती है।

इस दिन प्रातः स्नानादि करके भगवान् शंकर एवं पार्वती की मूर्ति को स्नान क़राएँ। फिर बेल पत्र, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि से पूजन कर प्रार्थना करें। रात्रि में मंदिर मूर्ति के समीप जागरण करें। इस प्रकार यह व्रत १५ वर्ष तक करना चाहिए। पूजन के बाद यथाशक्ति ब्राह्मण को भोजन कराकर दक्षिणा देनी चाहिए।

पन्द्रह वर्ष पूरे होने पर उद्यापन करना चाहिए। उद्यापन में विधि-विधान से भगवान् शंकरजी की पूजा, हवन व आरती करके ब्राह्मणों को भोजन कराएँ व यथाशक्ति दक्षिणा देकर विदा करें।

इस व्रत को करने वाले पर भगवान् शंकर की विशेष कृपा बनी रहती है।

कथा- एक बार महर्षि दुर्वासा, शंकरजी के दर्शन करके लौट रहे थे। मार्ग में उनकी भेंट विष्णुजी से हो गई। महर्षि दुर्वासा ने शिवजी के द्वारा दी गई बिल्वपत्र की माला उन्हें भेंट दे दी। भगवान् विष्णु ने वह माला अपने वाहन गरुड़ के गले में डाल दी।

इससे दुर्वासा ऋषि ने क्रोधित होकर विष्णु को पथ-भ्रष्ट होने का शाप दे दिया। उन्होंने कहा—हे विष्णु ! तुमने शंकर का अपमान किया है, तुम्हारे पास से लक्ष्मी चली जाएगी, क्षीर सागर से भी हाथ धो बैठोगे तथा शेषनाग भी सहायता न देंगे।

यह सुनकर भगवान विष्णु ने दुर्वासा को प्रणाम कर शाप मुक्त होने का उपाय पूछा। ऋषि ने कहा— उमा-महेश्वर का व्रत करो, तभी सब वस्तुएँ मिलेगी। तब भगवान् विष्णु ने वैसा ही किया। व्रत के प्रभाव से समस्त शापित वस्तुएँ भगवान् विष्णु को पुनः मिल गईं।

गाज का व्रत

यह व्रत भाद्रपद मास में किया जाता है। यदि किसी के यहाँ पुत्र पैदा हुआ हो या पुत्र का विवाह हुआ हो तो उसी वर्ष भाद्रपद मास में किसी शुभ दिन को देखकर गाज का व्रत कर उजमन करना चाहिए।

विधान– सात जगह चार-चार पूड़ी और हलवा रखकर उस पर कपड़ा व रुपये रख दें। एक जल के लोटे पर सतिया बनाकर ७ दाने गेहूँ के हाथ में लेकर गाज की कहानी सुनें। इसके बाद सारी पूड़ी ओढ़नी पर रखकर सासुजी के पैर छूकर दे दें। बाद में लोटे के जल से भास्कर भगवान् को अर्घ्य देवें। इसके बाद सात ब्राह्मणियों को भोजन कराकर दक्षिणा देकर स्वयं भोजन करें।

कथा– पुराने समय में एक राजा के कोई सन्तान न थी। राजा रानी संतान के न होने से बड़े दुःखी थे। एक दिन रानी ने गाज माता से प्रार्थना की कि अगर मेरे गर्भ रह जाये तो मैं तुम्हारे हलवे की कड़ाही करूँगी। इसके बाद रानी गर्भवती हो गई। राजा के घर पुत्र पैदा हुआ। परन्तु रानी गाज माता की कड़ाही करना भूल गई। इस पर गाज क्रुद्ध हो गई। एक दिन रानी का बेटा पालने में सो रहा था। आँधी पालने सहित लड़के को उड़ा ले गई और एक भील-भीलनी के घर पालने को रख दिया। जब भील-भीलनी जंगल से घर आये तो उन्हें अपने घर में एक लड़के को पालने में सोता पाया। भील-भीलनी को कोई संतान न थी। भगवान् का प्रसाद समझकर भील दम्पत्ति बहुत प्रसन्न हुए।

एक रजकर (धोबी) राजा और भील दोनों के कपड़े धोता था। धोबी राजा के महल में कपड़े देने गया तो महल में शोर हो रहा था कि गाज माता लड़के को उठाकर ले गईं। धोबी ने बताया कि मैंने आज एक लड़के को भीलनी के घर में पालने में सोते देखा है। राजा ने भील दम्पत्ति को बुलाया कि हम गाज माता का व्रत करते हैं। गाज माता ने ही हमें बेटा दिया है। यह सुनकर रानी को अपनी भूल का एहसास हो गया। रानी गाज माता से प्रार्थना करने लगी। मेरी भूल के कारण ऐसा हो गया और पश्चाताप करने लगी। हे गाज माता मेरी भूल क्षमा कर दो। मैं आपकी कड़ाही अवश्य करूँगी। मेरा लड़का ला दो। गाज माता ने प्रसन्न होकर उसका लड़का ला दिया तथा भील दम्पत्ति का घर भी सम्पन्न हो गया तथा एक पुत्र भी प्राप्त हो गया।

तब रानी ने गाज माता का शृंगार किया और उसकी शुद्ध घी के हलवे की कड़ाही की।

हे गाज माता ! जैसे तुमने भील दम्पत्ति को धन दौलत और पुत्र दिया तथा रानी का पुत्र वापस ला दिया उसी तरह हे माता ! सबको धन और सन्तान देकर सम्पन्न रखना।

*

आश्विन मास के व्रत एवं त्यौहार

पितृपक्ष (श्राद्ध) महालया या कनागत

भादो की पूर्णिमा के दूसरे दिन से प्रारम्भ हो जाता है। आश्विन अर्थात् क्वार मास का कृष्ण पक्ष। आश्विन कृष्ण प्रतिपदा से अमावस्या के दिन तक ये पन्द्रह दिन हमारे यहाँ पितृपक्ष अर्थात् श्राद्धों के दिन अथवा कनागत कहलाते हैं। इस पूरे पक्ष में कोई शुभ कार्य नहीं किया जाता है और न ही नए वस्त्र बनवाए अथवा पहने जाते हैं। अपने मृतक पूर्वजों को याद करने और उनकी मृत्यु की तिथि को उनका श्राद्ध करने की परम्परा वैदिक काल से ही चली आ रही है।

मृतक माता-पिता, बाबा-दादी और अन्य परिजनों के श्राद्ध उस तिथि को किए जाते हैं, जिस तिथि को मृतक का दाह-संस्कार हुआ था। वर्ष के किसी भी मास के किसी भी पक्ष में मृत्यु हुई हो, श्राद्ध इन पन्द्रह दिनों में ही उस तिथि को किया जाता है। मृतक पुरुष के हेतु ब्राह्मण को भोजन कराने के बाद उन्हें श्रद्धा और सामर्थ्य के अनुसार वस्त्र तथा दक्षिणा दी जाती है तो महिला के लिए किसी ब्राह्मणी को भोजन कराकर साड़ी आदि वस्त्र दिया जाता है। प्रायः घर का मुखिया या सबसे बड़ा पुरुष ही करता है यह सभी कार्य।

ब्रह्मपुराण में लिखा है कि आश्विन मास के कृष्ण पक्ष में यमराज यमपुरी से पितरों को मुक्त कर देते हैं और वे अपनी संतानों तथा वंशजों से पिण्ड दान लेने के लिए भूलोक में आ जाते हैं। सूर्य के कन्या राशि में आने पर वे यहाँ आते हैं और अमावस्या के दिन तक घर के द्वार पर ठहरते हैं। सूर्य के कन्या राशि में आने के कारण ही आश्विन मास के कृष्ण पक्ष का नाम कनागत अर्थात् कन्या+गत पड़ गया है। जिन लोगों के माता-पिता स्वर्गवासी हो गए हैं उन्हें चाहिए कि वे इस पक्ष में प्रातःकाल उठकर किसी नदी में स्नान करके तिल, अक्षत और कुश हाथ में लेकर सूर्य के सामने खड़े होकर वैदिक मंत्रों द्वारा पितरों की जलांजलि दें। यह कार्य पितृ-पक्ष में प्रतिदिन होना चाहिए। पितरों को मृत्यु-तिथि को श्राद्ध करके ब्राह्मणों को भोजन करा, वस्त्र और दक्षिणा देनी चाहिए। इस पक्ष

में गया में श्राद्ध करने का विशेष महत्त्व है।

श्राद्ध पक्ष अमावस्या को पूर्ण हो जाता है। परन्तु श्राद्धकर्म एवं तान्त्रिक दृष्टिकोण से इस अमावस्या का बहुत अधिक महत्त्व है इस अमावस्या का। भूले-भटके पितरों की तृप्ति के लिए ब्राह्मण को इस दिन भोजन कराया जाता है। यदि किसी कारणवश किसी तिथि विशेष को श्राद्धकर्म नहीं हो पाता तब उन पित्तरों का श्राद्ध भी इस दिन किया जा सकता है। इस अमावस्या के दूसरे दिन से शारदीय नवरात्र प्रारम्भ हो जाते है। यही कारण है कि माँ दुर्गा के प्रचण्ड रूपों के आराधक और तन्त्र साधना की सिद्धि करने वाले साधक इस रात्रि में विशेष साधना भी करते हैं। यही कारण है कि आश्विन मास की इस अमावस्या को महालया और पितृ-विसर्जन अमावस्या भी कहा जाता है।

*

साँझी

साँझी का त्यौहार आश्विन लगते ही पूर्णमासी से अमावस्या तक मनाया जाता है। कुँवारी लड़कियाँ घरों में साँझी का पूजन करती है। दीवार पर गोबर से साँझा-साँझी की मूर्ति बनाकर उसका भोग लगाते हैं। पन्द्रहवें दिन अमावस्या को गोबर से विशाल कोट बनाकर पूजन करना चाहिए। जिस लड़की की शादी हो जाए तो वह शादी के वर्ष में ही १६ कोटों की १६ घर जाकर पूजा करे, भोग लगाये। इससे लड़कियों की सभी कामनाएँ पूर्ण होती है।

साँझी गीत

साँझा लाल बनरा को चाले रे बनरा टेसुरा-२
बनरी से क्या क्या लाये रे। बनरा टेसुरा....
माया कू हँसला, बहिन कू ता कठला, तो
गोरी धन कारी कंठी लाये रे। बनरा टेसुरा....
माया वाकी हँसे, बहिन वाकी खिलकै, तो
गोरी धन रूठी मटकी डोले रें। बनरा टेसुरा....
माया पैसे छीनौ बहिन पैसे झपटी तो

गोरी धन लै पहरायो रे। बनरा टेसुरा....
माया वाकी रोवे बहिन वाकी सुबके, तो
गोरी धन फूली न समाये रे। बनरा टेसुरा....

*

महालक्ष्मी व्रत

यह व्रत राधा अष्टमी से प्रारम्भ होकर आश्विन मास की कृष्ण पक्ष की अष्टमी तक चलता है। इस दिन लक्ष्मीजी के पूजन का विधान है।

विधि– लक्ष्मीजी की मूर्ति को स्नान कराकर नये वस्त्र पहनाये जाते हैं। फिर लक्ष्मीजी को भोग लगाकर और आचमन कराकर फूल, दीप, धूप, चन्दन आदि से पूजनकर आरती करते हैं। आरती के बाद प्रसाद को वितरित करते हैं। रात्रि को चन्द्रमा के निकलने पर उसे अर्घ्य देकर स्वयं भोजन करें। इस व्रत के करने से धन-धान्य की वृद्धि होती है और सुख-सम्पत्ति आती है।

कथा– किसी एक गाँव में एक गरीब ब्राह्मण रहता था। वह नियम पूर्वक जंगल में विष्णुजी के मन्दिर में जाकर पूजा किया करता था। उसकी पूजा को देखकर भगवान् ने उस पर प्रसन्न होकर उसे साक्षात् दर्शन दिये। और भगवान् ने उसे धन प्राप्त करने का उपाय बताया कि मन्दिर के सामने एक स्त्री उपले थापने आती है। सुबह आकर तुम उसे पकड़कर अपने घर निवास करने का आग्रह करना और तब तक न छोड़ना जब तक वह तुम्हारे साथ चलकर रहने को तैयार न हो। वह मेरी स्त्री लक्ष्मी है। तुम्हारे घर उसके आते ही तुम्हारा घर धन-धान्य से पूर्ण हो जायेगा। इतना कहकर भगवान विष्णु अन्तर्ध्यान हो गये और ब्राह्मण अपने घर चला आया।

दूसरे दिन वह सुबह चार बजे ही मन्दिर के सामने जाकर बैठ गया। लक्ष्मीजी अपने उपले थापने आयीं तो उनको ब्राह्मण ने पकड़ लिया और अपने घर चलकर रहने की प्रार्थना करने लगा। लक्ष्मीजी समझ गई कि यह सब विष्णुजी की आज्ञा है। तब लक्ष्मीजी बोली तुम अपनी पत्नी सहित मेरा सोलह दिन तक व्रत करो फिर सोलहवें दिन रात्रि को चन्द्रमा

की पूजा करो और उत्तर दिशा की तरफ मुझे पुकारना। तब तुम्हारा मनोरथ पूरा हो जाएगा। ब्राह्मण ने ऐसा ही किया। जब रात्रि को चन्द्रमा की पूजा करके उत्तर दिशा में आवाज लगाई तो लक्ष्मीजी ने अपना वचन पूरा किया।

आवाहन मंत्र–

'सिन्धुसुता विष्णुप्रिय या कमलन रूप सुहाय।
वेगि पधारो मात तुम, बैठा आस लगाय।।

इस प्रकार यह महालक्ष्मी व्रत के नाम से प्रसिद्ध है। हे माँ लक्ष्मी! जैसे आप ब्राह्मण के घर आयीं वैसे सबसे घर आना।

*

जीवित् पुत्रिका व्रत

आश्विन मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी को जीवित् पुत्रिका के रूप में मनाते हैं। इस व्रत को करने से पुत्र शोक नहीं होता है। इस व्रत का स्त्री समाज में बहुत ही महत्त्व है। इस व्रत में सूर्य नारायण की पूजा की जाती है।

विधान– स्वयं स्नान करके भगवान् सूर्य नारायण की प्रतिमा को स्नान करायें। धूप, दीप आदि से आरती करें एवं भोग लगावें। इस दिन बाजरा से मिश्रित पदार्थ भोग में लगाये जाते हैं।

कथा– महाभारत युद्ध के पश्चात् पाण्डवों की अनुपस्थिति में कृतवर्मा और कृपाचार्य को साथ लेकर अश्वत्थामा ने पाण्डवों के शिविर में प्रवेश किया। अश्वत्थामा ने द्रोपदी के पुत्रों को पाण्डव समझकर उनके सिर काट दिये। दूसरे दिन अर्जुन श्रीकृष्ण भगवान् को साथ लेकर अश्वत्माथा की खोज में निकल पड़े और उसे बन्दी बना लिया। धर्मराज युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण के परामर्श पर उसके सिर की मणि लेकर तथा केश मूंडकर उसे बन्धन से मुक्त कर दिया गया।

अश्वत्थामा ने अपमान का बदला लेने के लिए अमोघ अस्त्र का प्रयोग पाण्डवों के वंशधर उत्तरा के गर्भ पर कर दिया। पाण्डव उस अस्त्र का प्रतिकार नहीं जाते थे। उन्होंने श्रीकृष्ण से उत्तरा के गर्भ-रक्षा की

प्रार्थना की। भगवान् श्रीकृष्ण ने सूक्ष्म रूप से उत्तरा के गर्भ में प्रवेश करके उसकी रक्षा की। किन्तु उत्तरा के गर्भ से उत्पन्न हुआ बालक मृत प्राप्त हुआ। भगवान् ने उसे प्राण दान दिया। वही पुत्र पाण्डव वंश का भावी कर्णधार परीक्षित हुआ। परीक्षत को इस प्रकार जीवनदान मिलने के कारण इस व्रत का नाम जीवित्पुत्रिका पड़ा।

*

आशा-भगवती व्रत

(अष्टमी से अमावस्या तक)

संतान प्राप्ति की आकांक्षा से किया जाता है यह विशिष्ट व्रत। जीवत्पुत्रिका व्रत के समान ही इस व्रत का प्रारम्भ भी क्वार मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी से प्रारम्भ करके आमावस्या तक आठ दिन तक पूजन के बाद आठवें दिन बायना निकालकर पूर्ण किया जाता है। यह व्रत आठ वर्ष व्रत करने के पश्चात् इसका उद्यापन किया जाता है।

व्रत करने वाली स्त्री को चाहिए कि वह नहा-धोकर गोबर मिट्टी से लीपकर अष्टकोणीय अर्थात् आठ कोने का चौका बनाए। इस पर मेंहदी, रोली और काजल की आठ-आठ बिन्दियाँ लगाए। आठ सुहाली अर्थात् बड़े आकार की फीकी मट्ठियाँ रखकर उन पर दक्षिणा रखे और दीपक जलाकर कहानी सुने। आठ दिन तक इस प्रकार नियमित रूप से करें। आठवें दिन आठ सुहाली का बायना निकालकर सासजी को दें और आठ सुहाली स्वयं खाएँ।

आठ वर्ष तक यह व्रत करने के बाद इसका उद्यापन किया जाता है। उस समय उपरोक्त सम्पूर्ण पूजा के साथ-साथ आठ सुहाग पिटारियाँ भी बनाई जाती हैं। प्रत्येक पिटारी में सुहाग की सभी वस्तुएँ और आठ-आठ वस्तुएँ रखे। आठ सुहागिन ब्राह्मणियों को भोजन कराकर एक-एक पिटारी और दक्षिणा उन्हें दी जाती है। सास के लिए अलग से एक सुहाग पिटारी बनाकर वस्त्रों सहित उन्हें पैर छूकर दी जाती है। ऐसी मान्यता है कि जिन स्त्रियों को संतान नहीं होती, इस व्रत को करने से उन महिलाओं को भी सुन्दर पुत्र उत्पन्न हो जाते हैं। इस व्रत की कहानी इस प्रकार है-

कथा– एक बार भगवान् शिव और माता पार्वतीजी जोगी-जोगिन का वेश धारण करके भ्रमण करने आए। जब वे जा रहे तो उन्होंने देखा कि एक साहूकार बहुत ही उदास बैठा दु:खी हो रहा है। शंकरजी ने साहूकार से पूछा- सेठ उदास क्यों हो? साहूकार ने कहा— महाराज क्या करूँ, बहुतेरे जप-तप और दान-पुण्य किए परन्तु मेरे कोई संतान ही नहीं। आप ही कोई उपाय बतलाइए। योगी वेशधारी भगवान् शिव ने कहा- सेठ हम तो माँगते-खाते फिरने वाले जोगी हैं। हमारे पास संतान कहाँ। इतना कहकर शिव-पार्वती आगे चल पड़े। तब पार्वतीजी ने कहा— महाराज इसे कम-से-कम एक पुत्र तो दे ही देते। शंकरजी ने कहा— इसके भाग्य में है ही नहीं तब कहाँ से दे दूँ।

अभी वे कुछ दूर ही चले थे कि शिवजी और पार्वतीजी ने देखा कि कुछ लोग एक गाय को मार-मारकर गावँ से बाहर निकाल रहे है। शिवजी बोले— भाइयों इस गाय को क्यों मार रहे हो। लोगों ने कहा— क्या करें इस गाय का? यह न तो बच्चा देती है और न ही दूध। बाँझ है इसलिए गाँव से निकाल रहे हैं। यह सुनकर भी शिवजी रुके नहीं, पार्वतीजी के साथ तीर्थों में घूमते हुए अयोध्या चले गए। कुछ समय अयोध्या में रहने के बाद उसी मार्ग से जोगी और जोगिन के भेष में भगवान् शिव और पार्वती वापस कैलाश पर्वत की ओर चल पड़े।

वापस लौटते समय भगवान शिव और पार्वतीजी ने देखा कि वही गाय एक ब्राह्मण के यहाँ बंधी हुई है। नीचे एक सफेद रंग का बछड़ा दूध पी रहा है। शिवजी ने पूछा— यह गाय अब दूध देने लग गई क्या? ब्राह्मण बोला— हाँ महाराज, अब इसकी कोख चालू हो गई है। शिवजी आगे चले। उसी बनिये के दरवाजे पर पहुँचे। साहूकार अपने बच्चे को गोद में लिए खिला रहा था। शिवजी ने पूछा— सेठ यह तेरा लड़का है क्या? साहूकार बोला— महाराज यह आप ही का है। आप के प्रताप से यह हुआ है। शिवजी ने पूछा— कैसे हुआ? साहूकार ने कहा हमारे गांव में महिलायें आशा भगवती का व्रत करती हैं। मेरी स्त्री भी उनसे कहानी और व्रत की विधि सीख आई, घर आकर व्रत किया, कहानी सुनी और उससे लड़का हुआ। शिवजी बोले— यह बात तो ठीक है पर तुम्हारे गाँव में उस गऊ के बछड़ा कैसे हुआ? साहूकार ने कहा जब स्त्रियाँ व्रत करती

थीं तो बचा-खुचा बायना उस गऊ को भी दे देती थीं, उसी से इसकी भी कोख चालू हो गई।

शिव-पार्वती आगे चले तो पार्वतीजी बोली— महाराज यह व्रत मैं भी करूँगी। शिवजी बोले— आपके पास किस बात की कमी है। पार्वतीजी ने कहा मेरे भी संतान नहीं है। शिवजी बोले— जरूर करना। पार्वतीजी ने भी व्रत किया और गणेश तथा कार्तिकेय दो पुत्र हुए। पार्वतीजी ने दुनिया को इस व्रत महिमा दिखाने के लिए ही यह व्रत किया था। हे आशा भगवती जिस प्रकार साहूकार पर प्रसन्न हुईं वैसे ही सब पर प्रसन्न होवें। हे माता आशा भगवती सबकी कोख हरी करना कोई निपुत्री न रहे।

मातृ नवमी

(आश्विन कृष्ण नवमी)

आश्विन मास के कृष्ण पक्ष की नवमी को मातृ नवमी कहा जाता है। जिस प्रकार पुत्र अपने पिता, पितामह आदि पूर्वजों के निमित्त पितृपक्ष में तर्पण करते हैं, इसी प्रकार से पुत्रवधू भी अपनी मृतक सास, माता आदि के निमित्त पितृपक्ष की प्रतिपदा से लेकर नवमी तक तर्पण कार्य किया करती हैं। नवमी के दिन दिवंगत मां तथा सास की आत्मा की शांति के लिए ब्राह्मणी को दानादि देती हैं। मातृ नवमी को ही माता के श्राद्ध का शास्त्रीय विधान है। इस तिथि को सधवा अथवा पुत्रवती स्त्रियों को भोजन कराना पुण्यदायी माना गया है।

*

इन्दिरा एकादशी

(आश्विन कृष्ण एकादशी)

पितृपक्ष की यह एकादशी इन्दिरा एकादशी कहलाती है। अन्य एकादशियों के व्रत के पुण्य से तो व्रत करने वाले को सर्वसुख और अन्त में मोक्ष की प्राप्ति होती है, परन्तु इस एकादशी का व्रत करने वाले के तो सात पीढ़ियों तक के पितर तर जाते हैं। इन्दिरा एकादशी व्रत करने वाला

स्वयं तो मोक्ष प्राप्त करता है, वह अपने सभी पितरों का उद्धार करके उन्हें भी दिव्य लोकों में प्रवेश का अधिकारी बना देता है। इस एकादशी के व्रत और पूजा का विधान वही है जो अन्य एकादशियों का है। अन्तर मात्र यह है कि इस दिन भगवान् सालिग्राम की पूजा की जाती है और पूजा तथा प्रसाद में तुलसी दल अर्थात् तुलसी की पत्तियों का प्रयोग अनिवार्य रूप से किया जाता है।

कथा— प्राचीन काल में महिष्मती नगर पर राजा इन्द्रसेन राज्य करते थे। राजा के माता-पिता दिवंगत हो चुके थे। एक रात उन्हें स्वप्न दिखाई दिया कि उसके माता-पिता नरक में पड़े हुए अपार कष्ट भोग रहे हैं। अपने पितरों की दुर्दशा से राजा बहुत चिन्तित हुआ। उसने विद्वान् ब्राह्मणों को बुलाकर उन्हें स्वप्न की बात बताई। सब विद्वानों ने एकमत होकर कहा— हे राजन् ! यदि आप सपत्नीक इन्दिरा एकादशी का व्रत करें तो आपके पितरों की मुक्ति हो जाएगी। राजा ने उनकी बात मान सपत्नीक इन्दिरा एकादशी का व्रत किया। रात्रि में राजा जब मंदिर में सो रहा था, तभी भगवान् ने उसे दर्शन देकर कहा—राजन्! तुम्हारे व्रत के प्रभाव से तुम्हारे सभी पितर स्वर्ग पहुँच गये हैं।

पितृ-विसर्जन

(आश्विन कृष्ण अमावस्या)

आश्विन मास के कृष्ण पक्ष की अमावस्या को पितृ-विसर्जन अमावस्या कहा जाता है। इस दिन पितर लोक से आए हुए पितृश्वर महालय भोजन से तृप्त हो अपने लोक को जाते हैं। इस दिन ब्राह्मण भोजन तथा दानादि से पितर तृप्त होते हैं। जाते समय वे अपने पुत्र, पौत्रों पर आशीर्वाद रूपी अमृत की वर्षा करते हैं।

इस दिन स्त्रियाँ संध्या समय दीपक जलाने की बेला में पूड़ी, मिष्ठान अपने दरवाजों पर रखती है। जिसका तात्पर्य यह होता है कि पितर जाते समय भूखे न जाएँ। इसी प्रकार दीपक जलाकर पितरों का मार्ग आलोकित किया जाता है। श्राद्ध पक्ष अमावस्या को ही पूर्ण हो जाते हैं।

इस अमावस्या का श्राद्धकर्म और तान्त्रिक दृष्टिकोण से बहुत अधिक

महत्त्व है। भूले-भटके पितरों के नाम का ब्राह्मण तो इस दिन जिमाया ही जाता है, साथ ही यदि किसी कारणवश किसी तिथि विशेष को श्राद्धकर्म नहीं हो पाता,तब उन पितरों का श्राद्ध भी इस दिन किया जा सकता है। इस अमावस्या के दूसरे दिन से शारदीय नवरात्र प्रारम्भ हो जाते है। यही कारण है कि माँ दुर्गा के प्रचण्ड रूपों के आराधक और तंत्र साधना करने वाले इस अमावस्या की रात्रि को विशिष्ट साधनाएँ भी करते हैं।

यही कारण है कि आश्विन मास की अमावस्या को पितृ-विसर्जन अमावस्या भी कहा जाता है।

*

नवरात्र आरम्भ

आश्विन मास की शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से नवमी तक को नवरात्र करते हैं।

कलश स्थापन- दुर्गापूजन सामग्री– गंगाजल, रोली, मौली, पान, सुपारी, धूपबत्ती, घी का दीपक, फल, फूल की माला, विल्वपत्र, चावल, केले का खम्भा, वन्दनवार के वास्ते आम के पत्ते, चन्दन, घट (कलश) नारियल, हल्दी की गाँठ, पंचरत्न, लाल वस्त्र, पूर्ण पात्र, गंगा की मृत्तिका, जौ, बताशा, सुगन्धित तेल, सिन्दूर, कपूर, पंच सुगन्ध, नैवेद्य के वास्ते चना, खीर, हलुआ; फल इत्यादि, मधु, चीनी, गाय का गोबर, गौ मूत्र, गौ दूध, गौ दही, गौ घृत, दुर्गा जी की स्वर्ण मूर्ति अथवा मृत्तिका की प्रतिमा, कुमारी पूजन के लिए वस्त्र, आभूषण तथा नैवेद्यादि, अष्टमी में ज्योति पूजन के वास्ते उपरोक्त सामग्री। डाभ, घृत, गंगाजल।

श्रीदुर्गा नवरात्र व्रत

विधि– इस व्रत में उपवास या फलाहार आदि का कोई विशेष नियम नहीं। प्रातःकाल उठकर स्नान करके, मन्दिर में जाकर या घर पर ही नवरात्र में दुर्गाजी का ध्यान करके यह कथा पढ़नी चाहिए। कन्याओं के लिए यह व्रत विशेष फलदायक है। श्रीजगदम्बाजी की कृपा से सब विघ्न दूर होते हैं। कथा के अन्त में बारम्बार दुर्गा माता तेरी सदा जय हो का उच्चारण करें।

नवरात्र पूजन (दुर्गाअष्टमी)
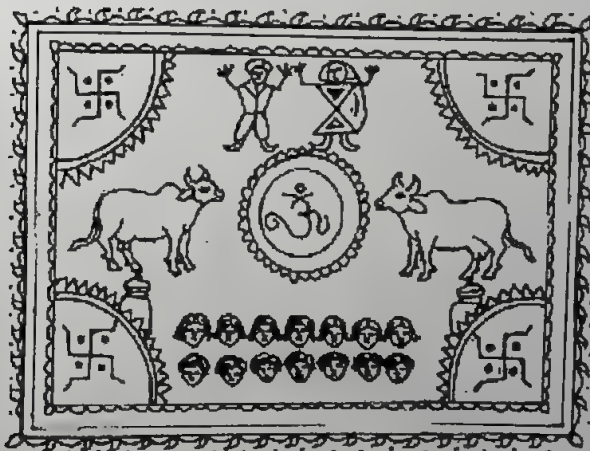
कथा– एक बार गुरुदेव बृहस्पति ने ब्रह्माजी से पूछा— हे भगवन्! नवरात्र व्रत करने की विधि एवं उसके फल को मैं आपके मुख से सुनना चाहता हूँ।

बृहस्पति का प्रश्न सुनकर ब्रह्माजी ने कहा—हे बृहस्पते ! पूर्वकाल में जिसने इस व्रत को किया था उसका पुनीत वृत्तान्त मैं तुम्हें सुनाता हूँ। मनोहर नामक नगर में एक अनाथ नाम का ब्राह्मण रहता था। वह भगवती दुर्गा का परम भक्त था। उसके सुमति नाम की एक रूपवती कन्या हुई। पिता के घर में वह कन्या दिनों दिन वृद्धि को प्राप्त होने लगी। जब वह कुछ समझदार हो गयी, तो वह भी अपने पिता के साथ देवी-पूजा में प्रतिदिन भाग लेने लगी।

एक दिन वह अपनी सहेलियों के साथ खेलने के कारण पूजा में सम्मिलित नहीं हुई। उसके इस व्यवहार से क्षुब्ध होकर उसे पिता ने बहुत डाँटा-फटकारा और कहा कि, मैं तेरा विवाह किसी कुष्ठी और निर्धन व्यक्ति के साथ कर दूँगा। पिता की बात से विचलित न होकर उस कन्या ने निर्भयता पूर्वक उत्तर दिया—पिताजी, जो व्यक्ति जैसा कर्म करता है उसे फल भी वैसा ही मिलता है। अतः अपने भाग्य और कर्म में मेरा दृढ़ विश्वास है।

पुत्री का प्रत्युत्तर सुनकर उसका पिता अत्यन्त कुपित हुआ और उसने अपने निश्चय के अनुसार पुत्री का विवाह कुष्ठी और निर्धन मनुष्य के साथ कर दिया।

इस प्रकार से पिता के कटु वचनों एवं व्यवहार को सुनकर सुमति अपने मन में विचार करने लगी कि—अहो ! मेरा बड़ा दुर्भाग्य है जिससे मुझे ऐसा पति मिला। इस तरह अपने दुःख का विचार करती हुई वह सुमति अपने पति के साथ वन चली गई और भयानक वन में कुशायुक्त उस स्थान पर उन्होंने वह रात बड़े कष्ट से व्यतीत की। उस गरीब बालिका की ऐसी दशा देखकर भगवती पूर्व पुण्य के प्रभाव से प्रकट होकर सुमति से कहने लगी कि हे दीन ब्राह्मणी ! मैं तुम पर प्रसन्न हूँ, तुम जो चाहो वरदान माँग सकती हो। मैं प्रसन्न होने पर मनवांछित फल देने वाली हूँ। इस प्रकार भगवती दुर्गा का वचन सुनकर ब्राह्मणी कहने लगी कि आप कौन हैं जो मुझ पर प्रसन्न हुई हो, यह सब मेरे लिए कहो और अपनी कृपा

दृष्टि से मुझ दीनदासी को कृतार्थ करो। ऐसा ब्राह्मणी का वचन सुनकर देवी कहने लगी कि मैं आदि शक्ति हूँ और मैं ही ब्रह्माणी, विद्या और सरस्वती हूँ। मैं प्रसन्न होने पर प्राणियों का दुःख दूर कर उनको सुख प्रदान करती हूँ। हे ब्राह्मणी! मैं तुझ पर तेरे पूर्व जन्म के पुण्य के प्रभाव से प्रसन्न हूँ।

तुम्हारे पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुनाती हूँ सुनो ! तू पूर्व जन्म में निषाद की स्त्री थी और अति पतिव्रता थी। एक दिन तेरे पति निषाद ने चोरी की। चोरी करने के कारण तुम दोनों को सिपाहियों ने पकड़ लिया और ले जाकर जेलखाने में कैद कर दिया। उन लोगों ने तुझे और तेरे पति को भोजन भी नहीं दिया। इस प्रकार नवरात्र के दिनों में तुमने न तो कुछ खाया और न जल ही पिया। इसलिए नौ दिन तक नवरात्र का व्रत हो गया। हे ब्राह्मणी! उन दिनों में जो व्रत हुआ उस व्रत के प्रभाव से प्रसन्न होकर तुम्हें मनवांछित फल दे रही हूँ तुम्हारी जो इच्छा हो सो माँगो। इस प्रकार दुर्गा के कहे हुए वचन सुनकर ब्राह्मणी बोली कि अगर आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो हे दुर्गे! आपको प्रणाम करती हूँ। कृपा करके मेरे पति के कोढ़ को दूर करो। देवी ने कहा— मेरे प्रभाव से तेरा पति कोढ़ से रहित और सोने के समान शरीर वाला हो गया। ब्रह्माजी बोले— इस प्रकार देवी का वचन सुनकर वह ब्राह्मणी बहुत प्रसन्न हुई और पति को निरोग करने की इच्छा से ठीक है, ऐसे बोली। तब तक उसके पति का शरीर भगवती दुर्गा की कृपा से कुष्ठरहित होकर अति कान्तियुक्त हो गया जिसकी कान्ति के सामने चन्द्रमा की कान्ति भी क्षीण हो जाती है। वह ब्राह्मणी पति की मनोहर देह को देखकर देवी को अति पराक्रम वाली समझकर स्तुति करने लगी कि हे दुर्गे! आप दुर्गत को दूर करने वाली, तीनों जगत् का सन्ताप हरने वाली, समस्त दुःखों को दूर करने वाली, रोगी मनुष्य को निरोग करने वाली, प्रसन्न होने पर मनवांछित वस्तु को देने वाली और दुष्ट मनुष्य का नाश करने वाली हो। तुम ही सारे जगत् की माता और पिता हो। हे अम्बे! मुझ अपराध रहित अबला की मेरे पिता ने कुष्ठा के साथ विवाह कर मुझे घर से निकाल दिया। आपने ही मेरा इस आपत्ति रूपी समुद्र से उद्धार किया है। हे देवी! आपको प्रणाम करती हूँ। मुझ दीन की रक्षा करो। ब्रह्माजी बोले कि हे बृहस्पते! इसी प्रकार उस सुमति ने मन से देवी की बहुत स्तुति की। उसकी स्तुति सुनकर देवी को बहुत संतोष हुआ और ब्राह्मणी से कहने लगी कि हे ब्राह्मणी! तुम्हारे उदालय नाम का एक अति

बुद्धिमान, धनवान, कीर्तिवान और जितेन्द्रिय पुत्र शीघ्र ही होगा। ऐसा कहकर वह देवी उस ब्राह्मणी से फिर कहने लगीं कि हे ब्राह्मणी और जो कुछ तेरी इच्छा हो मनवांछित वस्तु माँग सकती है। ऐसा भगवती दुर्गा का वचन सुनकर सुमति बोली कि हे भगवती दुर्गे! अगर आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं तो कृपा कर मुझे नवरात्रि विधि बताइए। हे दयावती! जिस विधि से नवरात्र व्रत करने से आप प्रसन्न होती हैं। उस विधि और उसके फल को मेरे लिए विस्तार से वर्णन करें। इस प्रकार ब्राह्मणी के वचन सुनकर माता दुर्गा कहने लगी कि हे ब्राह्मणी ! मैं तुम्हारे लिए सम्पूर्ण पापों को दूर करने वाली नवरात्र व्रत विधि को बतलाती हूँ, जिसको सुनने से सभी पापों से छूटकर मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है। आश्विन मास के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से लेकर नौ दिन तक विधि पूर्वक व्रत करें। यदि दिन भर का व्रत न कर सकें तो एक समय का भोजन करें। पढ़े-लिखे ब्राह्मणों से पूछकर घट स्थापना करें और वाटिका बनाकर उसको प्रतिदिन जल से सींचे। महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती मूर्तियाँ बनाकर उनकी नित्य विधि सहित पूजा करें और पुष्पों से विधि पूर्वक अर्घ्य दें। बिजौरा के फूल से अर्घ्य देने से रूप की प्राप्ति होती है। जायफल से कीर्ति, दाख से कार्य की सिद्धि होती है। आँवले से सुख और केले से भूषण की प्राप्ति होती है। इस प्रकार फलों से अर्घ्य देखकर यथा विधि हवन करें। खांड, घी, गेहूँ, शहद, जौ, तिल, बिम्ब, नारियल, दाख और कदम्ब, इनसे हवन करें। गेहूँ होम करने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। खीर व चम्पा के पुष्पों से धन और पत्तों से तेज और सुख की प्राप्ति होती है। आँवले से कीर्ति और केले से पुत्र प्राप्त होता है। कमल से राज सम्मान और दाखों से सुख सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। खांड, घी, नारियल, शहद, जौं और तिल, इनसे तथा फलों से होम करने से मनवांछित वस्तु की प्राप्ति होती है। व्रत करने वाला मनुष्य इस विधान से होम कर आचार्य को अत्यन्त नम्रता के साथ प्रणाम करे और यज्ञ की सिद्धि के लिए उसे दक्षिणा दें। इस महाव्रत को पहले बताई हुई विधि के अनुसार जो कोई करता है उसके सब मनोरथ सिद्ध हो जाते हैं, इसमें तनिक भी संशय नहीं है। इन नौ दिनों में जो कुछ दान आदि दिया जाता है, उसका करोड़ों गुना मिलता है। इस नवरात्र के व्रत करने से ही अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है। हे ब्राह्मणी! इस सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण करने वाले उत्तम व्रत को तीर्थ, मन्दिर अथवा घर में

ही विधि के अनुसार करें। ब्रह्माजी बोले— हे बृहस्पते ! इस प्रकार ब्राह्मणी को व्रत की विधि और फल बताकर देवी अन्तर्ध्यान हो गईं। जो मनुष्य या स्त्री इस व्रत को भक्ति पूर्वक करता है वह इस लोक में सुख प्राप्तकर अन्त में मोक्ष को प्राप्त होता है। हे बृहस्पते ! यह दुर्लभ व्रत का माहात्म्य मैंने तुम्हारे लिए बतलाया है। ऐसा ब्रह्माजी का वचन सुनकर बृहस्पतिजी आनन्द के कारण रोमांचित हो गए और ब्रह्माजी से कहने लगे— हे ब्रह्मा जी! आपने मुझ पर अति कृपा की, जो अमृत के समान इस नवरात्र व्रत का माहात्म्य सुनाया। हे प्रभो! आपके बिना और कौन इस माहात्म्य को सुना सकता है? ऐसे बृहस्पतिजी के वचन सुनकर ब्रह्माजी बोले कि हे बृहस्पते! तुमने सब प्राणियों का हित करने वाले इस अलौकिक व्रत को पूछा है इसलिए तुम धन्य हो। यह भगवती शक्ति सम्पूर्ण लोकों का पालन करने वाली हैं, इस महादेवी के प्रभाव को कौन जान सकता है।

*

अशोक व्रत

यह व्रत आश्विन मास की शुक्ल प्रतिपदा को किया जाता है। इस व्रत में अशोक वृक्ष की पूजा की जाती है। अशोक के वृक्ष को घी, गुड़, हल्दी, रोली, कलावा आदि से पूजते हैं और जल से अर्घ्य देते हैं। यह व्रत बारह वर्ष तक करना पड़ता है। उद्यापन के समय सोने का वृक्ष बनवाकर कुल गुरु से पूजन कराकर उन्हें समर्पित कर देना चाहिए। अशोक व्रत को करने वाले स्त्री-पुरुष शिवलोक को प्राप्त होते हैं।

विजया-दशमी

(आश्विन शुक्ल दशमी)

आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की दशमी को विजया दशमी और लोक व्यवहार की भाषा से दशहरा कहते हैं। भगवान् श्रीराम ने इसी दिन लंका

विजया-दशमी
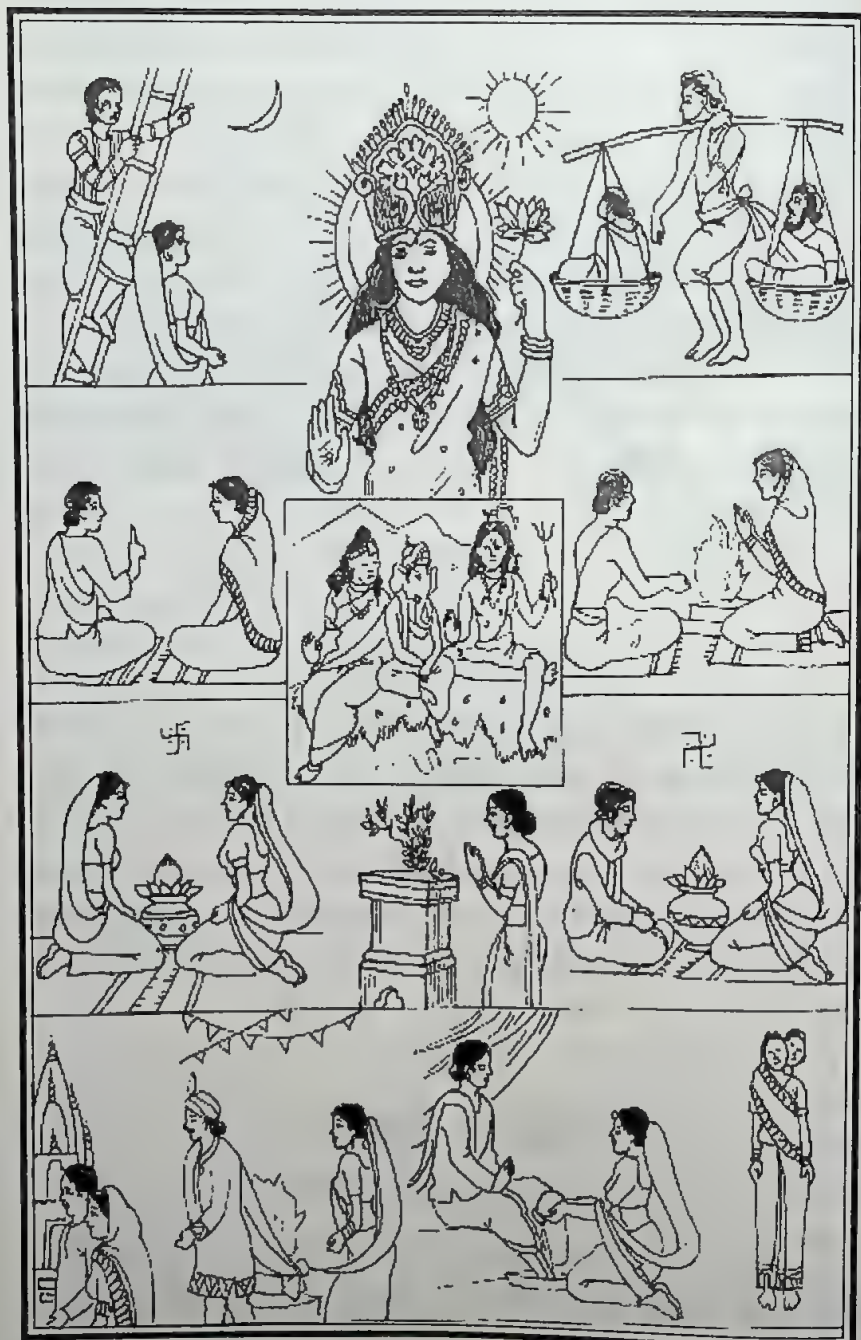
पर चढ़ाई करके विजय प्राप्त की थी। 'ज्योतिर्निबन्ध' में लिखा है कि आश्विन शुक्ला दशमी को तारा उदय होने के समय विजय नामक काल होता है। वह सब कार्यों को सिद्ध करने वाला होता है। विजया दशमी हमारा राष्ट्रीय पर्व है। दशमी के दिन श्रीरामचन्द्रजी की सवारी बड़ी सजधज के निकलती है और रावण-वध की लीला का प्रदर्शन होता है। इस दिन नीलकंठ पक्षी का दर्शन बहुत शुभ माना जाता है।

होली, दीपावली और रक्षाबंधन के समान ही हमारे चार प्रमुख त्यौहार में-से एक है विजया दशमी। पूरे भारतवर्ष में उत्तर से दक्षिण तक सभी वर्ण और वर्ग के व्यक्ति पूरी धूमधाम से मनाते हैं यह त्यौहार। प्राचीनकाल से ही इसे क्षत्रियों, राजाओं और वीरों का विशेष त्यौहार माना जाता है। आज के दिन अस्त्र-शस्त्रों, घोड़ों और वाहनों की विशेष पूजा की जाती है। प्राचीन काल में तो राजा-महाराजा आज विशेष सवारियाँ और सैनिक परेड निकालते थे तथा ब्राह्मणों को प्रचुर दान देते थे। वैसे अब रामलीला का समापन और रावण, उसके पुत्र मेघनाद और भाई कुम्भकरण के पुतलों का दहन ही आज का विशिष्ट उत्सव रह गया है। आज नौ दिन के दुर्गा और काली पूजन के बाद मूर्तियों का नदियों में विसर्जन भी बड़ी धूमधाम से करते हैं तथा बड़े-बड़े जलूस निकालते हैं।

इनके अतिरिक्त प्रत्येक क्षेत्र और परिवार में दशहरा मनाने के अलग-अलग कुछ विधान भी हैं। कुछ क्षेत्रों में गोबर का दशहरा रखकर उसकी पूजा की जाती है। इसी प्रकार अनेक परिवारों में आज बहिनें भाइयों के तिलक भी करती है। प्रथम नौ रात्रि के दिन देवी के नाम के जौ बोकर आज के दिन उनके छोटे-छोटे पौधे उखाड़कर पूजने और भाइयों को देने की परम्परा भी कुछ क्षेत्रों में है। आज के दिन अनेक व्यक्ति भगवान् श्रीराम लक्ष्मण, सीताजी और हनुमान्जी की विशेष पूजाएँ भी करते हैं। इन धार्मिक कृत्यों के साथ-साथ एक बहुत बड़ा सामाजिक उत्सव भी है हमारा यह पर्व।

पापांकुशा एकादशी

(आश्विन शुक्ल एकादशी)

पापरूपी हाथी को व्रत के पुण्यरूपी अंकुश से वेधने के कारण ही इसका नाम पापांकुशा एकादशी हुआ है। इस दिन मौन रहकर भगवद्

स्मरण तथा भोजन का विधान है। इस प्रकार भगवान् की आराधना करने से मन शुद्ध होता है तथा व्यक्ति में सद्गुणों का समावेश होता है।

इस दिन भगवान् विष्णु की श्रद्धा और भक्ति भाव से पूजा तथा ब्राह्मणों को उत्तम दान व दक्षिणा देनी चाहिए। इस दिन केवल फलाहार ही लिया जाता है। इससे शरीर स्वस्थ वह हल्का रहता है। इस एकादशी के दिन व्रत रहने से भगवान् समस्त पापों को नष्ट कर देते हैं। अर्थात् यह एकादशी पापों का नाश करने वाली कही गई है। जनहितकारी निर्माण कार्य जैसे-मंदिर, धर्मशाला, तालाब, प्याऊ, बाग आदि निर्माण कार्य प्रारम्भ करने के लिए यह एक उत्तम मुहूर्त है। इस दिन व्रत करने वाले को भूमि, गौ, जल, अन्न, छत्र, उपानह आदि का दान करना चाहिए।

कथा-प्राचीनकाल में विंध्य पर्वत पर क्रोधन नामक एक महाक्रूर बहेलियाँ रहता था। उसने अपनी सारी जिंदगी, हिंसा, लूट-पाट, मद्यपान तथा मिथ्याभाषण आदि में व्यतीत कर दी। जब जीवन का अंतिम समय आया तब यमराज ने अपने दूतों को क्रोधन को लाने की आज्ञा दी। यमदूतों ने उसे बता दिया कि कल तेरा अंतिम दिन है।

मृत्युभय से भयभीत (आक्रांत) वह बहेलिया महर्षि अंगिरा की शरण में उनके आश्रम पहुँचा। महर्षि ने उसके अनुनय-विनय से प्रसन्न होकर उस पर कृपा करके उसे अगले दिन ही आने वाली आश्विन शुक्ल एकादशी का विधिपूर्वक व्रत करने को कहा।

इस प्रकार वह महापातकी व्याध पापांकुशा एकादशी का व्रत पूजन कर भगवान् की कृपा से विष्णुलोक को गया। उधर यमदूत इस चमत्कार को देख हाथ मलते रह गए और बिना क्रोधन के यमलोक वापस लौट गए।

पद्मनाभ द्वादशी

यह व्रत आश्विन शुक्ल की द्वादशी को किया जाता है। इसमें भगवान् पद्मनाभ की पूजा की जाती है। इस दिन भगवान् जागृतावस्था प्राप्त करने हेतु अंगडाई लेते है तथा पद्मासीन ब्रह्मा ॐकार ध्वनि करते हैं।

विधान– भगवान् की प्रतिमा को क्षीर (दूध) से स्नान कराकर भोग लगावें तथा धूप, दीप, नैवेद्य, चन्दन से पूजनकर आरती उतारें। ब्राह्मणों को भोजन कराकर दान देवें। इस व्रत के प्रभाव से मनोवांछित फल मिलता है।

वाराह चतुर्दशी

(आश्विन शुक्ल चतुर्दशी)

यह व्रत आश्विन शुक्ल चतुर्दशी को किया जाता है। इस दिन भगवान् वाराह की पूजा का विधान है। धार्मिक मान्यताओं के अनुसार आज के दिन ही भगवान् विष्णु ने पृथ्वी के उद्धार हेतु वाराह रूप में अवतार धारण किया था। व्रत और पूजा का विधान उपरोक्त के समान ही है। इस व्रत को करने से समस्त भूत प्रेतादि बाधाएँ नष्ट हो जाती है।

*

शरद् पूर्णिमा

आश्विन पूर्णिमा

आश्विन मास की पूर्णिमा को शरद्पूर्णिमा कहते हैं। इस दिन प्रातः काल आराध्यदेव को सुन्दर वस्त्राभूषणों से सुशोभित करके आवाहन, आसन, आचमन, स्नान, वस्त्र, गन्ध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, सुपारी, दक्षिणा आदि से उनका पूजन करना चाहिए। रात्रि के समय गाय के दूध से बनी खीर में घी और सफेद खांड मिला कर अर्द्धरात्रि के समय भगवान् को अर्पण करें। पूर्ण चन्द्रमा को आकाश के मध्य में स्थित हो जाने पर उनका पूजन करें और ऊपर बताई गई खीर का नैवेद्य अर्पण करके दूसरे दिन उसका भोजन करें।

शरद ऋतु में मौसम एकदम साफ रहता है। आकाश में न तो बादल होते हैं और न ही धूल-गुबार। आज की रात्रि चन्द्रदेव अपनी अमृत-सुधा को पूर्ण शक्ति से पृथ्वी पर बरसाते हैं। यही कारण है कि ताजमहल जैसी संगमरमर से बनी इमारतें बहुंत ही सुन्दर लगती हैं इस रात्रि में भ्रमण और चन्द्र किरणों का शरीर पर पड़ना बहुत ही शुभ माना जाता है। जहाँ तक धार्मिक महत्त्व का प्रश्न है विवाह होने के बाद पूर्णमासी के व्रत का नियम शरद् पूर्णिमा से ही लेना चाहिए। कार्तिक का व्रत भी शरद् पूर्णिमा से ही आरम्भ होता है। पूर्णिमा के व्रत की कथा इस प्रकार है-

कथा– एक साहूकार की दो पुत्रियाँ थीं। वे दोनों पूर्णमासी का व्रत करती थीं। बड़ी बहन तो पूरा व्रत करती और छोटी बहन अधूरा। छोटी

बहन के जो भी संतान होती वह जन्म लेते ही मर जाती और बड़ी बहन की सभी संतानें जीवित हैं। एक दिन छोटी बहन ने बड़े-बड़े पण्डितों को बुलाकर अपना दुःख निवेदन किया और उनसे कारण पूछा। उन्होंने बताया कि तू पूर्णिमा का अधूरा व्रत करती है, इसी कारण से तेरी संतान मर जाती है। अब तू पूरा व्रत किया कर, तब तेरे बच्चे जीवित रहेंगे।

पण्डितों की आज्ञा मानकर उसने पूर्णिमा का पूरा व्रत किया। बाद में उसके लड़का हुआ किन्तु वह भी मर गया। तब उसने लड़के को पीढ़े पर सुलाकर उसके ऊपर कपड़ा ढक दिया। और अपनी बड़ी बहन को बुलाकर वही पीढ़ा बैठने को दिया। जब बड़ी बहन बैठने लगी तो उसका घाघरा छूते ही लड़का जीवित होकर रोने लगा। बड़ी बहन ने कहा कि तू मुझे कलंक लगाना चाहती थी। यदि मैं बैठ जाती तो लड़का मर जाता। तब छोटी बहन ने कहा कि यह तो मरा हुआ ही था। तेरे ही भाग्य से जीवित हुआ है। हम दोनों बहनें पूर्णिमा का व्रत करती हैं। तू पूरा करती है और मैं अधूरा करती हूँ, जिसके दोष से मेरी संतान मर जाती है। इसलिए तेरे पुण्य से यह बालक जीवित हुआ। इसके बाद उसने तमाम नगर में ढिंढोरा पिटवा दिया कि सब कोई पूर्णिमा का व्रत करे और पूरा करें।

*

कार्तिक मास के व्रत एवं त्यौहार

तारा भोजन

कार्तिक मास के प्रारम्भ से लेकर पूरे मास तक व्रत करते हैं। प्रतिदिन रात्रि को तारों को अर्घ्य देकर भोजन करते हैं। व्रत के अन्तिम दिन उद्यापन करते हैं। उद्यापन में पाँच सीधे, पाँच सुराही, ब्राह्मण को देते हैं तथा एक साड़ी-ब्लाऊज पर रुपये रखकर सास का पैर स्पर्श करके देना चाहिए।

*

छोटी-बड़ी साँकली

छोटी एवं बड़ी साँकली कार्तिक मास के प्रारम्भ होते ही पूर्णमासी से करते है। छोटी साँकली व बड़ी साँकली में अन्तर यह है कि छोटी साँकली

में एक दिन निराहार रहकर दो दिन भोजन करें। इसके बाद एक दिन फिर भोजन न क़रें। इसके बीच में रविवार या एकादशी पड़ जाये तो दिन में भोजन नहीं करते। बड़ी साँकली में एक दिन निराहार रहकर एक दिन भोजन करते हैं। यह क्रम चलता रहता है, पूरे कार्तिक मास तक।

व्रत पूरे होने पर हवन तथा उद्यापन करते हैं। उद्यापन में ३३ ब्राह्मणों और एक ब्राह्मण ब्राह्मणी (पति-पत्नी) को भोजन कराना चाहिए। सासजी का पैर स्पर्श करके साड़ी-ब्लाऊज पर रुपये रखकर दें।

करवा चौथ

कार्तिक मास की कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को करवा चौथ का व्रत किया जाता है। यह स्त्रियों का मुख्य त्यौहार है। सुहागिन स्त्रियाँ अपने पति की दीर्घायु के लिए यह व्रत करती हैं।

विधान– एक पीढ़े पर जल से भरा लोटा एवं एक करवे में गेहूँ भरकर रखते हैं। दीवार पर या कागज पर चन्द्रमा उसके नीचे श्रीशिवजी-पार्वतीजी, गणेशजी तथा कार्तिकेयजी की चित्रावली बनाकर पूजा की जाती है। इस दिन निर्जल व्रत किया जाता है। चन्द्रमा को देखकर अर्घ्य देते हैं फिर भोजन करते हैं।

कथा– एक साहूकार के सात लड़के और एक लड़की थी। सेठानी के सहित उसकी बहुओं और बेटी ने करवा चौथ का व्रत रखा था। रात्रि को साहूकार के लड़के भोजन करने लगे तो उन्होंने अपनी बहन से भोजन के लिए कहा। इस पर बहन ने उत्तर दिया— भाई! अभी चाँद नहीं निकला है, उसके निकलने पर अर्घ्य देकर भोजन करूँगी। बहन की बात सुनकर भाइयों ने क्या काम किया कि नगर से बाहर जाकर अग्नि जला दी और छलनी ले जाकर उसमें-से प्रकाश दिखाते हुए उन्होंने बहन से कहा— बहन! चाँद निकल आया है, अर्घ्य देकर भोजन कर लो। यह सुन उसने अपनी भाभियों से कहा कि आओ तुम भी चन्द्रमा को अर्घ्य दे लो, परन्तु वे इस बात को जानती थीं, उन्होंने कहा— बहन जी! अभी चाँद नहीं निकला, तेरे भाई तेरे से धोखा करते हुए अग्नि का प्रकाश छलनी से दिखा रहे हैं। भाभियों की बात सुनकर भी उसने कुछ ध्यान न दिया और भाइयों द्वारा दिखाए प्रकाश को ही अर्घ्य देकर भोजन कर लिया। इस प्रकार व्रत भंग करने से गणेशजी उस पर अप्रसन्न हो गए। इसके बाद

करवा चौथ
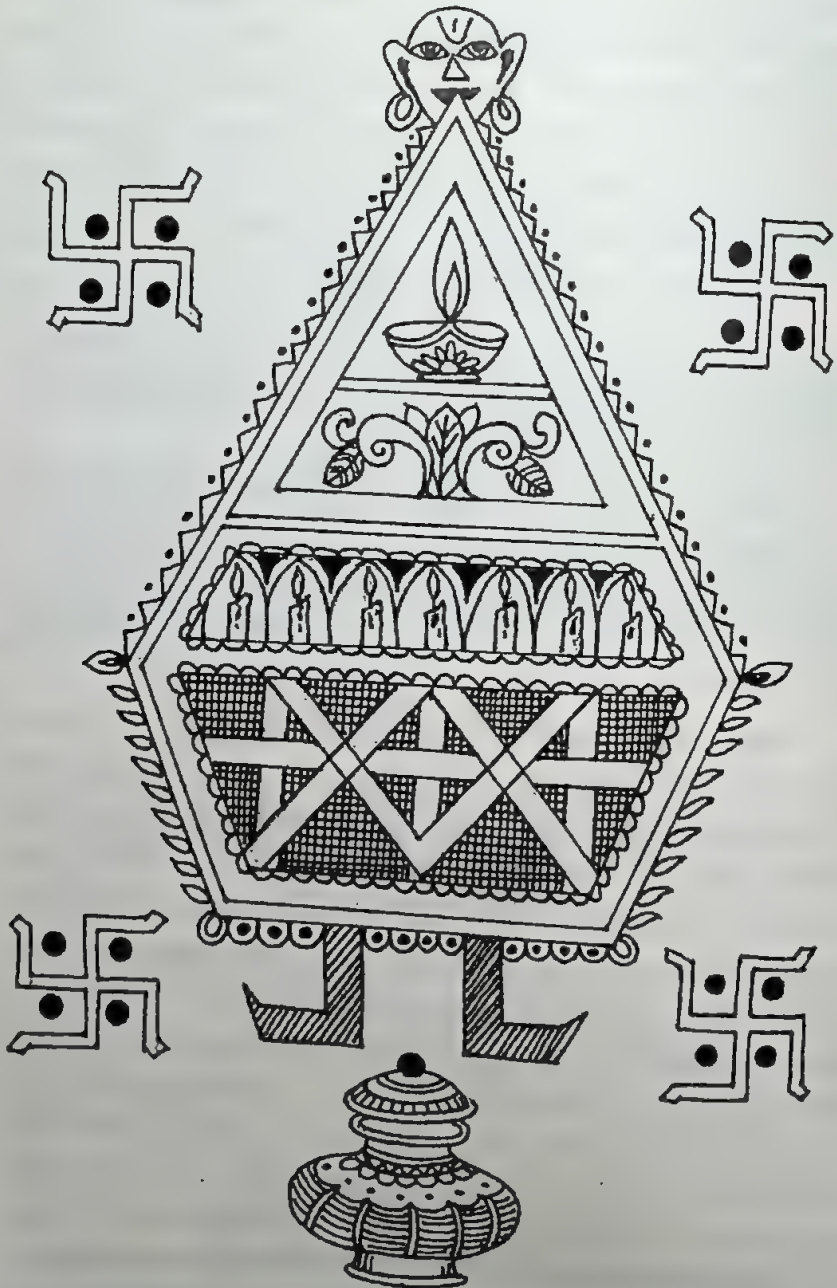
उसका पति बीमार हो गया और जो कुछ घर में था उसकी बीमारी में लग गया। जब उसे अपने किए हुए दोषों का पता लगा तो उसने पश्चाताप किया। गणेशजी की प्रार्थना करते हुए विधि विधान से पुनः चतुर्थी का व्रत करना प्रारम्भ कर दिया। श्रद्धानुसार सबका आदर करते हुए सबसे आशीर्वाद ग्रहण करने में ही मन को लगा दिया।

इस प्रकार उसके श्रद्धा-भक्ति सहित कर्म को देखकर भगवान् गणेश उस पर प्रसन्न हो गए और उसके पति को जीवन दान देकर उसे आरोग्य करने के पश्चात् धन-सम्पत्ति से युक्त कर दिया। इस प्रकार जो कोई छल-कपट को त्याग कर श्रद्धा-भक्ति से चतुर्थी का व्रत करेंगे वे सब प्रकार से सुखी होते हुए क्लेशों से मुक्त हो जायेंगे।

गणेशजी (विनायकजी) की कहानी– एक अन्धी बुढ़िया थी, जिसका एक लड़का और बहू थी। वह बहुत गरीब थी। वह अन्धी बुढ़िया नित्यप्रति गणेशजी की पूजा किया करती थी। गणेशजी साक्षात् सन्मुख आकर कहते थे कि बुढ़िया माई तू जो चाहे सो माँग ले। बुढ़िया कहती मुझे माँगना नहीं आता सो कैसे और क्या माँगू। तब गणेशजी बोले— अपने बहू-बेटे से पूछकर माँग लो। तब बुढ़िया ने अपने पुत्र और पुत्रवधू से पूछा तो बेटा बोला कि धन माँग ले और बहू ने कहा कि पोता माँग ले, तब बुढ़िया ने सोचा कि बेटा बहू तो अपने-अपने मतबल की बातें कर रहे हैं। अतः उसे बुढ़िया ने पड़ोसियों से पूछा तो पड़ोसियों ने कहा कि बुढ़िया तेरी थोड़ी-सी जिन्दगी है। क्यों माँगे धन और पोता, तू तो केवल अपने नेत्र माँग ले जिससे तेरी शेष जिन्दगी सुख से व्यतीत हो जाये। उस बुढ़िया ने बेटे और बहू तथा पड़ोसियों की बात सुनकर घर में जाकर सोचा, जिससे बेटा बहू और मेरा सबका ही भला हो वह भी माँग लूँ और अपने मतलब की चीज भी माँग लूँ। जब दूसरे दिन श्रीगणेशजी आये और बोले— बोल बुढ़िया क्या माँगती है। हमारा वचन है जो तू माँगेगी सो ही पायेगी। गणेशजी के वचन सुनकर बुढ़िया बोली—हे गणेश महाराज! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे नौ करोड़ की माया दें, निरोगी काया दें, अमर सुहाग दें, आँखों में प्रकाश दें, नाती पोता दें और समस्त परिवार को सुख दें और अन्त में मोक्ष दें। बुढ़िया की बात सुनकर गणेशजी बोले—बुढ़िया माँ तूने तो मुझे ठग लिया। खैर जो कुछ तूने माँग लिया वह सभी तुझे मिलेगा। यूँ कहकर गणेशजी अन्तर्ध्यान हो गए।

हे गणेशजी जैसे बुढ़िया माँ को माँगे अनुसार आपने सब कुछ दिया है, वैसे ही सबको देना और हमको भी देने की कृपा करना।

करवा चौथ का उद्यापन– उद्यापन करने के लिए एक थाली में तेरह जगह चार-चार पूड़ी और थोड़ा-सा सीरा रख लें। उसके ऊपर एक साड़ी ब्लाउज और रुपए जितना चाहें रख लें, उस थाली के चारों ओर रोली, चावल से हाथ फेर कर अपनी सासजी के पाँव छूकर उन्हें दे देवें। उसके बाद तेरह ब्राह्मणों को भोजन करावें और दक्षिणा देकर तथा तिलक लगाकर उन्हें बिदा करें।

अहोई अष्टमी

कार्तिक कृष्ण अष्टमी

यह व्रत दीपावली से एक सप्ताह पहले आने वाली अष्टमी को किया जाता है। इस दिन पुत्रवती स्त्रियाँ निर्जल व्रत रखती हैं। छोटे बच्चों के कल्याण के लिए पुत्र की दीर्घ आयु एवं सुख-समृद्धि के लिए माताएँ अहोई माँ की पूजा करके यह व्रत रखती हैं। जिस वार की दीपावली होती है, अहोई अष्टमी भी उसी वार की होती है।

करवा चौथ के समान ही अहोई अष्टमी भी एक महत्त्वपूर्ण त्यौहार है। करवा चौथ का व्रत स्त्रियों द्वारा पति के दीर्घ जीवन की कामना हेतु किया जाता है, तो अहोई अष्टमी का व्रत पुत्रों की दीर्घ आयु और मंगलकामना के लिए किया जाता है।

इस दिन सायंकाल दीवार पर आठ कोनों वाली एक पुतली अंकित की जाती है। उस पुतली के पास ही स्याहू माता (सेई) तथा उसके बच्चों के चित्र भी बनाए जाते हैं। फिर पृथ्वी को शुद्ध और पवित्र कर एक लोटे में जल भरकर, एक पीढ़ा या पाटा पर कलश की भाँति रखकर अहोई माता की कथा सुनी जाती है। पूजा से पहले एक चाँदी की अहोईमाता बनवाएँ और चांदी के दो मोती भी बनवाएँ। जिस प्रकार गले में पहनने के हार में पैंडिल लगा होता है, उसी प्रकार चाँदी की अहोई लगवाएँ और डोरे में चाँदी के दाने डलवा लें। फिर अहोई को रोली, चावल, दूध व भात से पूजा करें। जल से भरे लोटे (कलश) पर सतिया बना लें। एक कटोरी में हलवा तथा रुपये का बायना निकालकर रख लें और सात दाने गेहूँ के लेकर कथा सुनें।

कथा सुनने के बाद अहोई की माला गले में पहन लें तथा जो बायना

अहोई अष्टमी

निकालकर रखा था उसे सास के पावँ छूकर उन्हें दे दें। इसके बाद चन्द्रमा को अर्घ्य देकर स्वयं भोजन करें।

फिर दीवाली के बाद किसी अच्छे दिन अहोई की माला को उतारकर इसकी पूजा करके और गुड़ का भोग लगाकर, जल के छींटे दें और अगले वर्ष उपयोग के लिए सम्हालकर रख लें। दूसरा पुत्र उत्पन्न होने पर इसी माला में चांदी के दो मोती और डलवा लिए जाते हैं। इस प्रकार उस स्त्री के जितने पुत्र होते हैं जितने पुत्रों का विवाह हुआ हो उतनी बार दो चांदी के मोती इसमें डालते जाएँ। परन्तु इस माला में स्याहू के चित्र का पैण्डिल एक ही रहता है।

कथा– एक साहूकार था। जिसके सात बेटे और एक बेटी थी। उसके सभी पुत्रों का विवाह हो चुका था। दीपावली से पहले सातों बहुएँ अपनी ननद के साथ जंगल में मिट्टी लेने गईं। जहाँ वे मिट्टी खोद रही थीं वहीं पर एक स्याहू (सेई) की मांद थी। मिट्टी खोदते समय ननद के हाथों स्याहू का बच्चा मर गया।

इससे क्रुद्ध होकर स्याहू माता बोली—मैं तेरी कोख बांधूंगी। तब ननद अपनी सातों भाभियों से बोली— तुममें से मेरे बदले कोई अपनी कोख बंधवा लो।

सब भाभियों ने अपनी कोख बंधवाने से इंकार कर दिया। परन्तु छोटी भाभी सोचने लगी— यदि मैं कोख नहीं बँधवाऊँगी तो सासजी नाराज होंगी। यह विचार कर ननद के बदले में उसने अपनी कोख बँधवा ली।

इसके बाद उसके जो बच्चा होता वह सात दिन के बाद मर जाता। एक दिन उसने पण्डित को बुलाकर पूछा—मेरी संतान सातवें दिन क्यों मर जाती हैं? तब पण्डित ने कहा—तुम सुरही गाय की पूजा करो, सुरही गाय स्याहू माता की भायली है, वह तेरी कोख छोड़े तब तेरा बच्चा जीवित रहेगा।

तत्पश्चात बहू प्रातःकाल उठकर चुपचाप सुरही गाय के नीचे सफाई आदि कर जाती। एक दिन गौ माता ने सोचा— आजकल कौन मेरी सेवा कर रहा है, सो आज देखूँगी। गौ माता तड़के उठी, क्या देखती है कि साहूकार की पुत्रवधू उसके आसपास सफाई कर रही है।

गौ माता उससे बोली— मैं तेरी सेवा से प्रसन्न हूँ जो चाहे सो माँग लो। तब बहू बोली— स्याहू माता तुम्हारी भायली है और उसने मेरी कोख

बाँध रखी है। सो मेरी कोख खुलवा दो। इस पर गौ माता ने कहा— अच्छा।

यह कहकर गौ माता समुद्र पार अपनी भायली के पास उसको लेकर चली। रास्ते में कड़ी धूप थी, सो वे दोनों एक पेड़ के नीचे बैठ गईं। थोड़ी देर में एक साँप आया और उस वृक्ष पर एक गरुड़ पक्षी के बच्चे को डँसने लगा। साहूकार की बहू ने साँप को मारकर ढाल के नीचे दबा दिया और बच्चों को बचा लिया।

कुछ देर बाद गरुड़ पक्षी आई तो वहाँ खून पड़ा देखकर साहूकार की बहू को चोंच से मारने लगी। तब वह बोली— मैंने तेरे बच्चे को नहीं मारा, बल्कि यह साँप तेरे बच्चों को डँसने आया था। मैंने तो उससे तेरे बच्चों की रक्षा की हैं।

यह सुनकर गरुड़ पँछी बोली— माँग, तू क्या माँगती है? बहू बोली— सात समुद्र पार स्याहू माता रहती हैं, हमें तू उसके पास पहुँचा दे। तब गरुड़ पंखनी ने दोनों को अपनी पीठ पर बैठाकर स्याहू माता के पास पहुँचा दिया।

स्याहू माता उन्हें देखकर बोली— आ बहन! बहुत दिनों बाद याद आई। फिर कहने लगी— बहन ! मेरे सिर में जुएं पड़ गई हैं। तब सुरही के कहने पर साहूकार की बहू ने सलाई से उनकी जुएं निकाल दीं। इस पर स्याहू माता प्रसन्न होकर बोली— तूने मेरे सिर में बहुत सलाई डाली हैं, इसलिए तेरे सात बेटे और बहू होंगी।

इस पर वह बोली— मेरे तो एक भी बेटा नहीं सात बेटे कहाँ से होंगे?

इस पर स्याहू माता बोली— वचन दिया, वचन से फिरूं तो धोबी के कुण्ड पर कंकरी होऊँ। साहूकार की बहू बोली— मेरी कोख तो तुम्हारे पास बंद पड़ी है। यह सुनकर स्याहू माता बोली— तूने मुझे ठग लिया, मैं तेरी कोख खोलती तो नहीं, परंतु अब खोलनी पड़ेगी। जा तेरे घर, तुझे सात बेटे और बहुएँ मिलेंगी। तू जाकर उद्यापन करियों, सात अहोई बनाकर, सात कढ़ाई करियो।

बहू लौटकर घर आई तो वहाँ देखा, सात बेटे और सात बहुएँ बैठे हैं। वह उन्हें देखकर खुश हो गई। उसने सात अहोई बनाई, सात उद्यापन

किए तथा सात कढ़ाई की। रात्रि के समय जेठानियाँ आपस में कहने लगीं— जल्दी-जल्दी नहाकर पूजा कर लो, कहीं छोटी बच्चों को याद करके रोने लगे।

थोड़ी देर बाद उन्होंने अपने बच्चों से कहा— अपनी चाची के घर जाकर देख आओ कि आज वह अभी तक रोई क्यों नहीं। बच्चों ने जाकर कहा— चाची तो कुछ माँड़ रही है, खूब उद्यापन हो रहा है। यह सुनते ही जेठानियाँ दौड़ी-दौड़ी घर आई और पूछा— तूने कोख कैसे छुड़ाई?

वह बोली— तुमने तो कोख बंधाई नहीं, सो मैंने कोख बंधा ली थी। अब स्याहू माता ने कृपा करके मेरी कोख खोल दी है।

रमा एकादशी

(कार्तिक कृष्ण एकादशी)

दीपावली के चार दिन पूर्व पड़ने वाली इस एकादशी को लक्ष्मीजी के नाम पर रमा एकादशी कहा जाता है। इस दिन भगवान् विष्णु के पूर्णावतार श्रीकृष्णजी के केशव रूप की पूजा-आराधना की जाती है। इस दिन भगवान् केशव का संपूर्ण वस्तुओं से पूजन, नैवेद्य तथा आरती कर, प्रसाद वितरण करें व ब्राह्मणों को भोजन कराएँ। इस एकादशी का व्रत करने से जीवन में वैभव और अंत में मोक्ष की प्राप्ति होती है।

कथा– एक समय मुचकुन्द नाम का एक राजा था। वह बड़ा दानी और धर्मात्मा था। उसे एकादशी व्रत का पूरा विश्वास था। वह प्रत्येक एकादशी व्रत को करता था तथा उसके राज्य की प्रजा पर यह व्रत करने का नियम लागू था। उसके एक कन्या थी जिसका नाम था— चंद्रभागा। वह भी पिता से ज्यादा इस व्रत पर विश्वास करती थी।

उसका विवाह राजा चन्द्रसेन के पुत्र शोभन के साथ हुआ। वह राजा मुचकुन्द के साथ ही रहता था। एकादशी आने पर सभी ने व्रत किए, शोभन ने भी एकादशी का व्रत किया। परन्तु दुर्बल और क्षीणकाय होने से भूख से व्याकुल हो मृत्यु को प्राप्त हो गया।

इससे राजा-रानी और चन्द्रभागा अत्यंत दु:खी हुए। इधर शोभन को व्रत के प्रभाव से मंदराचल पर्वत पर स्थित देवनगरी में आवास मिला। वहाँ उसकी सेवा में रमादि अप्सराएँ थीं।

अचानक एक दिन राजा मुचकुन्द मंदराचल पर टहलते हुए पहुँचा, तो वहाँ पर अपने दामाद को देखा और घर आकर सारा वृत्तांत पुत्री को बताया। चंद्रभागा भी समाचार पाकर पति के पास चली गई। दोनों सुख से पर्वत पर निवास करने लगे।

गोवत्स द्वादशी

कार्तिक मास में कृष्ण पक्ष की द्वादशी गोवत्स के रूप में मनाई जाती है।

इस दिन गाय बछड़े को पूजने का विधान है। पूजन के बाद उन्हें गेहूँ से बने पदार्थ खाने को देने चाहिए। इस दिन गाय का दूध व गेहूँ के बने पदार्थों का प्रयोग वर्जित है। कटे फल का सेवन नहीं करना चाहिए। गोवत्स की कहानी सुनने के बाद ब्राह्मणों को फल देने चाहिए।

कथा- बहुत समय पूर्व सुवर्णपुर नगर में देवदानी राजा का राज्य था। राजा के सीता और गीता दो रानियाँ थी। राजा ने एक भैंस तथा एक गाय बछड़ा पाल रखा था। सीता भैंस की देखभाल करती थी तथा गीता गाय बछड़े की देखभाल करती थी। गीता बछड़े पर पुत्र के समान रस बरसाती थी।

एक दिन भैंस ने चुगली कर दी कि गीता रानी मुझसे ईष्या करती है। ऐसा सुनकर सीता ने गाय के बछड़े को मारकर गेहूँ के ढेर में छुपा दिया।

राजा जब भोजन करने बैठा तब माँस की वर्षा होने लगी। महल के अन्दर चारों ओर रक्त और मांस दिखाई देने लगा। भोजन की थाली में मल-मूत्र हो गया। राजा की समझ में कुछ नहीं आया। तभी आकाशवाणी हुई कि हे राजन्! तुम्हारी रानी सीता ने गाय के बछड़े को मारकर गेहूँ के ढेर में छिपा दिया है। कल गोवत्स द्वादशी है। तुम भैंस को राज्य से बाहर निकालकर गोवत्स की पूजा करो। तुम्हारे तप से बछड़ा जिन्दा हो जायेगा। राजा ने ऐसा ही किया। जैसे ही राजा ने मन से बछड़े को याद किया वैसे ही बछड़ा गेहूँ के ढेर से निकल आया। यह देख राजा प्रसन्न हो गया। उसी समय से राजा ने अपने राज्य में आदेश दिया कि सभी लोग गोवत्स द्वादशी का व्रत करें।

धन तेरस (धन त्रयोदशी)

कार्तिक मास की कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी धन त्रयोदशी के रूप में मनाई जाती है। यह दीपावली के आने की शुभ सूचना है।

इस दिन धन्वन्तरि के पूजन का विधान है। कहते हैं कि इस दिन धन्वंतरि वैद्य समुद्र से अमृत कलश लेकर आये थे। इसलिए धनतेरस को धन्वंतरि जयन्ती भी कहते हैं।

इस दिन घर के टूटे फूटे पुराने बर्तनों के बदले नये बर्तन खरीदते हैं। इस दिन चाँदी के बर्तन खरीदना अत्याधिक शुभ माना जाता है।

इस दिन वैदिक देवता यमराज का भी पूजन किया जाता है। यम के लिए आटे का दीपक बनाकर घर के द्वार पर रखा जाता है। रात को स्त्रियाँ दीपक में तेल डालकर चार बत्तियाँ जलाती हैं। जल, रोली, चावल, गुड़ और फूल आदि नैवेद्य सहित दीपक जलाकर यम का पूजन करती हैं।

कथा– एक बार भगवान् विष्णु लक्ष्मीजी सहित पृथ्वी पर घूमने आये। कुछ देर बाद भगवान् श्रीविष्णु लक्ष्मीजी से बोले— मैं दक्षिण दिशा की ओर जा रहा हूँ। तुम यहीं ठहरो, परन्तु लक्ष्मीजी भी विष्णुजी के पीछे चल दीं। कुछ दूर चलने पर ईख का खेत मिला। लक्ष्मीजी एक गन्ना तोड़कर चूसने लगीं। भगवान् लौटे तो उन्होंने लक्ष्मीजी को गन्ना चूसते पाया। इस पर क्रोधित होकर उन्होंने श्राप दे दिया कि तुम जिस किसान का यह खेत है उसके यहाँ पर १२ वर्ष तक उसकी सेवा करो। विष्णु भगवान् क्षीर सागर लौट गए तथा लक्ष्मीजी किसान के यहाँ रहकर उसे धन धान्य से पूर्ण कर दिया। बारह वर्ष पश्चात् लक्ष्मीजी भगवान् विष्णु के पास जाने के लिए तैयार हो गई परन्तु किसान ने उन्हें जाने नहीं दिया। भगवान् लक्ष्मीजी को बुलाने आये परन्तु किसान ने उन्हें रोक लिया। तब विष्णु भगवान् बोले- तुम परिवार सहित गंगा स्नान करने जाओ और इन कौड़ियों को भी गंगाजल में छोड़ देना तब तक मै यहीं रहूँगा।

किसान ने ऐसा ही किया। गंगाजी में कौड़ियाँ डालते ही चार चतुर्भज निकले और कौड़ियाँ लेकर चलने को उद्यत हुए। ऐसा आश्चर्य देखकर किसान ने गंगाजी से पूछा— ये चार हाथ किसके हैं। गंगाजी ने किसान को बताया कि ये चारों हाथ मेरे ही थे। तुमने मुझे कौड़ियाँ भेट की हैं, वे तुम्हें किसने दी हैं?

किसान बोला— मेरे घर में एक स्त्री पुरुष आये हैं। वे लक्ष्मीजी और विष्णु भगवान् हैं। तुम लक्ष्मीजी को मत जाने देना, नहीं तो तुम पुनः निर्धन हो जाओगे।

किसान ने घर लौटने पर लक्ष्मीजी को नहीं जाने दिया। तब भगवान्

ने किसान को समझाया कि मेरे श्राप के कारण लक्ष्मीजी तुम्हारे यहाँ बारह वर्ष से तुम्हारी सेवा कर रही हैं। फिर लक्ष्मीजी चंचल हैं, इन्हें बड़े-बड़े नहीं रोक सके, तुम हठ मत करो।

फिर लक्ष्मीजी बोलीं— हे किसान! यदि तुम मुझे रोकना चाहते हो तो कल धनतेरस है। तुम अपना घर स्वच्छ रखना। रात्रि में घी का दीपक जलाकर रखना। मैं तुम्हारे घर आऊँगी। तुम उस वक्त मेरी पूजा करना परन्तु मैं अदृश्य रहूँगी।

किसान ने लक्ष्मीजी की बात मान ली और लक्ष्मीजी द्वारा बताई विधि से पूजा की। उसका घर धन-धान्य से भर गया। इस प्रकार किसान प्रति वर्ष लक्ष्मीजी का पूजने करने लगा तथा अन्य लोग भी उनका पूजन करने लगे।

कथा यमराज– एक बार यमदूतों ने यमराज को बताया कि महाराज अकाल मृत्यु से हमारे मन भी पसीज जाते हैं। यमराज ने द्रवित होकर कहा, क्या किया जाए? विधि के विधान की मर्यादा हेतु हमें ऐसा अप्रिय कार्य करना पड़ता है। यमराज ने अकाल मृत्यु से बचने का उपाय बताते हुए कहा— धनतेरस के दिन पूजन एवं दीपदान को विधिपूर्वक अर्पण करने से अकाल मृत्यु से छुटकारा मिल सकता है। जहाँ-जहाँ जिस-जिस घर में यह पूजन होता है, वहाँ अकाल मृत्यु का भय नहीं रहता है। इसी घटना से धनतेरस के दिन धन्वंतरि पूजन सहित यमराज को दीपदान की प्रथा का प्रचलन हुआ।

*

नरक चतुर्दशी (छोटी दीपावली)

(कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी)

धनतेरस के दूसरे दिन यह पर्व मनाया जाता है। कृष्ण पक्ष की इस चतुर्दशी का विशिष्ट नाम नरक चतुर्दशी है, क्योंकि यह माना जाता है कि आज जो व्यक्ति स्नान-ध्यान और सायं को दीपदान करता है, उसे नरक में नहीं जाना पड़ता। इस दिन नरक से मुक्ति पाने के लिए प्रातःकाल तेल लगाकर अपामार्ग का पौधा जल में डालकर स्नान करना चाहिए।

इस पर्व का संबंध स्वच्छता से अधिक है। इसीलिए इस त्यौहार को

घर का कूड़ा-कचरा साफ करने वाला त्यौहार कहते हैं। आज घर और स्वयं के शरीर की संपूर्ण सफाई विशेष रूप से करनी चाहिए। क्योंकि यह माना जाता है कि ज़ो व्यक्ति आज के दिन गंदा रहता है वह पूरे वर्ष दरिद्र और दीनहीन बना रहता है। इसीलिए इस दिन लोग घरों की सफाई करके घर का कूड़ा-कचरा बाहर फेंक देते हैं।

इस दिन शारीरिक स्वच्छता का भी विशेष महत्त्व है। इस दिन सूर्योदय से पूर्व उठकर संपूर्ण शरीर में तेल, उबटन लगाकर भली भाँति स्नान करना चाहिए। जो लोग इस दिन सूर्योदय से पूर्व उठकर स्नान नहीं करते, वर्ष भर उनके शुभ कार्यों का नाश होता है। दरिद्रता और संकट वर्षभर उनका पीछा करते हैं।

इस दिन स्नान के बाद तीन अंजुलि जल भरकर उससे यमराज के निमित्त तर्पण करना चाहिए। जिनके पिता जीवित हैं वे भी यमराज के निमित्त यह तर्पण करते हैं। धनतेरस को यमराज के निमित्ति दीपक जलाने और आज प्रातः तर्पण करने से यमराज प्रसन्न होते हैं। उस घर में न तो अकाल मृत्यु होती है और न ही उस व्यक्ति को नरक में जाना पड़ता है।

इस दिन संध्या के समय दीपक जलाए जाते हैं। इसे छोटी दीपावली भी कहते हैं। दीपक त्रयोदशी से अमावस्या तक जलाए जाते हैं। त्रयोदशी के दिन यमराज के लिए एक दीपक जलाया जाता है। अमावस्या को बड़ी दीपावली का पूजन होता है। इन तीन दिन दीपक जलाने का कारण यह बताया जाता है कि इन तीन दिनों में भगवान् वामन ने राजा बलि की पृथ्वी को नापा था। भगवान् वामन ने तीन पगों से संपूर्ण पृथ्वी, पाताल तथा बलि के शरीर को नाप लिया था।

छोटी दीपावली के दिन शाम को ग्यारह, इक्कीस अथवा इकतीस दीपक जलाने का विधान है। इनभ पाँच अथवा सात दीपक तो घी के जलाए जाते हैं और शेष तेल के। घी का एक-एक दीपक पूजा के स्थान, पानी रखने के स्थान, भण्डारगृह और गौशाला में रखा जाता है। शेष दीपक विभिन्न स्थानों पर रख दिए जाते हैं। दीपक जलाते समय रोली, चावल, खील और बताशों से इनकी पूजा भी की जाती है।

लोग त्रयोदशी, चतुर्दशी तथा अमावस्या को यम के लिए दीपक जलाकर लक्ष्मी पूजन करके दीपावली मनाते हैं, जिससे उन्हें यम यातना न सहनी पड़े तथा लक्ष्मीजी सदैव उनके साथ रहें। कहा जाता है इसी दिन

भगवान् श्रीकृष्ण की पत्नी सत्यभामा ने नरकासुर नामक दैत्य का संहार किया था।

कथा—प्राचीन समय में एक प्रतापी राजा राज्य करता था। उसने पूर्व जन्म में बहुत दान-पुण्य किए थे। उन्हीं पूर्वकृत कर्मों से इस जन्म में भी राजा ने अपार दानादि सत्कर्म किए, इससे उसे आजन्म महासुख और वैभव प्राप्त हुआ। जब उसका अंत समय आया तो एक दिन रात्रि को यमराज के दूत उन्हें लेने आए। वे बार-बार राजा को लाल आँखें निकालकर क्रुद्ध होकर कह रहे थे— राजन् ! तुम्हें नरक में चलना होगा। इस पर राजा घबराया और बोला— मैंने क्या पाप किया है, जो आप मुझे नरक में ले जाना चाहते हैं?

इस पर यमदूतों ने कहा— राजन्! आपने जो कुछ दान-पुण्य किया है, उसे तो सारा विश्व जानता है, किन्तु पाप को केवल भगवान् और धर्मराज ही जानते हैं।

राजा ने पूछा— उस पाप को मुझे भी बताओ, जिससे उसका निवारण कर सकूँ।

यमदूत बोले— तुमने बहुत पुण्य किए किन्तु एक बार तुम्हारे द्वार से भूख से व्याकुल एक ब्राह्मण लौट गया था, अतः तुम्हें नरक में जाना पड़ेगा। यमदूतों की बात सुनकर राजा काँपने लगा और बोला— हे दूतो! मैं नरक में नहीं जा सकता।

फिर राजा ने यमदूतों से विनती की कि मुझे थोड़ा समय दो। मेरी आयु एक वर्ष बढ़ा दी जाए। इसके बाद तुम मुझे बुलाने आना। तब तुम जैसा कहोगे, वैसा ही करूँगा। इस विनय को दूतों ने बिना सोच-विचार किए ही स्वीकार कर लिया और राजा की आयु एक वर्ष बढ़ा दी गई। यमदूत वापस चले गए।

राजा ने प्रातः होते ही ऋषियों के पास जाकर सारी बात कही और इस पाप से मुक्ति का उपाय पूछा।

ऋषियों ने विचार-विमर्श कर बताया— हे राजन्! तुम कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी का व्रत रहकर भगवान् श्रीकृष्ण का पूजन करो। साथ ही ब्राह्मण को भोजन कराकर तथा दान देकर सब अपराध सुनाकर

क्षमा माँगना। तब तुम पाप मुक्त हो जाओगे तथा यमराज की संतुष्टि से नरक से छूट जाओगे।

ऋषियों के कथनानुसार कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को राजा नियमपूर्वक व्रत रहा। राजा ने तेल लगा कर अपामार्ग आदि पवित्र जड़ियों के जल से स्नान किया। यमराज के निमित्ति काला कम्बल, सूप, तिल के लड्डू, लोह दण्ड, मुकुट, भुजबन्ध, नीला पीताम्बर, सिंदूर, काजल, खीर का भरा पात्र आदि दान किए। सारे दिन यमराज के दस नामों का जाप किया और रात्रि में यम दीपदान किया। रात्रि को यम की स्तुति कर गुड़, तिल का भोजन किया। इससे यमराज प्रसन्न हो गए और राजा को नरक गमन त्रास से मुक्त कर दिया। अंत में राजा ने विष्णुलोक को प्राप्त किया।

दीपावली

कार्तिक मास की अमावस्या को दीपावली का पर्व पूरे देश में बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है। इसे रोशनी का पर्व कहना भी ठीक लगता है।

जिस प्रकार रक्षा बन्धन ब्राह्मणों का, दशहरा क्षत्रियों का, होली शूद्रों का त्यौहार है, उसी प्रकार दीपावली वैश्यों का त्यौहार माना जाता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि इन पर्वों को उपरोक्त वर्ण के व्यक्ति नहीं मनाते हैं। वरन् यह पर्व सभी वर्ण के लोगों के लिये है।

इस दिन लक्ष्मीजी को प्रसन्न करने के लिए पहले से घरों की सफाई करके साफ-सुथरा कर लिया जाता है। कहा जाता है कि कार्तिक अमावस्या को भगवान् श्रीरामचन्द्रजी चौदह वर्ष का बनवास काटकर रावण को मारकर अयोध्या लौटे थे। अयोध्यावासियों ने श्रीरामचन्द्रजी के लौटने की खुशी में दीपमालाएँ जलाकर महोत्सव मनाया था।

इस दिन उज्जैन सम्राट् विक्रमादित्य का राजतिलक भी हुआ था। विक्रमी संवत् का आरम्भ तभी से माना जाता है। अतः यह नववर्ष का प्रथम दिन है।

आज के दिन व्यापारी अपने बही खाते बदलते हैं तथा लाभ-हानि का ब्यौरा तैयार करते हैं।

दीपावली

दीपावली पर जुआ खेलने की भी प्रथा है। इसका प्रधान लक्ष्य वर्षभर में भाग्य की परीक्षा करना है। वैसे इस द्यूत क्रीड़ा को राष्ट्रीय दुगुर्ण ही कहा जायेगा।

पूजन विधान– बाजार में आजकल दीपावली के पूजा हेतु पोस्टर मिलते हैं। इन्हें दीवार पर चिपकाकर या दीवार पर गेरुआ रंग से गणेश-लक्ष्मी की मूर्ति बनाकर पूजन करते हैं।

गणेश-लक्ष्मी की मिट्टी की प्रतिमा या चाँदी की प्रतिमा बाजार से लाकर दीवार पर रखी लक्ष्मी गणेश के चित्र के सामने रखते हैं। इस दिन धन के देवता कुबेर, विघ्न विनाशक गणेशजी, इन्द्रदेव तथा समस्त मनोरथों को पूरा करने वाले विष्णु भगवान्, बुद्धि की दाता सरस्वती तथा लक्ष्मी की पूजा साथ-साथ करते हैं।

दीपावली के दिन दीपकों की पूजा का विशेष महत्त्व है। इसके लिए दो थालों में दीपक रखें। छः चौमुखे दीपक दोनों थालों में रखें। छब्बीस छोटे दीपक करके जल, रोली, खील बताशे, चावल, गुड़, अबीर, गुलाल, धूप आदि से पूजन करें और टीका लगावें। व्यापारी लोग दुकान की गद्दी पर गणेश-लक्ष्मी की प्रतिमा रखकर पूजा करें। इसके बाद घर आकर पूजन करें। पहले पुरुष फिर स्त्रियाँ पूजन करें। स्त्रियाँ चावलों का बायना निकालकर उस पर रुपयें रखकर अपनी सासजी के चरण स्पर्श करके उन्हें दे दें तथा आशीर्वाद प्राप्त करें। पूजा करने के बाद दीपकों को घर में जगह-जगह पर रखें। एक चौमुखा, छः छोटे दीपक गणेश लक्ष्मीजी के पास रख दें। चौमुखा दीपक का काजल सब बड़े, बूढ़े, बच्चे अपनी आँखों में लगावें।

दूसरे दिन प्रातः चार बजे पुराने छाज में कूड़ा रखकर कूड़े को दूर फेंकने के लिए ले जाते हुए कहते हैं— लक्ष्मी आओ, दरिद्रा जाओ।

कथा– एक साहूकार था। उसकी बेटी प्रतिदिन पीपल पर जल चढ़ाने जाती थी। पीपल पर लक्ष्मीजी का वास था। एक दिन लक्ष्मीजी ने साहूकार की बेटी से कहा तुम मेरी सहेली बन जाओ। उसने लक्ष्मीजी से कहा— मैं कल अपने पिता से पूछकर उत्तर दूँगी। पिता को जब बेटी ने बताया कि पीपल पर एक स्त्री मुझे अपनी सहेली बनाना चाहती है। पिताश्री ने हाँ कर दी। दूसरे दिन साहूकार की बेटी ने सहेली बनाना स्वीकार कर लिया।

एक दिन लक्ष्मीजी साहूकार की बेटी को अपने घर ले गईं। लक्ष्मीजी ने उसे ओढ़ने के लिए शाल-दुशाला दिया तथा सोने की बनी चौकी पर बैठाया। सोने की थाली में उसे अनेक प्रकार के व्यजंन खाने को दिये। जब साहूकार की बेटी खा-पीकर अपने घर को लौटने लगी तो लक्ष्मीजी बोली तुम मुझे अपने घर कब बुला रही हो। पहले तो सेठ की पुत्री ने आनाकानी की परन्तु फिर तैयार हो गई। घर जाकर वह रूठकर बैठ गई। सेठ बोला— तुम लक्ष्मीजी को घर आने का निमंत्रण दे आयी हो और स्वयं उदास बैठी हो। तब उसकी बेटी बोली— लक्ष्मीजी ने तो मुझे इतना दिया और बहुत सुन्दर भोजन कराया। मैं उन्हें किस प्रकार खिलाऊँगी, हमारे घर में तो उसकी अपेक्षा कुछ भी नहीं है।

तब सेठ ने कहा— जो अपने से बनेगा वही खातिर कर देंगे। तू फौरन गोबर मिट्टी से चौका लगाकर सफाई कर दे। चौमुखा दीपक बनाकर लक्ष्मीजी का नाम लेकर बैठ जा। उसी समय एक चील किसी रानी का नौलखा हार उसके पास डाल गई। साहूकार की बेटी ने उस हार को बेचकर सोने की चौकी, सोने का थाल, शाल-दुशाला और अनेक प्रकार के भोजन की तैयारी कर ली।

थोड़ी देर बाद गणेशजी और लक्ष्मीजी उसके घर पर आ गये। साहूकार की बेटी ने बैठने के लिए सोने की चौकी दी। लक्ष्मी ने बैठने को बहुत मना किया और कहा कि इस पर तो राजा-रानी बैठते हैं। तब सेठ की बेटी ने लक्ष्मीजी को जबरदस्ती चौकी पर बैठा दिया। लक्ष्मीजी की उसने बहुत खातिर की इससे लक्ष्मीजी बहुत प्रसन्न हुई और साहूकार बहुत अमीर बन गया।

हे लक्ष्मीदेवी! जैसे तुमने साहूकार की बेटी की चौकी स्वीकार की और बहुत-सा धन दिया, वैसे ही सबको देना।

*

अन्नकूट-गोवर्धन पूजा

(कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा)

दीपावली के दूसरे दिन गोवर्धन की पूजा की जाती है। वेदों में इस

दिन वरुण, इंद्र, अग्नि आदि देवताओं की पूजा का विधान है। उसी दिन बलि पूजा, गोवर्धन पूजा, मार्गपाली आदि होते हैं। इस दिन गाय-बैल आदि पशुओं को स्नान कराकर, फूल-माला, धूप, चन्दन आदि से उनका पूजन किया जाता है। गायों को मिठाई खिलाकर उनकी आरती उतारी जाती है।

यह व्रजवासियों का मुख्य त्यौहार है। अन्नकूट या गोवर्धन पूजा भगवान् श्रीकृष्ण के अवतार के बाद द्वापर युग से प्रारम्भ हुई। उस समय लोग इंद्र भगवान् की पूजा करते थे तथा छप्पन प्रकार के भोजन बनाकर तरह-तरह के पकवान व मिठाइयों का भोग लगाया जाता था। ये पकवान तथा मिठाइयाँ इतनी मात्रा में होती थीं कि उनका पूरा पहाड़ ही बन जाता था।

अन्नकूट एक प्रकार से सामूहिक भोज का आयोजन है। जिसमें पूरा परिवार और वंश एक जगह बनाई गई रसोई से भोजन करता है। इस दिन चावल, बाजरा, कढ़ी, साबुत मूंग, चौरा तथा सभी सब्जियाँ एक जगह मिलाकर बनाई जाती है। मंदिरों में भी अन्नकूट बनाकर प्रसाद के रूप में बाँटा जाता है।

इस दिन प्रातः गाय के गोबर से गोवर्धन बनाया जाता है। अनेक स्थानों पर इसको मनुष्याकार बनाकर पुष्पों, लताओं आदि से सजाया जाता है। शाम को गोवर्धन की पूजा की जाती है। पूजा में धूप, दीप, नैवेद्य, जल, फल, फूल, खील, बताशे आदि का प्रयोग किया जाता है। गोवर्धन में ओंगा अनिवार्य रूप से रखा जाता है। पूजा के बाद गोवर्धनजी की सात परिक्रमाएँ उनकी जय बोलते हुए लगाई जाती है। परिक्रमा के समय एक व्यक्ति हाथ में जल का लोटा व अन्य खील (जौ) लेकर चलते हैं। जल के लोटे वाला व्यक्ति पानी की धारा गिराता हुआ तथा अन्य जौ बोते हुए परिक्रमा पूरी करते है।

गोवर्धनजी गोबर से लेटे हुए पुरुष के रूप में बनाए जाते हैं। इनकी नाभि के स्थान पर एक कटोरी या मिट्टी का दीपक रख दिया जाता है। फिर इसमें दूध, दही, गंगाजल,शहद, बताशे आदि पूजा करते समय डाल दिए जाते हैं और बाद में इसे प्रसाद के रूप में बाँट देते हैं।

अन्नकूट में चंद्र-दर्शन अशुभ माना जाता है। यदि प्रतिपदा में द्वितीया हो तो अन्नकूट अमावस्या को मनाया जाता है। इस दिन प्रातः तेल मलकर

स्नान करना चाहिए। इस दिन पूजा का समय कहीं प्रातःकाल है तो कहीं दोपहर और कहीं पर संध्या समय गोवर्धन पूजा की जाती हैं। इस दिन संध्या के समय दैत्यराज बलि का पूजन भी किया जाता है।

गोवर्धन गिरि भगवान् के रूप में माने जाते हैं और इस दिन उनकी पूजा अपने घर में करने से धन, धान्य, संतान और गोरस की वृद्धि होती है। आज का दिन तीन उत्सवों का संगम होता है।

इस दिन दस्तकार और कल-कारखानों में कार्य करने वाले कारीगर भगवान् विश्वकर्मा की पूजा भी करते है। इस दिन सभी कल-कारखाने तो पूर्णतः बंद रहते हैं, घर पर कुटीर उद्योग चलाने वाले कारीगर भी काम नहीं करते। भगवान् विश्वकर्मा और मशीनों एवं उपकरणों का दोपहर के समय पूजन किया जाता है।

कथा— एक बार महर्षि ने ऋषियों से कहा— कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा को गोवर्धन व अन्नकूट की पूजा करनी चाहिए। तब ऋषियों ने महर्षि से पूछा— अन्नकूट क्या है? गोवर्धन कौन है? इनकी पूजा क्यों तथा कैसे करनी चाहिए? इसका क्या फल होता है? इन सबका विधान विस्तार से कहकर कृतार्थ करें।

महर्षि बोले— एक समय की बात है- भगवान् श्रीकृष्ण अपने सखा और गोप-ग्वालों के साथ गउएँ चराते हुए गोवर्धन पर्वत की तराई में पहुँचे। वहाँ पहुँचकर उन्होंने देखा कि हजारों गोपियाँ ५६ (छप्पन) प्रकार के भोजन रखकर बड़े उत्साह से नाच-गाकर उत्सव मना रही थीं। पूरे व्रज में भी तरह-तरह के मिष्ठान्न तथा पकवान बनाए जा रहे थे।

श्रीकृष्ण ने इस उत्सव का प्रयोजन पूछा तो गोपियाँ बोली— आज तो घर-घर में यह उत्सव हो रहा होगा, क्योंकि आज वृत्रासुर को मारने वाले मेघदेवता, देवराज इन्द्र का पूजन होगा। यदि वे प्रसन्न हो जाएँ तो व्रज में वर्षा होती है, अन्न पैदा होता है, व्रजवासियों का भरण-पोषण होता है, गायों को चारा मिलता है तथा जीविकोपार्जन की समस्या हल होती है।

यह सुनकर श्रीकृष्ण ने कहा— यदि देवता प्रत्यक्ष आकर भोग लगाएँ, तब तो तुम्हें यह उत्सव व पूजा जरूर करनी चाहिए। यह सुनकर गोपियों ने कहा— कोटि-कोटि देवताओं के राजा देवराज इंद्र की इस प्रकार निंदा नहीं करनी चाहिए। यह तो इंद्रोज नामक यज्ञ है। इसी के

प्रभाव से अतिवृष्टि तथा अनावृष्टि नहीं होती।

श्रीकृष्ण बोले— इंद्र में क्या शक्ति है, जो पानी बरसा कर हमारी सहायता करेगा? उससे अधिक शक्तिशाली तो हमारा यह गोवर्धन पर्वत है। इसी के कारण वर्षा होती है। अतः हमें इंद्र से भी बलवान् गोवर्धन की पूजा करनी चाहिए।

इस प्रकार भगवान् श्रीकृष्ण के वाग्जाल में फँसकर व्रज में इंद्र के स्थान पर गोवर्धन की पूजा की तैयारियाँ शुरू हो गईं। सभी गोप-ग्वाल अपने-अपने घरों से सुमधुर मिष्ठान, पकवान लाकर गोवर्धन की तलहटी में श्रीकृष्ण द्वारा बताई विधि से गोवर्धन पूजा करने लगे।

उधर श्रीकृष्ण ने अपने आधिदैविक रूप से पर्वत में प्रवेश करके व्रजवासियों द्वारा लाए गए सभी पदार्थों को खा लिया उन सबको आशीर्वाद दिया। सभी व्रजवासी अपने यज्ञ को सफल जानकर बड़े प्रसन्न हुए।

तभी नारद मुनि इंद्रोज यज्ञ देखने की इच्छा से वहाँ आए। गोवर्धन की पूजा देखकर उन्होंने व्रजवासियों से पूछा तो उन्होंने बताया- श्रीकृष्ण के आदेश से इस वर्ष इंद्र महोत्सव के स्थान पर गोवर्धन पूजा की जा रही है।

यह सुनते ही नारद उल्टे पाँव इंद्रलोक पहुँचे तथा उदास तथा खिन्न होकर बोले— हे राजन्! तुम महलों में सुख की नींद सो रहे हो, उधर गोकुल के निवासी गोपों ने इन्द्रोज बंद करके आप से बलवान गोवर्धन की पूजा शुरू कर दी है। आज से यज्ञ आदि में उसका भाग तो हो ही गया। यह भी हो सकता है कि किसी दिन श्रीकृष्ण की प्रेरणा से वे तुम्हारे राज्य पर आक्रमण करके इंद्रासन पर भी अधिकार कर लें।

नारद तो अपना काम करके चले गए। अब इंद्र क्रोध में लाल-पीले हो गए। ऐसा लगता था, जैसे उनके तन-बदन में अग्नि ने प्रवेश कर लिया हो। इंद्र ने इसमें अपनी मान हानि समझकर अधीर होकर मेघों को आज्ञा दी— गोकुल में जाकर प्रलयकालिक मूसलाधार वर्षा से पूरा गोकुल तहस-नहस कर दें, वहाँ प्रलय का-सा दृश्य उत्पन्न कर दें।

पर्वताकार प्रलयंकारी मेघ व्रजभूमि पर जाकर मूसलाधर बरसने लगे। कुछ ही पलों में ऐसा दृश्य उत्पन्न हो गया कि सभी बाल-ग्वाल भयभीत हो उठे। भयानक वर्षा देखकर व्रजमंडल घबरा गया। सभी व्रजवासी

श्रीकृष्ण की शरण में जाकर बोले--- भगवन् ! इंद्र हमारी नगरी को डुबाना चाहता है, आप हमारी रक्षा कीजिए।

गोप-गोपियों की करुण पुकार सुनकर श्रीकृष्ण बोले---- तुम सब गऊओं सहित गोवर्धन पर्वत की शरण में चलो। वही सब की रक्षा करेंगे।

कुछ ही देर में सभी गोप-ग्वाल पशुधन सहित गोवर्धन की तलहटी में पहुँच गए। तब श्रीकृष्ण ने गोवर्धन को अपनी कनिष्ठा अंगुली पर उठाकर छाता सा तान दिया और सभी गोप-ग्वाल अपने पशुओं सहित उसके नीचे आ गए। सात दिन तक गोप-गोपिकाओं ने उसी की छाया में रहकर अतिवृष्टि से अपना बचाव किया। सुदर्शन चक्र के प्रभाव से व्रज-वासियों पर एक बूंद भी जल नहीं पड़ा। इससे इंद्र को बड़ा आश्चर्य हुआ।

यह चमत्कार देखकर और ब्रह्माजी द्वारा श्रीकृष्णावतार की बात जानकर इंद्र को अपनी भूल पर पश्चाताप हुआ। वह स्वयं व्रज गए और भगवान् श्रीकृष्ण के चरणों में गिरकर अपनी मूर्खता पर क्षमायाचना करने लगे। सातवें दिन श्रीकृष्ण ने गोवर्धन को नीचे रखा और व्रजवासियों से कहा--- अब तुम प्रतिवर्ष गोवर्धन पूजा कर अन्नकूट का पर्व मनाया करो। तभी से यह उत्सव (पर्व) अन्नकूट के नाम से मनाया जाने लगा।

भैयादूज (यम द्वितीया)

हिन्दू समाज में भाई-बहन की अमर प्रेम के दो त्यौहार आते हैं। एक रक्षा-बन्धन जो श्रावण मास की पूर्णिमा को मनाया जाता है। जिसमें भाई बहन की रक्षा करने की प्रतिज्ञा करता है। दूसरा भाई दूज का त्यौहार आता है। जिसमें बहन-भाई की लम्बी आयु की प्रार्थना करती है। भाई दूज का त्यौहार कार्तिक मास की द्वितीया को मनाया जाता है। इस दिन बहनें बेरी-पूजन भी करती हैं। इस दिन बहन-भाइयों को तेल मलकर गंगा-यमुना में स्नान करना चाहिए। यदि यह सम्भव न हो तो बहन के घर जाकर नहाना चाहिए। बहन भाई को भोजन कराकर तिलक लगाकर गोला देती है। इस दिन बहन के घर भोजन करने का विशेष महत्त्व है।

कथा- भगवान सूर्यदेव की पत्नी का नाम छाया था। उसकी कोख से यमराज तथा यमुना का जन्म हुआ। यमुना अपने भाई यमराज से बड़ा स्नेह करती थी। वह उससे बराबर निवेदन करती कि वह उसके घर आकर

भोजन करे, लेकिन यमराज अपने काम में व्यस्त रहने के कारण यमुना की बात को टाल जाते थे। कार्तिक शुक्ल द्वितीया को यमुना ने अपने भाई यमराज को भोजन करने के लिए बुलाया।

बहन के घर आते समय यमराज ने नरक में निवास करने वाले जीवों को मुक्त कर दिया। भाई को देखते ही यमुना ने हर्ष-विभोर होकर भाई का स्वागत-सत्कार किया तथा भोजन करवाया। इससे प्रसन्न होकर यमराज ने बहन से वर माँगने को कहा। बहन ने भाई से कहा— "आप प्रतिवर्ष इस दिन मेरे यहाँ भोजन करने आया करेंगे तथा इस दिन जो बहन अपने भाई को टीका करके भोजन खिलाए उसे आपका भय न रहे।"

यमराज 'तथास्तु' कहकर यमुना को अमूल्य वस्त्राभूषण देकर यमपुरी का चले गये।

ऐसी मान्यता है कि जो भाई आज के दिन यमुना में स्नान करके पूरी श्रद्धा से बहनों के आतिथ्य को स्वीकार करते हैं उन्हें यम का भय नहीं रहता।

सूर्य-षष्ठीव्रत (डाला छठ)
(कार्तिक शुक्ल षष्ठी)

यह व्रत पुत्रवती सुहागिन नारियाँ ही करती हैं इस व्रत में पंचमी से सप्तमी तक तीन दिन उपवास किया जाता है। पंचमी के दिन केवल एक बार नमक रहित भोजन किया जाता है, तो षष्ठी के पूरे दिन जल भी ग्रहण नहीं किया जाता है। शाम के समय डूबते हुए सूर्य को अर्घ्य देकर फल, पकवान और पुष्प आदि भगवान् भास्कर को अर्पित किए जाते हैं। निराहार रहकर रात्रि भर जागरण किया जाता है और दूसरे दिन सूर्योदय के पूर्व ही नदी अथवा सरोवर पर जाकर स्नान करने और उदित होते हुए भगवान भास्कर की पूजा कर अर्घ्य देने के बाद ही मुँह में जल डाला जाता है। यह व्रत काफी कठिन है परन्तु इसे करने वाली स्त्रियाँ पति-पुत्र, धन-सम्पति एवं ऐश्वर्य से परिपूर्ण भी रहती हैं। यह व्रत पूर्वीय प्रान्तों में बहुत धूम-धाम से मनाया जाता है।

*

गोपाष्टमी

गायों, बछड़ों और सम्पूर्ण गोवंश की विशिष्ट पूजा का दिन है

दीपावली के सात-आठ दिन बाद आने वाली यह अष्टमी। गायों, बछड़ों, बैलों आदि को प्रातः स्नान कराने के बाद उनको सजाया जाता है। अधिकांश गो-पालक एक दिन पूर्व ही इनके शरीर पर मेंहदी से तरह-तरह के चित्र आदि बना देते हैं। गायों की पूजा तो की ही जाती है, उन्हें मिठाइयां भी खिलाई जाती हैं। अनेक नगरों और कस्बों में सजी हुई गायों के बड़े-बड़े जुलूस भी निकालते हैं और साथ ही भगवान् श्रीकृष्ण से सम्बन्धित झांकियाँ भी प्रस्तुत की जाती हैं।

अक्षय नवमी (आमला नवमी)

कार्तिक शुक्ल नवमी को व्रत, पूजा, तर्पण आदि का अनन्त फल होता है और वह अक्षय हो जाता है, इसलिए इसका नाम अक्षय नवमी है। इस दिन गौ, पृथ्वी, सोना और वस्त्राभूषण का दान करने से ब्रह्महत्या जैसे महापाप भी मिट जाते हैं। इसे ही 'धात्री नवमी' और 'कूष्माण्ड नवमी' भी कहते हैं। इस दिन प्रातः स्नानादि करके आमले के वृक्ष के नीचे पूर्व की ओर मुख करके बैठकर षोडशोपचार या पंचोपचार से पूजन करके उसकी जड़ में दूध की धारा गिरायें और उसके चारों और सूत लपेटें,कपूर या घृतयुक्त बत्ती से आरती करके उसकी परिक्रमा करें।

देवोत्थान एकादशी

दीपावली के पश्चात् आने वाली इस एकादशी को 'देव उठानी' या 'प्रबोधिनी एकादशी' भी कहा जाता है। आषाढ़ एकादशी की तिथि को देव शयन करते हैं और इस कार्तिक शुक्ल एकादशी के दिन उठते हैं। इसीलिए इसे देवोत्थान (देव-उठान) एकादशी कहा जाता है।

कहा जाता है कि इस दिन भगवान् विष्णु, जो क्षीरसागर में सोए हुए थे, चार माह उपरान्त जागे थे। विष्णुजी के शयन काल के चार मासों में विवाहादि मांगलिक कार्यों का आयोजन करना निषेध है। हरि के जागने के बाद ही इस एकादशी से सभी शुभ तथा मांगलिक कार्य शुरू किए जाते हैं।

कुछ धार्मिक व्यक्ति इस दिन तुलसी और शालिग्राम के विवाह का आयोजन भी करते हैं। तुलसी के वृक्ष और शालिग्राम की यह शादी सामान्य विवाह की तरह पूरे धूमधाम से की जाती है। शास्त्रों में कहा गया है कि जिन दम्पतियों के कन्या नहीं होती, वे जीवन में एक बार तुलसी

का विवाह करके कन्यादान का पुण्य अवश्य प्राप्त करें।

इस दिन सारे घर को लीप-पोतकर साफ करना चाहिए तथा स्नानादि से निवृत्त होकर आँगन में चौक पूरकर भगवान् विष्णु के चरणों को चित्रित करना चाहिए। एक ओखली में गेरू से चित्र बनाकर फल, पकवान, मिष्ठान, बेर, सिंघाड़े, ऋतुफल और गन्ना उस स्थान पर रखकर परात अथवा डलिया से ढक दिया जाता है तथा एक दीपक भी जला दिया जाता है। रात्रि को परिवार के सभी वयस्क सदस्य देवताओं सहित भगवान् विष्णु का विधिवत पूजन करने के बाद प्रातःकाल भगवान् को शंख, घंटा-घड़ियाल आदि बजाकर जगाते हैं तथा इस प्रकार कहते हैं—

'उठो देवा, बैठा देवा, आंगुरिया चटकाओ देवा।'

इसके बाद पूजा करके क़था सुनी जाती है।

कथा– एक समय भगवान् नारायण से लक्ष्मीजी ने कहा—'हे नाथ! अब आप दिन-रात जागा करते हैं और सोते हैं तो लाखों-करोड़ों वर्ष तक सो जाते हैं तथा उस समय समस्त चराचर का नाश भी कर डालते हैं। अतः आप नियम से प्रतिवर्ष निद्रा लिया करें। इससे मुझे भी कुछ समय विश्राम करने का समय मिल जाएगा।

लक्ष्मीजी की बात सुनकर नारायण मुस्कराए और बोले— 'देवी ! तुमने ठीक कहा है। मेरे जागने से सब देवों को और खासकर तुमको कष्ट होता है। तुम्हें मेरी सेवा से जरा भी अवकाश नहीं मिलता। अस्तु, तुम्हारे कथनानुसार आज से मैं प्रतिवर्ष चार मास वर्षा ऋतु में शयन किया करूँगा। उस समय तुमको और देवगणों को अवकाश होगा। मेरी यह निद्रा अल्पनिद्रा और प्रलय कालीन महानिद्रा कहलाएगी। यह मेरी अल्पनिद्रा मेरे भक्तों को परम मंगलकारी उत्सवप्रद तथा पुण्यवर्धक होगी। इस काल में मेरे जो भी भक्त मेरे शयन की भावना कर मेरी सेवा करेंगे तथा शयन और उत्पादन के उत्सव आनन्दपूर्वक आयोजित करेंगे उनके घर में तुम्हारे सहित निवास करूँगा।

भीष्म पंचक स्नान एवं व्रत

(कार्तिक शुक्ल एकादशी से पूर्णिमा तक)

जो महिलाएँ पूरे कार्तिक मास तक किसी पवित्र नदी अथवा सरोवर

में स्नान नहीं कर पातीं, वे भी पाँच दिन का यह पंचक स्नान तो करती ही हैं। सामान्य स्नान और पूजा के स्थान पर जब यह क्रिया निम्न विधि से की जाती है, तब कहलाने लगती है भीष्म पंचक व्रत।

पूजन में सामान्य पूजा के अतिरिक्त पहले दिन भगवान् के हृदय का कमल के पुष्पों से, दूसरे दिन कटि-प्रदेश का विल्वपत्रों से, तीसरे दिन घुटनों का केतकी के पुष्पों से, चौथे दिन चरणों का चमेली के पुष्पों से और पाँचवें दिन सम्पूर्ण विग्रह का तुलसी की मंजरियों से पूजन करना चाहिए। हमारे देश में अधिकतर स्त्रियाँ एकादशी और द्वादशी को निराहार, त्रयोदशी को शाकाहार और चतुर्दशी तथा पूर्णमासी को फिर निराहार रहकर प्रतिपदा को प्रातःकाल में द्विज-दम्पती को भोजन कराकर इस व्रत को पूर्ण करती हैं।

वैकुण्ठ चतुर्दशी

(कार्तिक शुक्ल चतुर्दशी)

यह व्रत कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को मनाया जाता है। कहीं-कहीं इसे मार्गशीर्ष शुक्ल चतुर्दशी को मनाया जाता है। इस दिन व्रत रखकर भगवान् बैकुण्ठनाथ का पूजन और सवारी निकालने का उत्सव किया जाता है। कहीं-कहीं देवमंदिरों में बैकुण्ठ द्वार बने हुए होते हैं जो इसी दिन खोले जाते हैं तथा उसी में-से भगवान् की सवारी निकाली जाती है। ऐसा विश्वास है कि इस दिन भगवान् की सवारी के साथ बैकुण्ठ दरवाजे में-से निकलने वाला प्राणी भगवान् का कृपापात्र बनकर बैकुण्ठ में जाने का अधिकारी हो जाता है।

इस दिन बैकुण्ठवासी भगवान् की विधिवत् पूजा करके तथा स्नान, आचमन कराके बाल भोग लगाएँ। तत्पश्चात पुष्प, दीप, चंदन आदि सुगन्धित पदार्थों से आरती उतारें। वेदपाठी ब्राह्मणों को भोजन कराकर दान-दक्षिणा देनी चाहिए। यह व्रत और पूजा करने से बैकुण्ठ धाम अवश्य मिलता है।

कथा– एक बार नारदजी मृत्युलोक से घूमकर नारायण के धाम बैकुण्ठ पहुँचे। भगवान् विष्णु ने प्रसन्नतापूर्वक बैठाते हुए आने का कारण पूछा।

नारदजी ने कहा— 'भगवन्! आपके धाम में पुण्यात्मा जीव प्रवेश पाते हैं, यह तो उनके कर्म की विशेषता हुई। फिर आप जो करुणानिधान कहलाते हैं, उस कृपा का क्या रूप है। आपने अपना नाम तो कृपानिधान रख लिया है किन्तु इससे केवल आपके प्रिय भक्त ही तर पाते हैं, सामान्य नर-नारी नहीं। इसलिए कृपा करके कोई ऐसा सुलभ मार्ग बताएँ, जिससे अन्य भक्त भी मुक्ति पा सकें।

भगवान् बोले— 'नारद! मैं तुम्हारे प्रश्न का तात्पर्य नहीं समझ पाया?' नारद ने कहा—'हे प्रभु! आपकी करुणा का द्वार कभी शुभ कार्य न करने वालों के लिए भी खुलता है?'

इस पर भगवान् बोले— 'हे नारद! सुनो! कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को जो नर-नारी व्रत का पालन करते हुए श्रद्धा-भक्ति से पूजन करेंगे, उनके लिए साक्षात् स्वर्ग होगा।

इसके बाद उन्होंने उसी समय जय-विजय को बुलाकर कहा— 'देखो, आज से यह नियम तुम पालन करना कि प्रति वर्ष कार्तिक शुक्ल चतुर्दशी को मेरे बैकुण्ठ धाम का द्वार, प्रत्येक जीव को जो उस दिन व्रत रखकर पवित्र हो जाए और मेरे धाम में प्रवेश के लिए इच्छा करे खोल देना। उस दिन जीव के पूर्व कर्मों का लेखा देखने की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी। इस दिन जो मनुष्य किंचित मात्र भी मेरा नाम लेकर पूजन करेगा, उसे बैकुण्ठ धाम मिलेगा।

यह सुनकर नारद मुस्कराए और बोले— 'भगवन्! अब आप कृपानिधान कहलाने के सच्चे अधिकारी हैं।

कार्तिक पूर्णिमा

कार्तिक मास की पूर्णिमा "**त्रिपुरी पूर्णिमा**" भी कहलाती हैं। इस दिन यदि कृत्तिका नक्षत्र हो तो 'महाकार्तिकी' होती है, भरणी नक्षत्र होने से विशेष फल देती है और रोहिणी नक्षत्र होने पर इसका महत्त्व बहुत अधिक बढ़ जाता है। इसी दिन सायंकाल में भगवान् का मत्स्यावतार हुआ

था। इस दिन दिये हुए दानादि का दस यज्ञों के समान फल होता है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, अंगिरा और आदित्य ने इसे 'महापुनीत' पर्व कहा है। इस दिन किये हुए गंगा-स्नान, दीप-दान, होम, यज्ञ उपासना आदि का विशेष महत्त्व है और इन सभी सत्कर्मों का अनंत फल होता है। इस दिन कृत्तिका पर चन्द्रमा और बृहस्पति हो तो यह 'महापूर्णिमा 'कहलाती है। कृत्तिका पर चन्द्रमा और विशाखा पर सूर्य हों तो 'पद्मक' योग होता है, जो पुष्कर में भी दुर्लभ है। इस दिन संध्याकाल में त्रिपुरोत्सव करके दीप-दान करने से पुनर्जन्मादि नहीं होता। इस तिथि में कृत्तिका में विश्व स्वामी का दर्शन करने से ब्राह्मण सात जन्म तक वेदपाठी और धनवान् होता है।

इस दिन चन्द्रोदय के समय शिवा, संभूति, संतति, प्रीति, अनुसूया और क्षमा- इन छह कृत्तिकाओं का पूजन करना चाहिए। कार्तिकी पूर्णिमा की रात्रि में व्रत करके वृषदान करने से शिव-पद प्राप्त होता है। गाय, हाथी, घोड़ा, रथ, घी आदि का दान करने से सम्पत्ति बढ़ती है। इस दिन उपवास करके भगवान् का स्मरण-चिन्तन करने से अग्निष्टोम यज्ञ के समान फल प्राप्त होता है और सूर्य लोक की प्राप्ति होती है। मेष अर्थात् भेड़ दान करने से ग्रहयोग के कष्ट नष्ट हो जाते हैं। कार्तिक पूर्णिमा को अपनी अथवा परायी अलंकृता कन्या का दान करने से 'संतान-व्रत' पूर्ण होता है। कार्तिक्र पूर्णिमा में प्रारम्भ करके प्रत्येक पूर्णिमा को रात्रि में व्रत और जागरण करने से सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं, ऐसा शास्त्रों का कथन है।

*

मार्गशीर्ष [अगहन] माह के पर्व एवं त्यौहार

भैरव जयन्ती

मार्गशीर्ष मास की कृष्ण पक्ष की अष्टमी को भैरव जयन्ती मनाई जाती है। इसे कालाष्टमी भी कहते हैं। इस तिथि को भैरवजी का जन्म हुआ था।

इस दिन व्रत रखकर जल अर्घ्य देकर भैरवजी का पूजन करते हैं। भैरवजी की सवारी कुत्ता है। इसलिए कुत्ते का भी पूजन करते हैं। रात्रि जागरण करके शिव-पार्वती की कथा सुननी चाहिए। भैरवजी का मुख्य हथियार "दण्ड" है, जिसके कारण इन्हें "दण्डपति" भी कहते हैं।

भगवान् शिव के दो रूप हैं- भैरव और विश्वनाथ।

भैरव का दिन रविवार और मंगलवार माना जाता है। इन दोनों दिन इनकी पूजा से भूत-प्रेत बाधाएँ समाप्त हो जाती हैं।

कथा- एक बार ब्रह्मा तथा विष्णु में यह विवाद छिड़ गया कि विश्व का धारण हार तथा परम तत्त्व कौन है? इस विवाद को हल करने के लिए महर्षियों को बुलाया गया। महर्षियों ने निर्णय दिया कि "परम तत्त्व कोई अव्यक्त सत्ता है। ब्रह्मा तथा विष्णु उसी विभूति से बने हैं।" विष्णुजी ने ऋषियों की बात मान ली, परन्तु ब्रह्माजी ने यह स्वीकार नहीं किया। वे अपने को ही परमतत्त्व मानते थे। परमतत्त्व की अवज्ञा बहुत बड़ा अपमान था। शिवजी ने तत्काल भैरव का रूप धारण करके ब्रह्मा का अष्टमी के दिन गर्व चूर-चूर कर दिया। इसलिए इस दिन को भैरव अष्टमी कहा जाने लगा।

दत्तात्रेय-जयन्ती

(मार्गशीर्ष कृष्ण दशमी)

मार्गशीर्ष कृष्ण दशमी को दत्तात्रेय-जयन्ती मनाई जाती है। दत्तात्रेय के तीन सिर और छह भुजाएँ मानी जाती हैं। उन्हें ब्रह्मा, विष्णु और महेश-

तीनों देवताओं की संयुक्त मूर्ति भी माना जाता है। दत्तात्रेय अपनी बहुज्ञता के लिए भारत के पौराणिक इतिहास में बहुत प्रसिद्ध हैं। आप महान् पतिव्रता सती अनसुइयाजी के पुत्र थे। आपमें ब्रह्मा-विष्णु-महेश तीनों की शक्तियाँ और अंश तो समाहित थे ही, साथ ही था विपुल ज्ञान और वैराग्य भी।

उत्पन्ना एकादशी

(मार्गशीर्ष कृष्ण एकादशी)

इस एकादशी को उत्पन्ना एकादशी भी कहते हैं। इस दिन भगवान् श्रीकृष्ण की पूजा की जाती है। इस व्रत को करने से मनुष्य को जीवन में सुख-शांति मिलती है। मृत्यु के पश्चात् विष्णुलोक का वास प्राप्त होता है। व्रत रहने वाले को दशमी के दिन-रात में भोजन नहीं करना चाहिए। एकादशी के दिन ब्रह्मवेला में ही भगवान् का पुष्प, जल, धूप, दीप, अक्षत से पूजन करके निराजल व्रत रहना चाहिए। इस व्रत में केवल फलों का ही भोग लगाया जाता है। परनिंदक, चोर, दुराचारी, ब्राह्मणद्रोही, नास्तिक इन सबसे बात नहीं करनी चाहिए। यदि भूल से ऐसी गलती हो जाए तो सूर्य के सम्मुख उपस्थित होकर प्रार्थना करनी चाहिए।

कथा– सतयुग में मुर नामक दैत्य चंद्रवती नामक राजधानी में रहता था। उसने सब देवताओं पर विजय प्राप्त कर इंद्रासन को जीत लिया। वह सूर्य, चंद्र आदि देवताओं के स्थान पर स्वयं प्रकाश पुंज बनकर चमकने लगा। देवताओं ने भगवान् विष्णु की शरण ली। तब भगवान् ने उसे मारने का उपाय सोचा और युद्ध प्रारम्भ कर दिया।

विष्णुजी ने बाणों से दानवों का तो संहार कर दिया, पर मुर न मरा क्योंकि वह किसी देवता के वरदान से अजेय था। युद्ध करते-करते जब काफी समय बीत गया तो भगवान् वह मुर से लड़ना छोड़ बद्रिकाश्रम की गुफा में आराम करने लगे। मुर ने भी पीछा न छोड़ा। मुर उनका पीछा करता आया और ज्योंही विष्णुजी पर प्रहार करना चाहा त्योंही विष्णुजी के शरीर से एक कन्या पैदा हुई जिसने मुर का संहार कर दिया।

भगवान् विष्णु उस कन्या पर प्रसन्न होकर बोले- 'हे देवी! तुम आज मार्गशीर्ष कृष्ण एकादशी को प्रकट हुई हो इसलिए तुम्हारा नाम एकादशी

होगा। तुझे लोग उत्पन्ना एकादशी कहकर पुकारेंगे। आज से इस एकादशी के दिन तुम्हारा पूजन होगा। तुम इस संसार के मायाज़ाल में मोहवश उलझे प्राणियों को मुझ तक लाने में सक्षम होगी। जो व्यक्ति इस दिन व्रत रहकर तुम्हारी पूजा करेंगे, वे पाप मुक्त होकर विष्णुलोक प्राप्त करेंगे। तेरी आराधना करने वाले प्राणी धन-धान्य से पूर्ण होकर सुख-लाभ प्राप्त करेगा, वही कन्या 'एकादशी' हुई। वर्ष भर की चौबीस एकादशियों में इस एकादशी का अपूर्व माहात्म्य है, विष्णुजी से उत्पन्न होने के कारण ही इसका नाम 'उत्पन्ना एकादशी' पड़ा।

धन व्रत

(मार्गशीर्ष शुक्ल प्रतिपदा)

दीपावली की रात्रि को तो धन-धान्य और सुख-वैभव की प्राप्ति हेतु लक्ष्मीजी की पूजा की जाती है, इसी प्रयोजन के लिए अगहन (मार्गशीर्ष) मास की अमावस्या के दूसरे दिन भगवान् विष्णु की पूजा, व्रत और हवन किए जाते हैं।

इस दिन भगवान् विष्णु की प्रतिमा को स्नान कराने और संपूर्ण पूजा का विधान तो एकादशी की पूजाओं के समान ही है, परन्तु रात्रि को हवन अतिरिक्त रूप से किया जाता है। दोपहर के बाद ब्राह्मणों को भोजन कराकर उन्हें दक्षिणा देकर विदा कर देते हैं।

व्रत वाले दिन रात्रि को भगवान् विष्णु की मूर्ति सामने रखकर विधि-विधान से हवन किया जाता है तथा भगवान् विष्णु के मंत्र बोलते हुए आहुतियाँ दी जाती हैं। यह हवन किसी विद्वान् ब्राह्मण की देखरेख में ही किया जाता है। हवन के बाद एक बार फिर भगवान् की आरती उतारी जाती है। तत्पश्चात मूर्ति लाल कपड़े में लपेटकर हवन कराने वाले ब्राह्मण को दान कर दी जाती है।

शास्त्रों का कथन है कि विधि-विधानपूर्वक हवन करने से अग्निदेव कर्ता के सभी पापों को भस्म कर देते हैं और उसे बल, बुद्धि एवं तेज प्रदान करते हैं। भगवान् विष्णु आराधक को धन-धान्य और सौभाग्य तो देते ही हैं, वह अंत में मोक्ष का अधिकारी भी बन जाता है।

मोक्षदा एकादशी

(मार्गशीर्ष शुक्ल एकादशी)

मार्गशीर्ष मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी मोक्षदा एकादशी कहलाती है। इस दिन भगवान् श्रीकृष्ण ने महाभारत युद्ध के प्रारम्भ होने के पूर्व मोहित हुए अर्जुन को श्रीमद्भगवद्गीता का उपदेश दिया था।

इस दिन श्रीकृष्ण का स्मरण व गीता का पाठ करना चाहिए। गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने कर्मयोग पर विशेष बल दिया है तथा आत्मा को अजर-अमर अविनाशी बताया है। जिस प्रकार मनुष्य पुराने कपड़ों को उतारकर नए कपड़े धारण कर लेता है, उसी प्रकार आत्मा भी जर्जर शरीर को छोड़कर नया शरीर धारण कर लेती है।

मोक्षदा एकादशी के दिन मिथ्या भाषण, चुगली तथा अन्य दुष्कर्मों को त्याग कर सद्गुण को अपनाने से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

मार्गशीर्ष (अगहन) पूर्णिमा व्रत

मार्गशीर्ष पूर्णिमा के व्रत में भगवान् नारायण की पूजा का विधान है। सबसे पहले नियमपूर्वक पवित्र होकर स्नान करें। सफेद कपड़े पहनें और आचमन करें, इसके बाद व्रत रखने वाले "ॐ नमो नारायण" मंत्र का उच्चारण करें। चौकोर वेदी बनावें, जिसकी लम्बाई-चौड़ाई एक हाथ हो। चौकोर वेदी पर हवन करने के लिए अग्नि स्थापित करें। तेल, घी, शाकला आदि की आहुति दें। हवन की समाप्ति के बाद भगवान् का पूजन करना चाहिए और अपना व्रत उनको अर्पण कर निम्न श्लोक कहे—

पौर्णमास्यं निराहारः स्थिता देव तवाज्ञया।

मोक्ष्यादि पुण्डरीकाक्ष परेऽह्नि शरणं भव।।

हे देव पुण्डरीकाक्ष ! मैं पूर्णिमा को निराहार व्रत रखकर दूसरे दिन आपकी आज्ञा से भोजन ग्रहण करूँगा। आप मुझे अपनी शरण में लेवें।

इस प्रकार भगवान् को व्रत समर्पित करके सायंकाल चन्द्रमा के उदय होने पर दोनों घुटनों के बल बैठकर सफेद फूल, अक्षत, चंदन, जल

सहित चन्द्रमा को अर्घ्य देवें। अर्घ्य देते समय चन्द्रमा से विनती करें।

'हे चन्द्रदेव ! आपका जन्म अत्रि कुल में हुआ है और आप क्षीर सागर में प्रकट हुए हैं। मेरे अर्घ्य को स्वीकार करें।' चन्द्रमा को अर्घ्य देने के पश्चात् हाथ जोड़कर प्रार्थना करें।

'हे भगवन् ! आप श्वेत किरणों से सुशोभित हैं, आपको मेरा नमस्कार है, आप द्विजों के राजा हैं। आपको मेरा नमस्कार हैं। आप रोहिणी के पति हैं, आपको मेरा नमस्कार है।'

इस प्रकार रात्रि होने पर भगवान् की मूर्ति के पास शयन करें। दूसरे दिन सुबह ब्राह्मणों को भोजन करायें और दान देकर विदा करें।

पौष मास के व्रत एवं त्यौहार

सफला एकादशी

(पौष कृष्ण एकादशी)

इस एकादशी को सफला एकादशी नाम से व्रत किया जाता है। इस दिन भगवान् अच्युत की पूजा की जाती है। भगवान् अच्युत भी लक्ष्मीपति भगवान् विष्णु का ही एक नाम है। अतः इस व्रत का सम्पूर्ण विधान भी अन्य एकादशियों के समान ही है। इस व्रत को करने से समस्त कार्यों में निःसन्देह सफलता मिलती है, इसीलिए इसका नाम सफला एकादशी है।

कथा- प्राचीन काल में चम्पावती नगर के राजा महिष्मत का लुम्पक नामक एक मात्र पुत्र बड़ा दुराचारी था। राजा ने दुःखी होकर उसे नगर से निकाल दिया। वह जंगल में रहकर जानवरों को मारकर उनका मांस भक्षण करने लगा। एक बार वह गम्भीर रूप से बीमार हो गया। वह चलने फिरने योग्य भी न रहा। ऐसे में वह लगातार दो दिन निराहार रहा। उस दिन दशमी

और एकादशी थी। भूख से व्याकुल हुआ वह भगवान् को याद करने लगा। इस प्रकार निराहार रहकर भगवान् का नाम लेने से उसका एकादशी का व्रत पूर्ण हो गया। भगवान् उस पर प्रसन्न हो गये। अगले दिन प्रातःकाल ही भगवान् की कृपा से एक सुसज्जित घोड़ा वहाँ आया। वह उस पर चढ़कर अपने पिता के राज्य में वापस आया। अब उसकी मति पलट गई थी और वह धार्मिक हो गया था। राजा ने प्रसन्न होकर उसे अपना राज्य सौंप दिया था। इस प्रकार एकादशी व्रत के प्रभाव से वन में भूखा मरने वाला राजकुमार राजा बनकर सुख भोगने लगा।

ब्रह्म-गौरी पूजन

(पौष शुक्ल तृतीया)

इस दिन माता गौरी का पूजन षोडशोपचार सामग्री से विधिवत् पूजा की जाती है। इस दिन गौरी की पूजा करने वाली स्त्रियाँ सांसारिक सुख भोगकर अंत में शिवलोक को प्राप्त करती है।

पुत्रदा एकादशी

(पौष शुक्ल एकादशी)

इस एकादशी को पुत्रदा एकादशी कहा जाता है। इस दिन सुदर्शन चक्रधारी भगवान् विष्णुजी की पूजा की जाती है। इस व्रत को करने से संतान की प्राप्ति और उसकी रक्षा होती है।

कथा– एक नगर में सुकेतु और शैव्या नामक पति-पत्नी निवास करते थे। संतान न होने के कारण वे बहुत व्याकुल रहते थे। इस दुःख से व्याकुल हुए वे दोनों अपना शरीरांत करने वन में गये। परंतु आत्महत्या को सबसे बड़ा पाप जानकर उन्होंने यह विचार त्याग दिया और समीप ही स्थित ऋषियों के एक आश्रम में पहुँचे। ऋषियों ने उनका दुःख जानकर उन्हें पुत्रदा एकादशी का व्रत करने को कहा। सुकेतु और शैव्या ने घर आकर ऋषियों के कथनानुसार पुत्रदा एकादशी का विधिपूर्वक व्रत किया, जिसके फलस्वरूप उनके घर में अत्यन्त सुन्दर और गुणवान् पुत्र उत्पन्न हुआ।

पौष पूर्णिमा स्नान

पौष मास की पूर्णिमा से माघ मास का पवित्र स्नान का शुभारम्भ होता है। इस दिन सूर्योदय से पहले नदी, तालाब, कुआँ आदि के जल से स्नान करते हैं। इसके बाद भगवान् वासुदेव की पूजा की जाती है। पूजा समाप्ति के बाद ब्राह्मणों को भोजन कराकर दान दक्षिणा देकर विदा करते हैं। इससे भगवान् वासुदेव प्रसन्न रहते हैं।

जो इस स्नान को करते हैं, वे देव-विमानों में बैठकर स्वर्ग लोक को जाते हैं।

माघ मास के व्रत एवं त्यौहार

गणेश चतुर्थी व्रत

गणेश चतुर्थी का व्रत माघ मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को किया जाता है। इस दिन विद्या-बुद्धि-वारिधि के स्वामी गणेशजी तथा चन्द्रमा की पूजा की जाती है।

विधि– नैवेद्य सामग्री तिल, ईख, अमरूद, गुड़ तथा घी से चन्द्रमा व गणेशजी को भोग लगाया जाता है। दिनभर व्रत रखकर सायंकाल चन्द्रमा को दूध का अर्घ्य देते हैं। गौरी गणेश की स्थापना कर उनका पूजन किया जाता है तथा वर्ष भर उन्हें घर में रखते हैं।

नैवेद्य को रात्रि भर ढककर रखा जाता है। जिसे "पहार" कहते हैं। प्रातःकाल पहार को पुत्र खोलता है तथा भाई बन्धुओं में बाँट दिया जाता है।

कथा– एक बार भगवान् शंकर ने अपने दोनों पुत्रों कार्तिकेय तथा गणेश से पूछा तुममें-से कौन ऐसा वीर है जो देवताओं की रक्षा कर सके। तब कार्तिकेय ने अपने को देवताओं का सेनापति प्रमाणित करते हुए देव रक्षा योग्य अधिकारी बताया। इसके बाद भगवान् शंकर ने गणेशजी से पूछा। तब गणेशजी ने कहा— मैं तो बिना सेनापति बने ही देवताओं के सब संकट हर सकता हूँ। शिवजी ने दोनों बालकों की परीक्षा लेने हेतु कहा कि तुम दोनों में–से जो पृथ्वी की परिक्रमा सबसे पहले करके मेरे पास आ जायेगा वही वीर तथा सर्वश्रेष्ठ घोषित किया जायेगा।

कार्तिकेय अपने वाहन मोर पर चढ़कर पृथ्वी की परिक्रमा करने चल पड़े। गणेशजी ने सोचा अपने वाहन चूहे पर बैठकर पृथ्वी परिक्रमा पूरी करने में बहुत समय लग जायेगा, इसलिए कोई और युक्ति सोचनी चाहिए।

गणेशजी ने अपने माता-पिता की सात बार परिक्रमा की और कार्तिकेय के आने की प्रतीक्षा करने लगे। कार्तिकेय ने लौटने पर अपने पिता से कहा गणेश तो पृथ्वी की परिक्रमा करने गया ही नहीं। इस पर गणेशजी बोले— मैंने अपने माता-पिता की सात बार परिक्रमा की है। माता-पिता में ही समस्त तीर्थ निहित हैं, इसलिए मैंने आपकी सात बार परिक्रमा की है।

गणेशजी की नियुक्त सुनकर सब देवता और कार्तिकेय ने उनकी बात सिर झुकाकर स्वीकार कर ली। तब शंकरजी ने गणेशजी को आशीर्वाद दिया कि समस्त देवताओं में सर्वप्रथम तुम्हारी पूजा होगी। गणेशजी ने पिता की आज्ञानुसार देवताओं का संकट दूर किया।

यह शुभ समाचार जानकर भगवान् शंकर ने कहा कि चतुर्थी तिथि के दिन चन्द्रमा तुम्हारे मस्तक का ताज बनकर पूरे विश्व को शीतलता प्रदान किया करेगा। जो स्त्री पुरुष इस तिथि पर तुम्हारा पूजन तथा चन्द्रमा को अर्घ्य देगा, उसका दैहिक तथा भौतिक ताप दूर होगा और ऐश्वर्य,पुत्र,सौभाग्य को प्राप्त करेगा।

षट्तिला एकादशी

(माघ कृष्ण एकादशी)

माघ मास के कृष्ण पक्ष की एकादशी षट्तिला एकादशी कहलाती है। इस दिन भगवान् विष्णु की पूजा की जाती है। कुछ लोग बैकुण्ठ रूप में भी पूजन करते हैं। इस दिन काली गाय तथा काले तिलों के दान का विशेष महत्त्व है। शरीर पर तिल के तेल की मालिश, तिल जल स्नान, तिल जलपान तथा तिल पकवान की इस दिन विशेष महत्ता है। इस दिन तिलों का हवन करके रात्रि जागरण किया जाता है।

इस दिन पंचामृत में तिल मिलाकर भगवान् को स्नान करावें। तिल

मिश्रित पदार्थ स्वयं खाएँ तथा ब्राह्मण को खिलाएँ। इस दिन छः प्रकार से तिल प्रयोग होने के कारण इसे षट्तिला एकादशी के नाम से पुकारते है।

कथा– प्राचीन काल में काशी (वाराणसी) में एक गरीब लकड़हारा रहता था। गरीबी से परेशान वह बेचारा कभी-कभी भूखा ही बच्चों सहित आकाश के तारे गिनता रहता। उसके जीवन के गुजर-बसर का सहारा केवल जंगल की लकड़ी थी। वह भी जब न मिलती तो सारा परिवार भूखा ही सो जाता।

एक दिन वह किसी साहूकार के घर लकड़ी पहुँचाने गया। वहाँ जाकर देखा कि किसी उत्सव की तैयारी की जा रही है। यह देखकर उसने साहूकार से पूछा— सेठजी ! यह किसी पूजा की तैयारी हो रही है?'

तब सेठजी ने बताया—'यह षट्तिला व्रत की तैयारी की जा रही है।' लकड़हारे ने पूछा— 'इस व्रत से क्या लाभ है?' साहूकार ने बताया— 'इससे घोर पाप, रोग, हत्या और कष्ट से मुक्ति होकर धन तथा सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।'

यह सुनकर उस लकड़हारे ने घर जाकर अपनी स्त्री सहित उस दिन के पैसे से सामान खरीदकर एकादशी का विधिपूर्वक व्रत किया। जिसके परिणामस्वरूप वह शीघ्र ही धनवान हो गया।

मौनी अमावस्या

माघ मास को अमावस्या मौनी अमावस्या के रूप में मनायी जाती है। इस अमावस्या को मौन रखते हैं, इसलिए इसे मौनी अमावस्या कहते हैं। कहते हैं कि सृष्टि के संचालक मनु का जन्म दिन भी इसी अमावस्या को हुआ था। अनेक प्राणी माघ मास में प्रतिदिन संगम में स्नान करते हैं। माघ मास का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अमावस्या है।

सूर्य सप्तमी

माघ मास के शुक्ल पक्ष की सप्तमी सूर्य सप्तमी के रूप में मनायी जाती है। इस दिन सूर्य भगवान् को गंगाजल से अर्घ्य देते हैं। दीपक,

कपूर, धूप, लाल पुष्प आदि से सूर्य भगवान् की स्तुति करते हैं।

सूर्य की ओर मुख करके स्तुति करनी चाहिए। इससे शारीरिक चर्मरोग आदि विकार नहीं होते हैं। प्राचीन ज्योतिष शास्त्र तथा आधुनिक विज्ञान से सूर्य का बड़ा महत्त्व है। जीवों तथा वनस्पतियों में जीवन प्रदान करने वाले सूर्य ही माने जाते हैं। इस दिन सूर्य पुराण का पाठ करना चाहिए। सूर्य का सारथी अरुण माना जाता है जो पंगु है। बालक जन्म काल में मूक और पंगु होते हैं। भगवान् सूर्य अपने प्रकाश से इन दोषों को दूर करते हैं।

भीष्माष्टमी

माघ मास की शुक्ल पक्ष की अष्टमी को भीष्म पितामह ने अपना शरीर को त्यागा था। इसलिए यह दिन उनके निर्वाण का दिन है। जो भीमाष्टमी के रूप में मनाया जाता है। इस दिन भीष्म पितामह के निमित्त तिलों के साथ तर्पण तथा श्राद्ध करने वाले व्यक्ति को संतान प्राप्त होती है।

कथा– भीष्म पितामह का असली नाम देवव्रत था। वह शान्तनु की पटरानी गंगा की कोख से उत्पन्न हुए थे।

एक बार राजा शान्तनु शिकार खेलते-खेलते गंगा के पार चले गए। लौटते समय नाव पर उनकी भेंट हरिदास केवट के पुत्री मत्स्य गंधा से होती है। वे उसके रूप लावण्य पर मुग्ध हो जाते हैं। राजा शान्तनु हरिदास से उसका अपने लिए हाथ माँगते हैं। परन्तु वह राजा के प्रस्ताव को ठुकरा देता है कि "महाराज आपका ज्येष्ठ पुत्र देवव्रत है। जो राज्य का उत्तराधिकारी है। यदि आप मेरी कन्या के पुत्र को राज्य का उत्तराधिकारी बनाने की घोषणा करें तो मैं तैयार हूँ। शान्तनु ने इस बात को मानने से मना कर दिया परन्तु वह मत्स्य गंधा को न भुला सके। उसकी याद में व्याकुल रहने लगे। एक दिन देवव्रत ने उनसे व्याकुलता का कारण पूछा। सारा वृतान्त ज्ञात होने पर देवव्रत स्वयं केवट हरिदास के पास गये और गंगाजल हाथ में लेकर शपथ ली कि मैं आजीवन अविवाहित रहूँगा। इसी कठिन प्रतिज्ञा के कारण उनका नाम भीष्म पड़ा। राजा शान्तनु ने देवव्रत से प्रसन्न होकर उसे इच्छित मृत्यु का वरदान दिया।

कौरव पाण्डव युद्ध में दुर्योधन ने अपनी हार होती देख भीष्म पितामह पर संदेह व्यक्त करते हुए कहा कि आप अधूरे मन से युद्ध कर रहे हैं। आपका मन पाण्डवों की तरफ है। भीष्म यह सुनकर बड़े दुःखी हुए तथा **''आज जौ हरिहिं न शस्त्र गहाऊँ''** ऐसी प्रतिज्ञा की। तत्पश्चात् घमासान युद्ध हुआ। भगवान् श्रीकृष्ण को भीष्म प्रतिज्ञा की रक्षा के लिए सुदर्शन चक्र को हाथ में उठाना पड़ा। भगवान् श्रीकृष्ण की प्रतिज्ञा थी कि मैं युद्ध में शस्त्र नहीं उठाऊँगा। श्रीकृष्ण की प्रतिज्ञा भंग होते ही भीष्म पितामह युद्ध बन्द करके शरशैय्या पर लेट गये।

महाभारत के युद्ध की समाप्ति पर जब सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायण हुए तब भीष्म पितामह ने अपना शरीर त्याग दिया। इसलिए माघ शुक्ल अष्टमी उनकी पावन-स्मृति में उत्सव के रूप में मनाते हैं।

जया एकादशी

(माघ शुक्ल एकादशी)

इस दिन भगवान् केशव का पुष्प, जल, अक्षत, रोली तथा विशिष्ट सुगन्धित पदार्थों से पूजन करके आरती करनी चाहिए। भगवान् को भोग लगाए गए प्रसाद को भक्त को स्वयं खाना चाहिए।

इस दिन ब्राह्मणों को यथाशक्ति दान देना चाहिए। इस व्रत के करने वाले मनुष्य को भूत, प्रेत, पिशाच आदि निकृष्ट योनियों में जाने का भय नहीं रहता।

कथा– एक समय की बात है, इंद्र की सभा में एक गंधर्व गीत गा रहा था। परन्तु उसका मन अपनी पत्नी में आसक्त था। अतएव स्वर-लय भंग हो रहा था। यह देखकर इंद्र को बड़ा क्रोध आया। इंद्र ने रुष्ट होकर गंधर्व और उसकी पत्नी को पिशाच योनि में जाने का शाप दे दिया।

इंद्र ने क्रोधित होकर कहा— 'दुष्ट गंधर्व ! तू जिसकी याद में मस्त है वह राक्षसी हो जाएगी।' यह सुनकर वह बहुत घबराया और इंद्र से क्षमा माँगने लगा। इंद्र के कुछ न बोलने पर वह घर चला गया। वहाँ आकर देखने पर उसे पत्नी पिशाचिनी के रूप में मिली और दोनों पति-पत्नी पिशाच बने हुए इधर-उधर भटकने लगे।

शापनिवृत्ति के लिए उसनें अनेक यत्न किए परन्तु सब असफल

रहे। अंत में वह हारकर बैठ गया। अकस्मात् एक दिन ऋषि नारद से उसका साक्षात्कार हो गया। उन्होंने उनके दुःख का कारण पूछा। गंधर्व ने सब बातें यथावत बता दीं।

उसके दुःख के बारे में जानकर नारद ने माघ शुक्ल पक्ष की जया एकादशी का व्रत करने को कहा।

यह सुनकर गंधर्व बोला— 'महात्मन् ! इस पिशाच योनि में रहकर मैं कैसे इस व्रत को कर सकता हूँ।' तब ऋषि ने दयावश स्वयं जया एकादशी का विधि-विधान से व्रत एवं पूजन करके उसका पुण्य उन दोनों गंधर्वों के निमित्त दान कर दिया।

इस पुण्य के मिलते ही दोनों अपने पूर्व स्वरूप में आ गए और उन्होंने ऋषि को कोटिशः धन्यवाद किया। फिर दोनों प्रतिवर्ष नियमपूर्वक जया एकादशी का व्रत करने लगे।

माघ पूर्णिमा

यह स्नान पौष मास की पूर्णिमा से प्रारम्भ होकर माघ की पूर्णिमा तक होता है। अर्थात् पौष शुक्ल पूर्णिमा माघ स्नान की आरम्भिक तिथि है। पूरा माघ प्रयाग में कल्पवास करके त्रिवेणी स्नान करने का अंतिम दिन 'माघ पूर्णिमा' ही है। माघ पूर्णिमा का धार्मिक दृष्टि से विशेष महत्त्व है। स्नान पर्वों का यह अंतिम प्रतीक है।

इस पर्व में यज्ञ, तप तथा दान का विशेष महत्व है। इस दिन स्नानादि से निवृत्त होकर भगवान् विष्णु का पूजन, पितरों का श्राद्ध और गरीबों को दान करने का विशेष फल है। निर्धनों को भोजन, वस्त्र, तिल, कम्बल, गुड़, कपास, घी, लड्डू, फल, अन्न, पादुका आदि का दान करना चाहिए। ब्राह्मणों को भोजन कराने का माहात्म्य व्रत करने से ही होता हैं।

इस दिन गंगा-स्नान करने से मनुष्य की भव बाधाएँ कट जाती हैं। माघ मास में प्रतिदिन प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व किसी पवित्र नदी, तालाब, कुआँ, बावड़ी आदि के शुद्ध जल से स्नान करके भगवान् मधुसूदन की पूजा करनी चाहिए। पूरे माघ मास भगवान् मधुसूदन की प्रसन्नता के लिए नित्य ब्राह्मण को भोजन कराना, दक्षिणा देना अथवा मगद के लड्डू जिसके अंदर स्वर्ण या रजत छिपा दी जाती है, प्रतिदिन

स्नान करके ब्राह्मणों को देना चाहिए। इस मास में काले तिलों से हवन और काले तिलों से ही पितरों का तर्पण करना चाहिए।

मकर संक्रान्ति के समान ही तिल के दान का इस मास में विशेष महत्त्व माना जाता है। माघ स्नान करने वाले पर भगवान् माधव प्रसन्न रहते हैं तथा उसे सुख-सौभाग्य,धन-संतान तथा स्वर्गादि उत्तम लोकों में निवास तथा देव विमानों में विहार का अधिकार देते हैं। यह माघ स्नान परम पुण्यशाली व्यक्ति को ही कृपा अनुग्रह से प्राप्त होता है। माघ स्नान का संपूर्ण विधान वैशाख मास के स्नान के समान ही होता है। सूर्य को अर्घ्य देते समय इस मंत्र को बोलना चाहिए-

'ज्योति धाम सविता प्रबल, तुमरे तेज प्रताप।
छार-छार ह्वै जल बहै, जन्म-जन्म का पाप।।

*

फाल्गुन मास के व्रत एवं त्यौहार

जानकी व्रत

(फाल्गुन कृष्ण अष्टमी)

इस व्रत में जनकसुता श्री जानकीजी का पूजन होता है। गुरुवर वशिष्ठजी की आज्ञा से भगवान् श्रीरामचन्द्रजी ने समुद्र तट की तपोमय भूमि पर बैठकर यह व्रत किया था। इसमें जौ, चावल, तिल आदि के चरू का हवन और पूए का नैवेद्य अर्पण किया जाता है। अपनी अभीष्ट सिद्धि के लिए यह व्रत किया जाता है। कुछ वैष्णव ग्रन्थों के मतानुसार वैशाख शुक्ल नवमी को जानकीजी का जन्म हुआ था। जो व्यक्ति ऐसा मानते हैं वे नवमी को जानकी नवमी के नाम से यह व्रत करते हैं।

*

विजया एकादशी

(फाल्गुन कृष्ण एकादशी)

इस दिन भगवान् विष्णु की पूजा की जाती है। इस व्रत के प्रभाव से दुःख-दारिद्र्य दूर होकर समस्त कार्यों में विजय प्राप्त होती है। इस व्रत को करने वाला किसी काम में विफलता का मुँह नहीं देखता।

कहते हैं फाल्गुन कृष्ण एकादशी के दिन ही भगवान् राम लंका पर आक्रमण करने के लिए समुद्र तट पर पहुँचे थे। जब समुद्र ने राम को पार उतरने का मार्ग नहीं दिया तो उन्होंने समुद्र तट पर निवास करने वाले ऋषियों से उपाय पूछा।

तब आपस में मंत्रणा करके ऋषियों ने कहा— 'हे राम ! आप तो अनन्त सागरों को पार करने वाले, सर्वशक्तिमान् हैं। फिर भी जब आपने पूछा ही है तो सुनिए, हम ऋषि-मुनि प्रत्येक काम को शुरू करने से पूर्व व्रत-अनुष्ठान करते हैं। आप भी फाल्गुन कृष्ण एकादशी का व्रत कीजिए। इस व्रत की विधि इस प्रकार है—

दशमी तिथि को एक मिट्टी का बर्तन लेकर उसे पवित्र जल से भरकर सप्तधान्य (सात प्रकार के अनाज) पर स्थापित करें। उसके पास पीपल, आम, बड़, पाकड़ तथा गूलर के पत्ते रखें और मंगल दृश्यों से सजाएँ। फिर एक बर्तन में जौ भरकर उसे कलश पर स्थापित करें। जौ के बर्तन में श्रीलक्ष्मीनारायण (विष्णु भगवान्) की प्रतिमा स्थापित करें और उनका पूजन करें।

इस तिथि को २४ घंटे भजन-कीर्तन करके व्यतीत करें। रात्रि जागरण के पश्चात् प्रातःकाल जल सहित कलश को सागर के निमित्त अर्पित कर दें। द्वादशी के दिन अन्न से भरा घड़ा किसी ब्राह्मण को दान दें।

इस व्रत के प्रभाव से समुद्र आपको रास्ता दे देगा और लंका पर विजय भी प्राप्त होगी। बस उसी दिन से इस व्रत एवं एकादशी की पूजा का प्रचलन शुरू हो गया।

*

महाशिवरात्रि व्रत
(फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी)

यह भगवान् शंकर का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण व्रत हैं। इस दिन प्रातःकाल स्नानादि से पवित्र होकर अपने पापों को नाश करने और अक्षयफल की प्राप्ति की कामना से यह शिवरात्रि व्रत करता हूँ, ऐसा संकल्प करके भगवान् शंकर की विधिपूर्वक पूजा करनी चाहिए। दिनभर उपवास करना और पत्र, पुष्पों और वस्त्रों से सजाकर एक सुन्दर मण्डप तैयार करना चाहिए।

मण्डप में सर्वतोभद्र वेदी बनाकर उस पर कलश स्थापित करके कलश पर शिव-पार्वती की स्वर्णमयी मूर्ति स्थापित करनी चाहिए। मूर्ति के पास ही भगवान् शिव के वाहन नंदी की भी चाँदी की प्रतिमा बनानी चाहिए। भगवान् शंकर की बिल्वपत्रों से पूजा करनी चाहिए। रातभर जागरण करके भगवान् शिव की कथाओं का श्रवण-मनन करना चाहिए। दूसरे दिन प्रातःकाल स्नान-संध्या के पश्चात् हवन करके ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा दें और भोजन कराकर स्वयं भी भोजन करना चाहिए।

पूजन-विधि– प्रातःकाल नदी में या ठण्डे पानी में स्नान करके शुद्ध धुले वस्त्र धारण कर श्रद्धा भक्ति सहित व्रत रखकर मंदिर में अथवा घर पर ही शिव-पार्वती की पूजा की जाती है। पूजन में गंगा जल, बिल्वपत्र, पुष्प, धूतरे के फल, आक के फल, पुष्प, पत्र, विजया (भाँग), इलायची, लौंग, दूध, घी, शहद, चीनी, कमल गट्टा, प्रसाद-भोग इत्यादि को प्रयोग करें। भोग लगावें, आरती उतारें और धूप-दीप समर्पित करें। ''शिव चालीसा'' अथवा ''शिव सहस्रनाम'' का पाठ करना चाहिए। 'ॐ नमः शिवाय, ॐ महेश्वराय नमः' इत्यादि दिव्य शिव मंत्रों का अधिकाधिक जाप करें। पाठ और जाप के पश्चात् शंकरजी पर घुटी-पिसी भाँग चढ़ाई जाती है। शेष भाँग का शिवजी के प्रसाद के रूप में स्वयं पान करें तथा शिव भक्तों एवं परिवार के सदस्यों को शिव प्रसाद के रूप में देवें। जिन परिवारों में पुत्र का जन्म अथवा विवाह होता है, लड़की की माँ शिवजी पर पानी का घड़ा चढ़ाती हैं।

एकादशियों के समान ही इस व्रत में भी नमक और अन्न का सेवन न करें, केवल फलाहार करें। फलाहार शाम को करना चाहिये। रात्रि में जागरण करें तथा शिवजी का भजन करें। यदि रात्रि में नींद सताये तो भगवान् की प्रतिमा के समीप ही शयन करें। इस व्रत के दिन चारपाई पर बैठने तथा सोने का निषेध है। उत्तरी भारत में गंगाजी से पैदल गंगाजल की कावरें लाकर भी विभिन्न शिव-मन्दिरों पर चढ़ाई जाती हैं और शिव मन्दिरों में रात्रि भर शिवजी के भजनों का गायन-वादन भी होता है।

आसमाता की पूजा

आसमाता की पूजा का व्रत फाल्गुन मास की शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से अष्टमी तक कभी भी किया जा सकता है।

विधान– व्रत के दिन लकड़ी की पटरी पर जल का भरा लोटा रखें। लोटे पर एक स्वास्तिक चिह्न बनायें और चावल चढ़ावें। गेहूँ के सात दानें हाथ में लेकर कहानी सुनें। हलवा, पूड़ी तथा रुपये रखकर बायना निकालकर सासजी को चरण स्पर्श करके देना चाहिए।

कथा– एक आसलिया बावलिया नाम का आदमी था। उसे जुआ खेलने का शौक था। इसके साथ-साथ वह ब्राह्मणों को भोजन कराता था। उसकी इस आदत से उसकी भाभियों ने उसे घर से निकाल दिया।

वह घूमता हुआ एक शहर में पहुँच गया। वह आसमाता का नाम लेकर एक जगह बैठ गया। उसने आस पास के आदमियों के द्वारा शहर में प्रचारित करवा दिया कि एक उच्च्व कोटि का जुआ खेलने वाला आया है।

यह बात राजा तक भी पहुँच गई। राजा ने उसे जुआ खेलने के लिए बुलाया। जुए में राजा अपना राजपाट सब कुछ हार गया। आसलिया बावलिया राजा को जुए में हराकर स्वयं राजा बन गया।

इधर आसलिया के घर पर भोजन का अकाल पड़ गया। जब घर वालों को यह पता चल कि उनका भाई राजा को हराकर स्वयं राजा बन गया है तो उसके भाई-भावज, माता उसको देखने शहर गए।

अपने बेटे को राजा बना देखकर माँ की आँखों में आँसू आ गए। राजा ने अपनी माता के चरण स्पर्श किए। तब उसकी माँ ने उससे कहा

कि "मैं आसमाता का उद्यापन करूँगी।"

तब सब लोगों ने घर जाकर आसमाता का उद्यापन किया। उसके बाद आसलिया बावलिया सुख से राज्य करने लगा।

हे आसमाता! जैसे तुमने आसलिया बावलिया को राजपाट दिया, वैसे ही सबकी मनोकामना पूरी करना।

आमलकी एकादशी

(फाल्गुन शुक्ल एकादशी)

यह व्रत फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी को किया जाता है। आँवले के वृक्ष में भगवान् का निवास होने के कारण उसी के नीचे भगवान् का पूजन किया जाता है। यही आमलकी एकादशी कहलाती है।

इस दिन व्रत रखकर आँवले का उबटन, आँवले के जल से स्नान, आँवला पूजन, आँवला खाना तथा आँवला दान करना चाहिए।

सर्वप्रथम व्रत करने वाले को स्नानादि से निवृत्त होकर आँवले के वृक्ष को भी स्नान कराना चाहिए। फिर आँवले के वृक्ष का धूप, दीप, चंदन, रोली, पुष्प, अक्षत आदि से पूजन कर उसके नीचे ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिए।

कथा– प्राचीन काल में चित्रसेन नामक राजा राज्य करता था। उनके राज्य में एकादशी व्रत का बहुत महत्त्व था। राजा की आमलकी एकादशी पर बहुत श्रद्धा थी। उसके राज्य में समस्त प्रजाजन एकादशी का व्रत किया करते थे।

एक दिन राजा शिकार करते हुए जंगल में बहुत दूर निकल गया, तभी कुछ जंगली और पहाड़ी म्लेच्छों ने उसे घेर लिया। उन म्लेच्छों ने राजा के ऊपर-अस्त्र-शस्त्रों से वार किया, मगर देव कृपा से राजा पर जो भी शस्त्र चलाए जाते, वे पुष्प में बदल जाते।

चूंकि म्लेच्छ सब संख्या में अधिक थे, अतः राजा को उन्होंने घेर लिया। उनके आक्रमण से राजा संज्ञाहीन होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। तभी राजा के शरीर से एक दिव्य शक्ति प्रगट हुई और समस्त राक्षसों को मारकर अदृश्य हो गई।

जब राजा की चेतना लौटी तो राक्षसों को मरा हुआ देख उसे बड़ा आश्चर्य हुआ कि इन्हें किसने मारा? तभी आकाशवाणी हुई— 'हे राजन्! यह सब राक्षस तुम्हारे आमलकी एकादशी का व्रत करने के प्रभाव से मारे गए हैं। तुम्हारे देह से उत्पन्न आमलकी एकादशी की वैष्णवी शक्ति ने इनका संहार किया है। वह इन्हें मारकर पुनः तुम्हारे शरीर में प्रवेश कर गई।'

यह सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और वापस लौटकर राज्य में सबको एकादशी का माहात्म्य सुनाया। उन राक्षसों के नाश से राजा और समस्त प्रजा सुखपूर्वक रहने लगी।

श्याम जी की जात

श्याम जी की जात फाल्गुन की शुक्ल पक्ष की द्वादशी को लगती है।

विधान- घर के आँगन में गोबर से एक स्थान लीपकर उस पर मिट्टी बिछाएँ। उसके ऊपर घी का दीपक जलाएँ। दीपक के आगे कंडे की आग रखें। अग्नि में घी डालें। रोली, चावल, जल, फूल तथा नारियल आदि चढ़ाकर पूजन करें। रोली का टीका माथे पर लगाएँ। इसके बाद दोनों हाथ जोड़कर दण्डवत प्रणाम करें। इसके बाद ब्राह्मण को भोजन कराने के बाद घर के सब लोग प्रसाद ग्रहण कर भोजन करें।

होलिका पूजन एवं दहन

हमारे देश में दीपावली के समान ही यह त्यौहार सबसे अधिक धूमधाम और सर्वाधिक आनन्द एवं उल्लास के साथ मनाया जाता है वह होली ही है। यद्यपि समय के परिवर्तन और शिक्षा के प्रचार-प्रसार ने इसके साथ जुड़ी रंगों की बहार और गायन-वादन के कार्यक्रमों को काफी कम कर दिया है, फिर भी यह हमारा सामाजिक पर्व है। जिसमें अमीर-गरीब, स्त्री-पुरुष, बालक-वृद्ध और जाति-पाँति की दीवारें टूट जाती हैं। यद्यपि होलिका दहन ही नहीं इसका पूजन और होली हेतु गोबर की गुलेरियाँ बनाना धार्मिक कृत्य है और महिलाएँ इस दिन व्रत भी रखती हैं, परन्तु व्यावहारिक रूप में यह धार्मिक से अधिक सामाजिक पर्व है।

होली के पन्द्रह बीस दिन पहले से ही गोबर के पतले-पतले उपले और अँजुलि के आकार की गुलेरियाँ बनाना प्रारम्भ हो जाता है। इनके
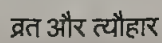
बीच में बनाते समय ही उंगली से एक छेद बना दिया जाता है। इनके सूख जाने पर इन्हें रस्सियों में पिरोकर मालाएँ बनाई जाती हैं। होलिका दहन के दो तीन दिन पूर्व खुले मैदानों और अन्य निर्धारित स्थानों पर लकड़ी-कण्डे आदि रखना प्रारम्भ कर दिया जाता है। उनमें ही रख दी जाती हैं ये मालाएँ। कुछ स्थानों पर इन सामूहिक होलिकाओं के साथ-साथ एक मकान में रहने वाले सभी परिवार मिलकर अतिरिक्त रूप से भी होलियाँ जलाते हैं और उनमें रखते हैं ये मालाएँ।

होली फाल्गुन मास की पूर्णिमा को रात्रि में जलाई जाती है। शास्त्रों के अनुसार भद्रा में होलिका दहन वर्जित है। यही कारण है कि किसी वर्ष तो यह दहन सायं सात-आठ बजे ही हो जाता है तो किसी वर्ष प्रातःतीन-चार बजे। होलिका दहन तो रात्रि में होता है, परन्तु महिलाओं द्वारा इस सामूहिक होली की पूजा दिन में दोपहर से लेकर शाम तक की जाती है। महिलाएँ एक पात्र में जल और थाली में रोली, चावल, कच्चे सूत की पिण्डी, कलावा, अबीर अर्थात् गुलाल और नारियल आदि लेकर जाती हैं होलिका माई का पूजन करने। इन सामग्रियों से होलिका का पूजन किया जाता है और जल चढ़ाया जाता है।

जहाँ तक धार्मिक विधान का प्रश्न है, घर के पुरुषों को इस दिन हनुमानजी और भैरवदेव का विशेष पूजन भी करना चाहिए। सभी को होली का व्रत करना चाहिए और होलिका दहन के समय आग की लपटों के दर्शन करने बाद ही भोजन करना चाहिए। अग्निदेव की पूजा और नवीन अनाजों की अग्नि में आहुति का पर्व है होली। लेकिन अब तो व्यावहारिक रूप में चने के होले और जौ की बालों को होली की आग में भून लाते हैं। कुछ परिवारों में आज के दिन सास को पूड़ी और हलुवे का विशेष बायना भी दिया जाता है। होलिका दहन के दूसरे दिन जली हुई होली की पूजा की जाती है और फाग खेली जाती है। दसिया का डोरा भी इसी दिन लिया जाता है और हफ्ते भर बाद होता है इससे सम्बन्धित शीतलाष्टमी अथवा बासोढ़े का पूजन।

चैत्र मास के पर्व एवं त्यौहार

धूलिका पर्व

चैत्र मास की कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा अर्थात् फाल्गुन पूर्णिमा के दूसरे दिन धूलिका त्यौहार मनाया जाता है। इस दिन होली की अवशिष्ट राख की वंदना की जाती है। उस राख को मस्तक पर लगाते हैं और एक दूसरे से गले मिलते हैं। एक दूसरे पर अबीर गुलाल, रंग, कुमकुम आदि की वर्षा करते हैं।

*

सम्पदा जी का पूजन

चैत्र मास के कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को धन सम्पत्ति की देवी सम्पदाजी का डोरा बाँधते हैं। डोरा बाँधते समय और डोरा खोलते समय व्रत रखकर कथा सुनते हैं। व्रत में पूजन करने के बाद दिन में एक बार हलवा-पूरी का भोजन किया जाता है। डोरे में सोलह तार और सोलह गाँठें लगाकर हल्दी में रंग लेते हैं।

कथा– हमारे देश में एक राजा हुए थे– नल। उनकी पत्नी का नाम था दमयन्ती। एक बार चैत्र मास की प्रतिपदा को एक बुढ़िया रानी दमयन्ती के पास आई। उसने अपने गले में पीला गाँठ लगा डोरा बाँध रखा था। रानी ने उससे डोरी के बारे में पूछा तो वह बोली— "यह सम्पदा का डोरा है इसके पहनने से घर में सुख सम्पत्ति की वृद्धि होती है। रानी ने भी उससे एक डोरा लेकर अपने गले में बाँध लिया। राजा नल ने रानी के गले में बँधे डोरे के विषय में पूछा तो रानी ने बुढ़िया द्वारा बताई सारी बातें बता दीं।

राजा कहने लगा— "तुम्हें किस चीज की कमी है जो तुमने डोरा बाँधा है।" इतना कहकर रानी के मना करने पर भी राजा ने उस डोरे को तोड़कर फेंक दिया।

रात्रि में राजा को स्वप्न में एक स्त्री बोली— "मैं जा रही हूँ तथा दूसरी स्त्री बोली मैं आ रही हूँ।" इस प्रकार दस-बारह दिन तक रोज यही

स्वप्न आता रहा। वह उदास रहने लगा। रानी के पूछने पर राजा ने रानी को स्वप्न की बात बता दी। रानी ने राजा से दोनों स्त्रियों का नाम पूछने को कहा। राजा द्वारा उनसे पूछने पर पहली स्त्री बोली मैं लक्ष्मी हूँ और दूसरी ने अपना नाम दरिद्रता बताया।

दूसरे दिन राजा ने देखा कि उसका सब धन समाप्त हो गया है। वे इतने निर्धन हो गये कि उनके पास खाने तक को न रहा। दुःखी मन से राजा-रानी जंगल में कन्द मूल खाकर अपने दिन बिताने लगे। मार्ग में उनके पाँच वर्षीय बेटे को भूख लगी तो रानी ने राजा से मालिन के यहाँ से छाछ माँगकर लाने को कहा। राजा ने मालिन से छाछ माँगी तो मालिन ने कहा छाछ समाप्त हो गई है। आगे चलने पर एक विषैले साँप ने राजकुँवर को डस लिया। आगे चलने पर राजा दो तीतर मार लाया। रानी ने तीतर भूने तो तीतर उड़ गये। राजा स्नान कर धोती सुखा रहा था तो धोती को हवा उड़ा ले गई। तब रानी ने अपनी धोती फाड़कर राजा को दी। वे भूखे प्यासे आगे बढ़े तो मार्ग में राजा के मित्र का घर पड़ा। मित्र ने दोनों को एक कमरे में ठहराया। वहाँ लोहे के औजार रखे थे देखते-देखते ही वे धरती में समा गए। चोरी का दोष लगने के डर से वे रात में ही वहाँ से भाग निकले। आगे चलकर राजा की बहन का घर पड़ा। राजा की बहन ने उन्हें एक पुराने महल में ठहराया। सोने के थाल में उन्हें खाना भिजवाया तो थाल मिट्टी में बदल गया। राजा बड़ा लज्जित हुआ। थाल को वहीं जमीन में गाड़कर भाग निकले। आगे चलने पर एक साहूकार का घर आया। साहूकार ने राजा के ठहरने की व्यवस्था पुरानी हवेली में कर दी। वहाँ पर खूँटी पर एक हीरों का हार टँगा था। पास ही दीवार पर एक मोर का चित्र बना था। वह मोर हार को निगलने लगा। यह देखकर वे वहाँ से भी चोरी के डर से भागे।

अब रानी की सलाह पर राजा जंगल में कुटिया बनाकर रहने की सोचने लगा। वे जंगल में एक सूखे बगीचे में जाकर ठहरे। वह बगीचा हरा भरा हो गया। बाग का स्वामी यह देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ। स्वामी ने उनसे पूछा तुम दोनों कौन हो? राजा बोला हम यात्री हैं। मजदूरी की खोज में

आये हैं। स्वामी ने उन्हें अपने यहाँ नौकर रख लिया। एक दिन बाग की स्वामिनी बैठी कथा सुन रही थी और डोरा ले रही थी। रानी के पूछने पर उसने बताया कि सम्पदा का डोरा है। रानी ने भी कथा सुनकर डोरा ले लिया। राजा ने रानी से पूछा वह कैसा डोरा बाँधा है? रानी बोली यह वही डोरा जिसे आपने एक बार तोड़कर फेंक दिया था और हमें इतनी विपत्तियाँ झेलनी पड़ रही है। सम्पदा देवी हम पर नाराज हैं। रानी बोली—"यदि सम्पदा माता सच्ची है तो हमारे दिन फिर से लौट आएँगें।"

उसी रात को राजा को स्वप्न आया। एक स्त्री कह रही है मैं जा रही हूँ, दूसरी स्त्री बोली मैं आ रही हूँ। राजा के पूछने पर पहली स्त्री ने अपना नाम दरिद्रता बताया और दूसरी ने अपना नाम लक्ष्मी बताया। राजा ने लक्ष्मी से पूछा अब तो नहीं जाओगी। लक्ष्मी बोली यदि तुम्हारी पत्नी सम्पदा का डोरा लेकर कथा सुनती रहेगी तो मैं नहीं जाऊँगी। यदि तुम डोरा तोड़ दोगे तो चली जाऊँगी।

बाग की मालकिन किसी रानी को हार देने जाती थी। उस हार को दमयन्ती बनाती थी। रानी को वह हार बहुत पसन्द आया। रानी के पूछने पर मालकिन ने बताया कि हमारे यहाँ एक दम्पत्ति नौकरी करते हैं। उसने ही बनाया है। रानी ने बाग की मालकिन से दोनों के नाम पूछने को कहा। घर आकर उसने दोनों के नाम पूछे तो उसे पता चला कि वे नल-दमयन्ती हैं। बाग का मालिक उनसे क्षमा माँगने लगा जो राजा नल ने उससे कहा कि हमारे दिन खराब चल रहे थे, इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है।

अब दोनों अपने राजमहल की तरफ चले। रास्ते में साहूकार का घर आया। वह साहूकार के यहाँ ठहरे। वहाँ साहूकार ने देखा दीवार पर बना मोर नौलखा हार उगल रहा है। साहूकार ने राजा के पैर पकड़ लिये।

आगे चलने पर बहन के घर पहुँचा। राजा बहन के पुराने महल में ही ठहरा। राजा ने वह जगह खोदी तो हीरों से जड़ित थाल निकल आया। राजा ने बहन को बहुत-सा धन भेंट स्वरूप दिया।

आगे चल मित्र के घर पहुँचकर उसी कमरे में ठहरा। वहाँ मित्र के लोहे के औजार मिल गये। आगे चलने पर उसकी धोती एक वृक्ष पर मिल गयी। नहा धोकर आगे बढ़ने पर राजकुमार जिसको सर्प ने डस लिया था

खेलता हुआ मिल गया। महल में पहुँचने पर रानी की सखियों ने मंगल गीत गाकर उनका स्वागत किया। यह सब सम्पदा जी का डोरा बाँधने का ही फल था जो उनके बुरे दिन अच्छे दिनों में बदल गये।

*

बसौड़ा

बसौड़ा का त्यौहार होली के सात-आठ दिन बाद अर्थात् चैत्र कृष्ण पक्ष में प्रथम सोमवार या बृहस्पतिवार को मनाया जाता है। इस दिन बासी भोजन खाया जाता है। बसौड़ा के दिन सुबह एक थाली में रबड़ी, रोटी, चावल, रोली, मौली, मूँग की छिलके वाली दाल, हल्दी, धूपबत्ती, एक गूलरी की माला जो होली के दिन मालायें बचाईं थी आदि रख लेना चाहिए।

इस सामान को घर के सभी प्राणियों के हाथ लगवा कर शीतला माता पर भेज देना चाहिए। स्त्रियाँ रास्ते में शीतला माता के गीत गाती जावें।

यदि किसी के यहाँ कुण्डारा भरा जाता हो तो वे एक बड़ा कुण्डारा और छ: छोटे कुण्डारे बाजार से मँगवा लें। प्रत्येक में अलग-अलग रबड़ी, भात, रसगुल्ले, बाजरा, पिसी हुई हल्दी इच्छानुसार पैसे रख लें। उन कुण्डारों को रखकर पूजन करें। हल्दी का टीका निकालें। हल्दी से ही पूजन करें। फिर सब कुण्डारों को बड़े कुण्डारे में रख लें।

इसके बाद एक फूल माला सब कुण्डारे और समस्त पूजा की सामग्री शीतला माता पर चढ़ा देवें। इसके बाद कहानी सुनें।

कथा– किसी गाँव में एक बुढ़िया रहती थी। वह बसौड़ा के दिन शीतला माता का पूजन करती थी और बासी भोजन खाती थी। शेष गाँव वाले शीतला माता की पूजा नहीं करते थे। अचानक एक दिन गाँव में आग लग गई। बुढ़िया के घर को छोड़कर सभी के घर आग में स्वाहा हो गये। गाँव वालों को बड़ा आश्चर्य हुआ कि बुढ़िया का मकान कैसे बच गया? सब गाँव वाले बुढ़िया से पूछने लगे कि तुम्हारा घर क्यों नहीं जला।

बुढ़िया बोली मैं शीतला माता की पूजा करती थी। उसी के कारण मेरा घर बच गया। तभी से सब गाँव वाले शीतला माता की पूजा करने लगे और बासी भोजन खाने लगे।

पापमोचनी एकादशी

(चैत्र कृष्ण एकादशी)

चैत्र मास की कृष्ण पक्ष की एकादशी पापमोचनी एकादशी के रूप में मनायी जाती है। इस दिन भगवान् विष्णु का पूजन किया जाता है।

कथा– प्राचीन समय में चित्ररथ नामक एक रमणीक वन था। इस वन में देवराज इन्द्र गन्धर्व कन्याओं तथा देवताओं सहित स्वच्छन्द विहार करते थे। मेधावी नामक ऋषि भी वहाँ पर तपस्या कर रहे थे। ऋषि शिव उपासक तथा अप्सराएँ शिव द्रोहिणी अनंग दासी थी। एक बार कामदेव ने मुनि का तप भंग करने के लिए उनके पास मंजुघोषा नाम अप्सरा को भेजा। युवावस्था वाले मुनि अप्सरा के हाव-भाव, नृत्य गीत तथा कटाक्षों पर काम मोहित हो गये। रति-क्रीड़ा करते हुए ५७ वर्ष व्यतीत हो गये। एक दिन मंजुघोषा ने देवलोक जाने की आज्ञा माँगी। आज्ञा माँगने पर मुनि के कानों पर चींटी सी दौड़ी। उन्हें आत्मज्ञान हुआ कि मुझे रसातल में पहुँचाने का एकमात्र कारण अप्सरा मंजुघोषा ही है। उन्होंने मंजुघोषा को पिशाचनी होने का श्राप दे डाला। श्राप सुनकर मंजुघोषा ने काँपते हुए मुक्ति का उपाय पूछा। तब मुनि ने पापमोचनी एकादशी का व्रत रखने को कहा। वह मुक्ति का उपाय बताकर पिता च्यवन के आश्रम में चले गये। श्राप की बात सुनकर च्यवन ऋषि ने पुत्र की घोर निन्दा की तथा उन्हें पाप मोचनी चैत्र कृष्ण एकादशी का व्रत करने की आज्ञा दी। व्रत के प्रभाव से मंजुघोषा अप्सरा पिशाचनी देह से मुक्त होकर देवलोक चली गई।

वर्ष के कुछ अन्य व्रत एवं त्यौहार

सोमवती अमावस्या

जिस अमावस्या को सोमवार हो उसी दिन इस व्रत का विधान है। प्रत्येक मास एक अमावस्या आती है और प्रत्येक सात दिन बाद एक सोमवार। परन्तु ऐसा बहुत ही कम होता है जब अमावस्या सोमवार के दिन हो। वर्ष में कई बार अमावस्या आती रहती है। यह स्नान, दान के लिए शुभ और सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। इस पर्व पर स्नान करने लोग दूर-दूर से आते हैं।

हमारे धर्म ग्रंथों में कहा गया है कि सोमवार को अमावस्या बड़े भाग्य से ही पड़ती है, पाण्डव पूरे जीवन तरसते रहे परन्तु उनके सम्पूर्ण जीवन में सोमवती अमावस्या नहीं आई।

किसी भी मास की अमावस्या यदि सोमवार को हो तो उसे सोमवती अमावस्या कहा जाएगा। इस दिन यमुना इत्यादि नदियों, मथुरा आदि तीर्थों में स्नान, गऊदान, अन्नदान, ब्राह्मण भोजन, वस्त्र, स्वर्ण आदि दान का विशेष महत्त्व माना गाा है। इस दिन गंगा स्नान का भी विशिष्ट महत्त्व है। यही कारण है कि गंगा और अन्य पवित्र नदियों के तटों पर इतने श्रद्धालु एकत्रित हो जाते हैं कि वहाँ मेले ही लग जाते हैं। सोमवती अमावस्या को गंगा तथा अन्य पवित्र नदियों में स्नान से पहले तो एक धार्मिक उत्सव का रूप ले लेता था।

निर्णय सिंधु व्यास के वचनानुसार इस दिन मौन रहकर स्नान-ध्यान करने से सहस्र गोदान का पुण्य फल प्राप्त होता है।

यह स्त्रियों का प्रमुख व्रत है। सोमवार चंद्रमा का दिन है। इस दिन सूर्य तथा चंद्र एक सीध में स्थित रहते हैं। इसलिए यह पर्व विशेष पुण्य देने वाला होता है।

सोमवार भगवान् शिवजी का दिन माना जाता है और सोमवती अमावस्या तो पूर्णरूपेण शिवजी को समर्पित होती है। इस दिन यदि गंगाजी जाना संभव न हो तो प्रातःकाल किसी नदी या सरोवर आदि में स्नान करके भगवान् शंकर, पार्वती और तुलसी की भक्तिपूर्वक पूजा करें। फिर पीपल के वृक्ष की १०८ परिक्रमा करें और प्रत्येक परिक्रमा में कोई

वस्तु चढ़ावें। प्रदक्षिणा के समय १०८ फल अलग रखकर समापन के समय वे सभी वस्तुएं ब्राह्मणों और निर्धनों को दान करें।

*

मल मास (पुरुषोत्तम मास)

जिस मास में सूर्य संक्रान्ति नहीं होती उसे अधिमास कहते हैं। अधिमास ३२ मास १६ दिन तथा चार पड़ी के अन्तर से आता है। अधिमास में फल प्राप्ति की कामना से किए जाने वाले सभी कार्य वर्जित हैं।

इस महीने में दान-पुण्य करने का फल अक्षय होता है। यदि न किया जा सके तो ब्राह्मणों तथा सन्तों की सेवा सर्वोत्तम मानी गई है। दान में खर्च किया गया धन क्षीण नहीं होता। बल्कि बढ़ता ही जाता है। जिस प्रकार छोटे से वट बीज से विशाल वृक्ष जन्म लेता है ठीक वैसे ही मलमास में किया गया दान बहुत ही फलदायक सिद्ध होता है।

इस व्रत के बारे में भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है कि इसका फलदाता तथा भोक्ता सब कुछ मैं ही हूँ। प्राचीन काल में राजा नहुष ने इन्द्रपद प्राप्ति की इच्छा से इन्द्राणी पर आसक्त होकर, उसकी आज्ञानुसार ऋषियों के कंधों पर उठाई पालकी पर सवार होकर उसके महल की ओर कूच किया। नहुष कामातुरता के कारण अन्धा हो गया था। वह ऋषियों से अनेकादि बार सर्प-सर्प कह रहा था। इस धृष्टता के कारण महर्षि अगस्त्य के शाप से वह स्वयं ही सर्प हो गया। अन्त में उसे अपने कृत्य पर बड़ा पश्चाताप हुआ। महर्षि वशिष्ठ की आज्ञा से उसने प्रदोष व्रत किया और सर्प योनि से मुक्त हुआ।

*

पद्मिनी एकादशी

मलमास या अधिकमास की कृष्ण पक्ष की एकादशी को पद्मिनी एकादशी कहते हैं। इसमें राधा-कृष्ण तथा शिव-पार्वती के पूजन का विधान है।

कथा– लंकापति रावण दिग्विजय हेतु निकला। उसे कार्त्तवीर्य अर्जुन ने हराकर बन्दी बना लिया। देवर्षि नारद को रावण की पराजय पर बड़ी

प्रसन्नता हुई। अगस्तय मुनि के कहने पर कार्तवीर्य ने रावण को छोड़ दिया। देवर्षि नारद ने पुलस्त्य मुनि से रावण की हार का कारण पूछा। मुनि ने बताया कि कार्त्तवीर्य अर्जुन को पराजित करने की शक्ति विष्णु के अतिरिक्त और किसी में नहीं है। उसका कारण यह है कि कार्त्तवीर्य की माता पद्मिनी तथा पिता कृर्त्तवीर्य ने पुत्र कामना से गंधमादन पर्वत पर अनेक वर्षों तक कठोर तपस्या की थी तथा महासती अनुसूया के कहने पर उन दोनों ने इसी एकादशी का व्रत किया था। उनके व्रत से प्रसन्न होकर भगवान् विष्णु ने स्वयं दर्शन देंकर उन्हें अर्जुन जैसा परमवीर पुत्र तथा अजेय होने का भी वरदान दिया था। यही कारण है कि शक्तिशाली रावण को पराजित होना पड़ा।

*

हरिवल्लभा एकादशी

पुरुषोत्तम मास में शुक्ल पक्ष की एकादशी को हरिवल्लभा एकादशी कहते है।

कथा– प्राचीन काल में बभ्रुवाहन नामक एक दानी तथा प्रतापी राजा था। वह प्रतिदिन ब्राह्मणों को सौ गायें दान करता था। उसी के राज्य में प्रभावती नाम की एक बाल विधवा ब्राह्मणी रहती थी। वह भगवान् विष्णु और भगवान् शंकर की परम उपासक थी। वह अधिक मास में नित्य स्नान कर विष्णु तथा शंकर की पूजा करती थी। इसी बीच वह हरिवल्लभा एकादशी का व्रत भी करती थी। दैवयोग से बभ्रुवाहन और प्रभावती की मृत्यु एक ही दिन हुई थी। दोनों एक साथ धर्मराज के दरबार में पहुँचे। धर्मराज ने उठकर प्रभावती का स्वागत किया परन्तु राजा का स्वागत नहीं किया गया। राजा को अपने द्वारा किये गये दान-पुण्य पर पूरा भरोसा था। परन्तु अपना स्वागत न किया जाना राजा को बड़ा आश्चर्य लगा। उसी समय व्यक्ति के कार्यों का लेखा-जोखा रखने वाले चित्रगुप्त ने आकर प्रभावती तथा राजा को कर्मानुसार विष्णु लोक और स्वर्गलोक जाने की बात बताई। राजा को यह सुनकर और भी आश्चर्य हुआ। राजा ने धर्मराज से इसका कारण पूछा। धर्मराज ने इसका कारण प्रभावती द्वारा हरिवल्लभा एकादशी का व्रत रखना बताया।

मकर संक्रान्ति

पौष मास में जब सूर्य मकर राशि पर होता है तभी मकर संक्रान्ति होती है। वैसे संक्रान्ति हर महीने होती है। परन्तु कर्क और मकर राशि पर सूर्य के आने से विशेष महत्त्व होता है। यह संक्रमण क्रिया छः-छः महीने के अन्तर से होती है। मकर संक्रान्ति से सूर्य उत्तरायण स्थित रहने पर दिन बड़े और रात छोटी होती है। सूर्य दक्षिणायन रहने पर रात्रि बड़ी और दिन छोटे होते हैं। अंग्रेजी कलैण्डर के अनुसार मकर संक्रान्ति हमेशा १४ जनवरी को होती है। इस दिन गंगा स्नान तथा ब्राह्मणों को दान देने का विधान है। दक्षिण भारत में इसको पोंगल कहा जाता है।

प्रदोष व्रत

प्रदोष का अर्थ रात्रि का शुभारम्भ। इस व्रत के पूजन का विधान इसी समय होता है। इसलिए इसे प्रदोष व्रत कहते हैं। यह व्रत शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी को किया जाता है। इसका उद्देश्य संतान की कामना हैं। इस व्रत को स्त्री-पुरुष दोनों ही कर सकते हैं। इस व्रत के उपास्य देव भगवान् शंकर हैं।

सायंकाल में व्रत करने वाले को शंकरजी की पूजा करके अल्प आहार करना चाहिए। कृष्ण पक्ष का शनि प्रदोष विशेष पुण्यदायी होता है। शंकरजी का दिन सोमवार है। सोमवार को पड़ने वाला प्रदोष व्रत का विशेष महत्त्व है।

कथा– प्राचीन काल में एक ब्राह्मणी विधवा हो गई थी। वह भिक्षा माँगकर अपना तथा अपने पुत्र का जीवन निर्वाह करती थी। वह अपने पुत्र को लेकर सुबह निकलती और रात को घर लौटती। एक दिन उसे विदर्भ देश का राजकुमार मिला जो अपने पिता की मृत्यु के कारण इधर-उधर मारा मारा फिर रहा था। ब्राह्मणी को राजकुमार पर दया आ गई और उसे अपने साथ घर ले आयी। उसने उसे पुत्रवत पाला।

एक दिन वह दोनों बालकों को लेकर शांडिल्य ऋषि के आश्रम में

गई। ऋषि से भगवान् शंकर के पूजन की विधि जानकर वह प्रदोष व्रत करने लगी।

एक दिन दोनों बालक वन में घूम रहे थे। उन्होंने वहाँ गन्धर्व कन्याओं को क्रीड़ा करते देखा। ब्राह्मण कुमार तो घर लौट आया परन्तु राजकुमार अंशुमती नामक गन्धर्व कन्या से बात करने लगा। वह देर से घर लौटा। दूसरे दिन भी उसी स्थान पर राजकुमार पहुँच गया। अंशुमती अपने माता-पिता के साथ बैठी हुई थी। माता-पिता ने राजकुमार से कहा कि भगवान् शंकर की आज्ञा से अंशुमती का विवाह तुम्हारे साथ करेंगे। राजकुमार शादी के लिए तैयार हो गया। दोनों का विवाह हो गया। उसने गन्धर्व राजा विद्रविक की विशाल सेना लेकर विदर्भ पर अधिकार कर लिया। उसने ब्राह्मणी एवं उसके पुत्र को अपने महल में आदर के साथ रख लिया।

यह प्रदोष व्रत का ही फल था। तभी से समाज में प्रदोष व्रत की प्रतिष्ठा हुई।

औसान बीबी की पूजा

औसान बीबी की पूजा का शुद्ध रूप अवसान विधि की पूजा है। हमारे देश के पूर्वी प्रान्तों में इसे अचानक देवी व्रत कहते हुए विवाहादि शुभ कार्योपरान्त ७ सधवा स्त्रियों को आमन्त्रित करके उनके सुहाग की पूजा की जाती है।

भगवान् राम-सीता के विवाहोपरान्त जनकपुरी लौटने पर राजा दशरथ ने सुहागिन स्त्रियों को सम्मानित किया था। पूजन के बाद गुड़ मिश्रित चने की दाल का प्रसाद बाँटा जाता है। सधवा स्त्रियों को भोजन कराने का भी नियम है। हरि कीर्तन करके रात्रि व्यतीत करनी चाहिए।

कथा– एक समय की बात है, दो भाई-बहन थे। भाई को चिड़िया पालने का बड़ा शौक था। वह दिन-रात उन्हीं की देखभाल में लगा रहता था। जब भाई की सगाई हुई तो वह उसी दिन से दुबला होने लगा।

एक दिन बहन ने भाई से इसका कारण पूछा तो उसनें बताया कि मुझे किसी भी बात का कोई दुःख नहीं है। किन्तु मुझे यही चिन्ता लगी रहती है कि जब मैं बारात के साथ विवाह कराने के लिए जाऊँगा तो मेरे

पीछे तीन चार दिन तक मेरी चिड़ियों को दाना-पानी कौन देगा। यदि उनकी देखभाल में थोड़ी सी भी लापरवाही या देरी हुई तो कठिन परिश्रम से पाली हुई मेरी चिड़िया बेमौत मर जायेगी।

बहन ने भाई को धैर्य बंधाया और कहा कि तुम जरा भी चिन्ता न करो। यह काम मैं अपने जिम्मे लेती हूँ। तुम्हारी चिड़ियों को दाना और पानी मैं स्वयं दूँगी और तुम्हारे विवाह से लौटने तक मैं उन्हें किसी प्रकार का कष्ट न होने दूँगी।

कुछ दिनों में विवाह की तिथि आने पर भाई दुल्हा बनकर बारात के साथ चला गया। बहन भी घर के नेगचार के काम में व्यस्त रहने के कारण चिड़ियाखाने में गई तो उसने देखा कि अधिकांश चिड़िया मरी पड़ी हैं। यह देख वह भारी संकट में पड़ गई। उसने मन ही मन औसान बीबी का स्मरण किया और कहने लगी— हे देवी! आपकी कृपा से चिड़िया जी उठीं तो मैं दुरैया कराऊँगी। देवयोग से सब चिड़ियाँ जी उठीं। तब बहन ने उनको दाना-पानी दिया।

चिड़ियों को दाना-पानी देकर वह बाहर चली आई और अपने मन में यह विचार कर खड़ी हो गई कि यदि कोई इधर से निकले तो उससे कुछ भुनाऊँ और फिर सुहागिनों को न्यौता पर बुलाऊँ, तभी उधर से एक बारात निकली। लड़की ने बारातियों से प्रार्थना की कोई मेरे चने भुनाकर ला दो। किन्तु बारातियों ने इन्कार कर दिया।

बारात ने गाँव से आगे चलकर एक अच्छा स्थान देखकर वहाँ विश्राम किया तो दुल्हा अपने आप मूर्छित हो गया लड़की अपने घर के द्वार पर खड़ी ही थी। थोड़ी देर बाद उधर मुर्दे को कन्धों पर लिये हुए कुछ आदमी जा रहे थे। लड़की ने मुर्दे के साथ जाने वाले लोगों से कहा कि कोई मेरे चने भुनाकर ला दे तो मैं सुहागिनों को न्यौत बुलाऊँ।

उनमें-से एक ने कहा— क्या हर्ज है, इसके चने भुनाने में देर ही कितनी लगेगी? मुर्दा जलाने को अभी बहुत समय है।

यह सोचकर कुछ लोग चने भुजाने के लिए चल दिये। तभी अर्थी पर से मुर्दा उठकर बैठ गया। यह देखकर लोगों को बहुत आश्चर्य हुआ और सबने लड़की के पास जाकर श्रद्धा से नमस्कार करके पूछा— बहन

तुमने यह क्या जादू कर दिया है कि जिससे मुर्दा जीवित हो गया।

लड़की ने उत्तर दिया— मुझे इसके बारे में क्या मालूम? मेरी दुरैया जाने, औसान बीबी जाने। मैंने औसान बीबी से प्रार्थना की थी कि मेरे भाई की मरी चिड़िया जी उठें तो भुने चने का प्रसाद बाटूँगी। उनकी पूजा के प्रसाद के लिए चने भुनाने चली थी। तुम लोगों ने जाकर चने भुनाकर ला दिये और तुम्हारा मुर्दा जी उठा। यह सब औसान बीबी की माया है। उन लोगों ने भी सुहागिनों को न्यौता पर बुलाया और औसान बीबी की विधिपूर्वक पूजा की।

जिन लोगों का दुल्हा बेहोश हो गया था वे भी लौटकर उसी जगह आये उन्होंने लड़की से पूछा कि तुमने हमारे दुल्हे को क्या कर दिया जो वह अपने आप मूर्छित हो गया।

लड़की ने कहा कि मैं क्या जानूँ, मेरी औसान बीबी जाने। उनकी पूजा के लिये चने भुनाकर ला देने वालों का मुर्दा जी उठा और तुमने इन्कार किया तो तुम्हारा दुल्हा अचेत हो गया। इसमें मैं क्या करूँ?

उन लोगों ने लड़की से कहा कि हमें औसान बीबी की पूजा विधि बता दो। हम भी घर पहुँचकर उनकी पूजा करेंगे।

लड़की ने उन्हें पूजा की विधि बता दी। पूजा का संकल्प करते ही दुल्हा स्वस्थ हो गया। तब उन लोगों ने घर पहुँचकर सात सुहागिनें न्यौती और उनके आँचल भरकर श्रद्धापूर्वक औसान बीबी की पूजा की।

इधर जब लड़की का भाई विवाह करके लौटा तो लड़की की माता ने भी औसान बीबी का पूजन किया। तभी से विवाह के अन्त में औसान बीबी की पूजा का प्रचलन हो गया।

तुलसी विवाह

(कार्तिक शुक्ल एकादशी)

कार्तिक शुक्ल एकादशी को तुलसी-पूजन का उत्सव भारत भर में खासकर उत्तर भारत में विशेष रूप से मनाया जाता है। तुलसी को विष्णु-प्रिया भी कहते हैं। तुलसी-विवाह के लिए कार्तिक शुक्ल नवमी ठीक

तिथि है। नवमी, दशमी व एकादशी को व्रत करके नियम से पूजन कर अगले दिन तुलसी का .पौधा ब्राह्मण को दिया जाए तो शुभ होता है।

परन्तु कुछ एकादशी से पूर्णिमा तक तुलसी-पूजन करके पाँचवें दिन तुलसी का विवाह करते हैं। तुलसी-विवाह की यही पद्धति अधिक प्रचलित है।

तुलसी चाहे एक साधरण-सा पौधा होता है। परन्तु भारतीयों के लिए यह गंगा-यमुना के समान पवित्र है। पूजा की सामग्री में तुलसी-दल जरूरी समझा जाता है। तुलसी के पौधे को वैसे तो स्नान के बाद प्रतिदिन पानी देना स्वास्थ्य के लिए अति उत्तम है। तुलसी के कारण उसके आस-पास की वायु शुद्ध हो जाती है। तुलसी-पूजा क्यों आरम्भ हुई तथा इसकी पूजा से किसको लाभ हुआ, इस विषय में कथा प्रचलित है—

कथा– प्राचीन काल में जालन्धर नामक राक्षस ने चारों तरफ बड़ा उत्पात मचा रखा था। उसकी वीरता का रहस्य था उसकी पत्नी वृन्दा का पतिव्रता धर्म। उसी प्रभाव से वह सर्वजयी बना हुआ था। उसके उपद्रवों से भयभीत ऋषि व देवता मिलकर भगवान् विष्णु के पास गए तथा उससे रक्षा करने के लिए कहने लगे। भगवान् विष्णु ने काफी सोच-विचार कर उस सती का पतिव्रत धर्म भंग करने का निश्चय किया।

उन्होंने योगमाया द्वारा एक मृत-शरीर वृन्दा के आँगन में फिकवा दिया। माया का पर्दा होने से वृन्दा को अपने पति का शव दिखाई दिया। अपने पति को मृत देखकर वह उस मृत-शरीर पर गिरकर विलाप करने लगी। उसी समय एक साधु उसके पास आए और कहने लगे-बेटी इतना विलाप मत करो, मैं इस मृत-शरीर में जान डाल दूँगा। साधु ने मृत शरीर में जान डाल दी। भावातिरेक में वृन्दा ने उसका आलिंगन कर लिया। बाद में वृन्दा को भगवान् का यह छल-कपट ज्ञात हुआ। उधर उसका पति जो देवताओं से युद्ध कर रहा था, वृन्दा का सतीत्व नष्ट होते ही वह देवताओं द्वारा मारा गया। इस बात का जब उसे पता लगा तो क्रोधित हो उसने विष्णु भगवान् को श्राप दे दिया कि "जिस प्रकार तुमने छल से मुझे पति-वियोग दिया है उसी प्रकार तुम भी अपनी स्त्री का छलपूर्वक हरण होने पर स्त्री-वियोग सहने के लिए मृत्युलोक में जन्म लोगे।" यह कहकर वृन्दा अपने पति के साथ सती हो गई।

विष्णु अब अपने छल पर बड़े लज्जित हुए। देवताओं व ऋषियों ने उन्हें कई प्रकार से समझाया तथा पार्वतीजी ने वृन्दा की चिता-भस्म में आंवला, मालती व तुलसी के पौधे लगाएँ। भगवान् विष्णु ने तुलसी को ही वृन्दा का रूप समझा। कालान्तर में रामावतार के समय रामजी को सीता का वियोग सहना पड़ा।

कहीं-कहीं यह भी प्रचलित है कि वृन्दा ने शाप दिया था कि तुमने मेरा सतीत्व भंग किया है। अत: तुम पत्थर बनोगे।

विष्णु बोले— हे वृन्दा! तुम मुझे लक्ष्मी से भी अधिक प्रिय हो गई हो। यह सब तुम्हारे सतीत्व का ही फल है। तुम तुलसी बनकर मेरे साथ रहोगी तथा जो मनुष्य तुम्हारे साथ मेरा विवाह करेगा वह परमधाम को प्राप्त होगा। इसी कारण शालिग्राम या विष्णु-शिला की पूजा बिना तुलसी-दल के अधूरी होती है। इसी पुण्य की प्राप्ति के लिए आज भी तुलसी-विवाह बड़ी धूमधाम से किया जाता है। तुलसी को कन्या मानकर व्रत करने वाला यथाविधि से भगवान् विष्णु को कन्या दान करके तुलसी-विवाह सम्पन्न करता है।

तुलसी पूजा करने का माहात्म्य

कथा– एक परिवार में ननद-भाभी रहती थीं। ननद अभी कुँआरी थी। वह तुलसी की बड़ी सेवा करती थी। पर भाभी को यह सब फूटी आँख नहीं सुहाता था। कभी-कभी तो भाभी गुस्से में कहती कि जब तेरा विवाह होगा तो तुलसी ही खाने को दूँगी तथा तुलसी ही तेरे दहेज में दूँगी। यथा-समय जब ननद की शादी हुई तो उसकी भाभी ने बारातियों के सामने तुलसी का गमला फोड़कर रख दिया। भगवान् की कृपा से वह गमला स्वादिष्ट व्यंजनों में बदल गया। गहनों के बदले भाभी ने ननद को तुलसी की मंजरी पहना दी तो वह सोने के गहनों में बदल गई। वस्त्रों के स्थान पर तुलसी का जनेऊ रख दिया तो वह रेशमी वस्त्रों में बदल गया। चारों तरफ ससुराल में उसके दहेज आदि के बारे में बहुत बड़ाई हुई।

उसकी भाभी की एक लड़की थी। भाभी अपनी लड़की से कहती कि तू भी तुलसी की सेवा किया कर तुझे भी तेरी बुआ की तरह फल मिलेगा। पर लड़की का मन तुलसी की सेवा में नहीं लगता था।

उसके विवाह का समय आया तो उसने सोचा कि मैंने जैसा व्यवहार अपनी ननद से किया उसी के कारण उसे इतनी इज्जत मिली है क्यों न मैं अपनी लड़की के साथ भी वैसा ही व्यवहार करूँ। उसने तुलसी का गमला तोड़कर बरातियों के सामने रखा, मंजरी के गहने पहनाए तथा वस्त्रों के स्थान पर जनेऊ रखा। परन्तु इस बार मिट्टी-मिट्टी ही रहा। मंजरी-व-पत्ते भी अपने पूर्व रूप में ही रहे तथा जनेऊ-जनेऊ ही रहा। सभी भाभी की बुराई करने लगे। ससुराल में भी सभी लड़की की बुराई ही कर रहे थे।

भाभी ननद को कभी घर नहीं बुलाती थी। भाई ने सोचा मैं ही बहन से मिल आऊँ। उसने अपनी इच्छा अपनी पत्नी को बतायी तथा सौगात ले जाने के लिए कुछ माँगा तो भाभी ने थैले में ज्वार भरकर कहा और तो कुछ नहीं है, यही ले जाओ। वह दुःखी मन से चल दिया। बहन के नगर के समीप पहुँचकर एक गोशाला में गाय के सामने उसने ज्वार का थैला उलट दिया तो गोपालक ने कहा कि सोना-मोती गाय के आगे क्यों डाल रहे हो। उसने उससे सारी बात बता दी तथा सोना-मोती लेकर प्रसन्न मन से बहन के घर गया। बहन बड़ी प्रसन्न हुई। जैसे प्रसन्नता बहन को मिली वैसी सबको मिले।

*

सूर्यव्रत अर्थात् रविवार-व्रत विधि

सूर्य आरोग्य के दाता हैं। इनकी प्रसन्नता के लिये रविवार के दिन व्रत को धारण करें। सूर्य आदि सभी देवताओं की पूजा पाँच प्रकार से की जाती है। एक तो सूर्य का मंत्र जपे, दूसरे उनके लिए होम करे, तीसरे दान करे, चौथे तप करे और पाँचवें किसी देव पर, सूर्य की प्रतिमा में, अग्नि में अथवा ब्राह्मण के शरीर में आराध्यदेव सूर्य की भावना कर षोडशोचार से उनकी पूजा करें। सूर्यवार (रविवार) के व्रत में नमक, तेल तथा अन्य किसी प्रकार का तामसी भोजन न करें।

इस दिन के व्रत में फलाहार करे तो अच्छा है और नहीं तो गेहूँ का आटा, दूध और गुड़ ले सकते हैं। इस प्रकार दिन भर निराहार रहकर सायं के समय सूर्यास्त होने के पहले ही भोजन कर लेवें। यदि सूर्यास्त हो

जाय और भोजन न कर सके तो रातभर यों ही निराहार ही व्यतीत करें और दूसरे दिन प्रात: काल सूर्योदय होने पर सूर्य के दर्शन करके स्नान कर, उन्हें अर्घ्य देवे और पुन: भोजन करें। फल या अन्न का पारण एक बार से अधिक न लेवें। व्रत के अन्त में सूर्य भगवान् की पूजा कर अर्घ्य आदि देकर निम्नलिखित कथा को सुने। अर्घ्य से लेकर सोलहों प्रकार की पूजा तक जो भी सुलभ हो करें। एक के अभाव में अन्य का अवलम्बन करें।

नेत्रों में दृष्टि, कुष्ट रोग की शान्ति के लिए भगवान् सूर्य की पूजा करके ब्राह्मणों को भोजन कराये, और न हो सके तो नहीं कराये। रविवार का व्रत करने से अनेक प्रकार के विघ्न शान्त होते हैं। शत्रु नष्ट होते हैं और राजसभा में उसका मान होता है। एक दिन एक मास एक वर्ष अथवा तीन वर्ष तक लगातार ऐसा साधन करना चाहिये। इससे साधारण रोग तो नष्ट हो ही जाते हैं, मनुष्य के वृद्धता आदि रोग भी नष्ट हो जाते हैं।

यदि रविवार को सूर्यदेव के लिये, अन्य देवताओं के लिये तथा ब्राह्मणों के लिये विशिष्ट वस्तु अर्पित करें तो यह साधन विशिष्ट फल देता है। इसके द्वारा विशेष रूप से पापों की शान्ति होती है। निर्धन मनुष्य तपस्या द्वारा और धनी व्यक्ति धन के द्वारा देवताओं की आराधना करें।

रविवार व्रत कथा

पूर्व काल में एक बुढ़िया स्त्री थी, जिसने यह नियम कर लिया था कि वह प्रत्येक रविवार को प्रात: उठकर स्नान आदि से निवृत्त हो अपने घर को गाय के गोबर से लीप दिया करती थी और सारा दिन सूर्य भगवान् के ध्यान में लगी रहती थी। वह दोपहर के पश्चात् भोजन, फलाहार या सविधि अन्न का मधुर पाक तैयार कर भगवान् का भोग लगाकर सूर्यास्त के पूर्व ही स्वयं ग्रहण कर लिया करती थी। इससे उसका घर सब प्रकार के धन-धान्य से पूर्ण हो गया और कोई विघ्न तथा कष्ट नहीं आते थे। सभी प्रकार से घर में प्रसन्नता व्याप्त रहती थी। जब यों ही कुछ दिन व्यतीत हो गये, तब उसकी वह पड़ोसिन जिसकी गौ का गोबर वह लाया करती थी, वह सोचने लगी यह बुढ़िया शीघ्र कैसे धनी हो गई? अब तो इसके और ही ढंग हो रहे हैं, इसका क्या कारण हैं? उसने कहा— यह बुढ़िया सदैव मेरे गौ का गोबर उठा ले जाती है, अत: आज से मैं अपनी गौ को घर में बाँधा करूँगी। वह गाय को घर मे बाँधने लगी। जब रविवार

का दिन आया और बुढ़िया को गोबर न मिला तो वह बहुत उदास हो गयी और उस रविवार क़ो अपना घर न लीप सकी। न उसने पारण के लिए कुछ भोजन ही बनाया और न ठाकुरजी को भोग ही लगाया। सारा दिन उसने उपवास करके व्यतीत कर दिया। रात्रि होने पर वह भूखी-प्यासी वैसे ही सो रही। रात्रि में भगवान् ने उसे स्वप्न दिया और कारण पूछा। बुढ़िया ने गोबर न मिलने की बात कह सुनाई।

भगवान् ने कहा— माता! तुम दुःख न करो, मैं तुम्हें ऐसी गौ देता हूँ जिससे तुम्हारे सब मनोरथ पूर्ण होंगे। तुम जो रविवार के दिन गौ के गोबर से घर को लीप कर भोजन बनाकर मेरा भोग लगाती थी और फिर स्वयं भोजन करती थी उसी से प्रसन्न होकर मैं तुम्हें यह वर देने आया हूँ।

जो लोग रविवार के दिन ऐसा करते हैं, मैं उनपर बहुत प्रसन्न होता हूँ। पुण्यात्माओं को वर देना तो मेरा कार्य ही है। अन्धों को आँख देना, कोढ़ियों को काया, बाँझ को पुत्र देना और निर्धन को धन फिर अन्त में मुक्ति प्रदान करना तो मेरा मुख्य कार्य है। स्वप्न में उस वृद्धा को ऐसा वर देकर भगवान् अर्न्तध्यान हो गये। जब प्रातःकाल बुढ़िया सोकर उठी तो क्या देखती है कि उसके घर के आँगन में बछड़ेवाली एक अन्यन्त सुन्दर गाय बँधी है। बुढ़िया को स्वप्न का ध्यान आया, उसने समझा सब भगवान् की माया है। चुपचाप उसने गौ को वहाँ से हटाकर घर के बाहर बाँध दिया और वहीं पर उसके लिए नाद बना उसमें खली-भूसा आदि डाल दिया। गौ प्रेम से खाने लगी। यह देख उसकी पड़ोसिन का हृदय ईर्ष्या से जल गया और जब उसने यह देखा कि यह गौ तो सोने का गोबर करती है, तब तो उसे और भी आश्चर्य हुआ। वह उसकी गौ का गोबर उठा ले गई और उसके स्थान पर अपनी गौ का गोबर रख गई। वह इसी प्रकार नित्य करती रही और बुढ़िया को इसका कुछ भी पता न चला।

इस पर भगवान् ने सोचा, बेचारी बुढ़िया तो इस कुटिला पड़ोसिन द्वारा नित्य ठगी जा रही है। इसका क्या उपाय करें। फिर तो भगवान् ने प्रबल आँधी चला दी, जिससे नितान्त अन्धकार व्याप्त हो गया। तब अन्धकार के भय से बुढ़िया ने अपनी गौ को घर के अन्दर लाकर बाँध दिया। जब रात्रि व्यतीत हो गई और बुढ़िया ने प्रातःकाल उठकर देखा तो गौ ने सोने का गोबर किया था, फिर तो उसे बड़ा आनन्द हुआ वह हर्ष

से छा गई। अब वह प्रतिदिन गौ को घर के अन्दर बाँधने लगी। इसीसे जब उसकी पड़ोसिन का दाँव नहीं चलता था। तब ईर्ष्या और द्वेष से जलकर उसने वहाँ के राजा की सभा में जाकर यह कह दिया कि महाराज मेरी पड़ोसिन एक बुढ़िया है, जिसके पास एक ऐसी गाय है, जो उसके पास न रहने योग्य है तथा आप जैसे राजा-महाराजाओं के ही पास रहने योग्य है, क्योंकि वह नित्य सोने का गोबर देती है। आप उस गौ को मँगाकर सोना प्राप्त कीजिये और उससे प्रजा का हित-कार्य कीजिए। वह सोना बुढ़िया के किसी काम का नहीं है। राजा ने अपने सिपाही भेजकर उसकी गाय को मँगा लिया। जब वह गाय महल में आई तो उसकी सुन्दरता को देखकर राजा प्रसन्न हुआ और उसे महल के अन्दर बँधवाकर वहाँ रक्षक नियुक्त कर दिये तथा यह आज्ञा दे दी कि मेरी आज्ञा के बिना इसका गोबर कोई न उठाने पावे।

राजा को मारे प्रसन्नता के रात भर नींद न आई और वह इस आशा में पड़ा करवटें बदलता रहा कि कब प्रातःकाल होगा और कब सोने का गोबर देखूँगा। परन्तु प्रातः होने पर जब राजा ने जाकर देखा तो गाय के गोबर से सारा स्थान गन्दा हो रहा है और सोने का कोई चिह्न भी नहीं है। फिर तो राजा को बड़ा क्रोध हुआ। उसने सिपाहियों को भेजकर उस बुढ़िया को बुलवाया, जिसकी वह गाय थी। बुढ़िया राजा की सभा में आई। राजा ने पूछा— माँ ! मैंने सुना था कि तुम्हारी गौ सोने का गोबर देती है। इसलिये मैंने तुम्हारी गौ को मँगाया। क्या यह सत्य है? किन्तु यहाँ तो वह बात असत्य हुई, गौ ने सोने का गोबर नहीं दिया। उसका क्या कारण है, मुझे बताओ । बुढ़िया बोली— महाराज! मेरा यह नियम है कि प्रातःकाल उठकर नित्यक्रिया स्नानादि से निवृत्त हो नित्य ही मैं अपने घर को गोबर से लीपती हूँ। फिर भोजन बनाकर भगवान् को भोग लगाकर ही मैं प्रसाद पाती हूँ। इस नियम के करने से भगवान् प्रसन्न होते हैं। जो निर्धन होता है उसे धन देते हैं, रोगी दुःखी के कष्ट हरते, निःसन्तान को सन्तान का सुख देते और अन्त में मोक्ष भी देते हैं। महाराज जब यह गौ मेरे पास न थी तब मैं अपने पड़ोसिन की गौ का गोबर लिया करती थी। एक दिन पड़ोसिन ने मुझे गोबर न लेने दिया तो मैं अपना नित्य का नियम न पालन कर सकी, न भोजन बनाया और न भगवान् को भोग लगाया तथा यों ही

भूखी ही सो रही। तब भगवान् ने मेरे इस कर्म से प्रसन्न होकर रात्रि में स्वप्न देकर मुझे यह गौ दी। इस गौ को देखकर मेरी पड़ोसिन ईर्ष्या से जल गई और उसने आपको यह समाचार दिया तथा आपने मेरी गौ को यहाँ मँगा लिया, इसमें मेरा क्या दोष है?

राजा ने कहा— वृद्धा माँ! तुम मुझे क्षमा करो और अपनी गौ ले जाओ। मैं तुम्हारी पड़ोसिन को दण्ड दूँगा। जिसने तुम्हारे धर्म-कर्म को देखकर ऐसी ईर्ष्या की है। फिर तो राजा ने सस्वागत बुढ़िया की गौ को लौटा दिया। बुढ़िया गौ लेकर अपने घर आई। राजा ने उस पड़ोसिन को बुलाकर उचित दण्ड और सारे नगर में इस नियम की घोषणा कर दी कि सब लोग रविवार का व्रत रहा करें तथा राजा स्वयं भी इस नियम का पालन करने लगा।

सूर्यदेव की आरती

सूर्यदेव की आरती गाऊँ
अखिल लोक तमनाशक तुम हो, करि पूजा नित तुमहिं मनाऊँ।।सूर्यदेव०।।
सप्त अश्व युत वाहन तुम्हरो, जग में द्वादश नाम गिनाऊँ।।सूर्यदेव०।।
कानन में कुण्डल लहरत हैं, गल बिच हार तोहिं पहिराऊँ।।सूर्यदेव०।।
युग सहस्त्र योजन पर वासा, प्रखर ज्योति तव सहि नहिं पाऊँ।।सूर्यदेव०।।
रविवासर भक्तहिं तुम पूजैं, लाल बसन अरू फूल चढ़ाऊँ।।सूर्यदेव०।।
ग्रहण लगे नर जाप करत हैं, स्नान-दान हित सरितहिं धाऊँ।।सूर्यदेव०।।
जो नर आरति करैं सूर्य की, जीवत जन्म सकल फल पाऊँ।।सूर्यदेव०।।

दोहा– सूर्यदेव की आरती, पढ़ै सुनै जो कोया।
विनय करत 'पुनीत मिश्र', सुख-सम्पत्ति सब होय।।

*

सोमवार व्रत विधि और माहात्म्य

सोमवार शक्ति सम्बन्धी वार है और इस वार के स्वामी सोम हैं। सोम के व्रती को उचित है कि वह दिन के तीसरे पहर तक सर्वथा ही निराहार रहे। पश्चात् दिन में अथवा रात में केवल एक समय पारण करे। इसमें फलाहार आदि को कोई नियम नहीं हैं। सोमवार के व्रती को यथासाध्य

सभक्ति शिव-पार्वती का पूजन करना योग्य है। सोमवार का व्रत तीन प्रकार से क्रिया जाता है। एक तो साधारण चाहे प्रत्येक सोमवार को किया करे अथवा प्रदोष सहित सोमवार को अथवा गिनकर सोलह सोमवार का व्रत करे। सबकी विधि एक ही है। व्रती को उचित है कि, वह शिवजी की पूजा करने के पश्चात् निम्नलिखित कथा को सुने। कथाएँ तीनों की पृथक्-पृथक् हैं। जैसा व्रती हो, वैसी कथा सुने।

सोमवार व्रत की कथा

प्राचीन काल की बात है कि, एक नगर में एक वैश्य रहता था, जो बड़ा ही धनी तथा ऐश्वर्ययुक्त था, जिसके कारण उसे किसी प्रकार का कष्ट या दु:ख न था। परन्तु इतनी अतुल सम्पत्ति होते हुए भी उसे भोगनेवाली उसकी कोई संतान न थी, जिसका उसे सर्वदा दु:ख बना रहता था। वह वैश्य शिवजी का बड़ा भक्त था और प्रति सोमवार को शिवजी का व्रत तथा पूजन किया करता था। उसे विश्वास था कि शिवजी का भजन-पूजन करने से मुझे एक दिन पुत्र अवश्य उत्पन्न होगा, जो मेरे इस अतुल धन का भोग करेगा। ऐसा मन में विचार कर वह प्रति सोमवार को व्रत करता तथा सायंकाल शिवजी के मन्दिर में जाकर दीपक जलाया करता था तथा बड़ी भक्ति से मधुर पाक व्यंजन बनाकर शिवजी को भोग लगाकर स्वयं प्रसाद लेता और पत्नी को देता था।

उसे ऐसा करते देख भक्तवत्सला देवी पार्वती से न रहा गया और वे शिवजी से बोलीं— 'हे शिवजी ! यह वैश्य प्रति सोमवार को आपका व्रत करके सायंकाल दीपक जलाता तथा इस प्रकार बड़ी भक्ति-भावना से पूजन करता है अतः आप इसके दु:ख का निवारण शीघ्र क्यों नहीं करते?' तब पार्वतीजी के सुन्दर वचनों को सुन शिवजी बोले— 'हे देवी पार्वती! इस वैश्य के तो पुत्र नहीं है, यह इसके पूर्व जन्मों का ही फल है। देवि! यह जगत् तो कर्ममय है, मनुष्य कर्म के बन्धनों से बँधा हुआ यहाँ आता है तथा अपने-अपने कर्मों के फलों को भोगता है। उसी प्रकार यह वैश्य भी पूर्व जन्म के कर्म के कारण इस जन्म में नि:संतान होकर दु:ख उठा रहा है।' शिवजी के ऐसे उपदेशात्मक वचनों को सुनकर भी पार्वतीजी ने नहीं माना और कहने लगी— हे ईश्वर ! आप तो भक्तवत्सल

हैं। फिर अपने भक्त पर क्यों नहीं दया करते जब कि वह सदैव आपकी भक्ति प्रेमपूर्वक. करता है। फिर आप उसे पुत्रवान् करके उसके दु:ख का नाश क्यों नहीं करते? यदि आप अपने भक्तों के दु:ख का निवारण नहीं करेंगे तो कौन आपका व्रत-पूजन और सेवा करेगा? हे शिवजी! मेरा आपसे अनुरोध है कि आप कृपा करके उसे अवश्य ही पुत्रवान् कीजिये।'

जब पार्वतीजी शिवजी से ऐसा कहने लगी तो शिवजी बोले कि— 'हे देवि! जब तुम ऐसा कहती हो तो मैं तुम्हारे कहने से उसे पुत्र का वर देता हूँ। यद्यपि उसके भाग्य में पुत्र का सुख तो नहीं है। यह तो केवल बारह वर्ष तक ही जीवित रहेगा। इसके पश्चात् वह मृत्यु को प्राप्त हो जायेगा।' इस प्रकार कुछ काल व्यतीत होने पर उस वैश्य की स्त्री गर्भवती हुई तथा दसवाँ महीना प्राप्त होने पर एक सुन्दर पुत्र की उत्पत्ति हुई, जिससे उसके घर में बड़ी खुशी मनाई गयी। सब लोग अत्यधिक हर्षित हुए। परन्तु उस वैश्य को कुछ विशेष सुख न मिला, क्योंकि उसे यह विदित था कि यह पुत्र बारह वर्ष बाद पुनः मृत्यु द्वारा ग्रसित हो जायेगा। इस प्रकार हँसी-खुशी में वह बारह वर्ष का हो गया। एक दिन उसकी माता वैश्य से विवाह के लिए कहने लगी, तो उसका पिता विचारकर कहने लगा कि अभी विवाह की क्या जल्दी है, अभी तो मैं इसे काशीजी पढ़ने के लिये भेजूँगा। स्त्री से ऐसा कह उस वैश्य ने बालक के मामा को बुलाया और उसे खूब अधिक धन देकर बोला— अब तुम अपने भानजे को काशीजी ले जाओ और इसे विद्याध्ययन कराओ तथा रास्ते में स्थान-स्थान पर ब्राह्मणों को भोजन देते तथा यज्ञ करते जाना।

इस प्रकार वे दोनों मामा-भानजे स्थान-स्थान पर ब्राह्मणों को भोजन देते तथा यज्ञ करते हुए एक नगर में पहुँचे। वहाँ के राजा की कन्या का उस दिन विवाह था, कन्या बड़ी ही रूपवती और सर्वगुण-सम्पन्न थी, परन्तु राजकुमार अर्थात् जिससे उस राजकुमारी का विवाह होने वाला था, वह काना था, जिससे उसके पिता को चिन्ता थी, परन्तु जब उसने वैश्य के पुत्र को देखा, जो बड़ा रूपवान था, तो विचार कर उसके मामा से कहने लगा कि, यदि थोड़ी देर के लिए आप अपने भानजे को मुझे दे दीजिये तो आपकी बड़ी कृपा होगी। थोड़ी देर की ही बात है। विवाह हो जाने के पश्चात् इसे हम वापस कर देंगे और आपको बहुत-सा धन देंगे।

फिर तो बालक के मामा ने स्वीकार कर लिया। वर का पिता उसे वर बनाकर मण्डप में ले गया और विवाह का समस्त कार्य बड़ी दक्षता से सम्पन्न किया। परन्तु जब लड़का सिन्दूर-दान करके लौटने लगा तो उसने कन्या की साड़ी के आँचल पर लिख दिया कि, हे भामिनी! तुम्हारा विवाह मुझ वैश्य के पुत्र से हुआ है और अब मैं काशी में पढ़ने जा रहा हूँ, परन्तु जिसके साथ तुम्हें भेजा जायेगा, वह एक आँख का काना तुम्हारा पति नहीं है।

इस प्रकार विवाह कार्य सम्पन्न होने पर विदा की बेला पर जब राजकुमारी ने अपनी साड़ी पर कुछ लिखा देखा, तो उसे पढ़कर उसने राजकुमार के साथ जाने से इन्कार कर दिया और बोली— यह मेरा पति नहीं है। मेरा पति तो वैश्य-पुत्र है, जो इस समय काशीजी में पढ़ने के लिए गया है। फिर तो राजकुमारी की ऐसी बात सुन उसके माता-पिता अत्यन्त आश्चर्य में पड़ गये और राजा अर्थात् वर के पिता की धूर्त्तता से अत्यन्त दु:खी हुए तथा कन्या को विदा नहीं किया। बारात बिना कन्या के लौट गयी। उधर वह वैश्य का पुत्र तथा उसका मामा दोनों काशीजी में पहुँचे तथा बालक ने अपना अध्ययन प्रारम्भ कर दिया और उसके मामा ने यज्ञ करना प्रारम्भ किया।

इस प्रकार कुछ दिन व्यतीत होते हुए लड़के की अवस्था बारह वर्ष की हो गयी। उस दिन यज्ञ हो रहा था कि उस बालक ने अपने मामा से कहा— आज मैं कुछ अस्वस्थ हूँ और सोने जा रहा हूँ। ऐसा कह वह जाकर सो गया। परन्तु उसके सोने के थोड़ी ही देर बाद उसके मामा ने आकर देखा तो भानजे को मरा हुआ पाया, जिससे वह अति दु:खित हुआ। परन्तु यज्ञ हो रहा था, इसलिए यज्ञ विध्वंस के भय से चुप ही रहा और जब यज्ञ-कार्य समाप्त हो गया तथा सब ब्राह्मण चले गये। तब वह खूब जोर-जोर से रोने लगा। उसी समय भाग्यवश पार्वतीजी सहित शिवजी उधर से जा रहे थे कि तभी पार्वतीजी ने करुण रुदन सुना, जिसे सुन उनका हृदय द्रवीभूत हो गया और वे शिवजी से कहने लगीं— हे कृपानिधान! देखिये तो कौन इस समय इतनी करुणा से रुदन कर रहा है। आप वहाँ चलकर देखिए वह क्यों रो रहा है? तब पार्वतीजी का ऐसा आग्रह देख शिवजी उस स्थान पर गये कि जहाँ उसका मामा अपने भानजे को लेकर रो रहा था। फिर तो पार्वतीजी ने उस बालक को पहचान लिया

और बोलीं— 'हे महाराज ! देखिये तो, इतना सुन्दर यह वैश्य का बालक मरा जा रहा है, जो आपके वरदान से हुआ था।'

शिवजी बोले— 'हे देवि! यह बालक अपनी आयु समाप्त कर चुका और मर गया। इसमें किसी का क्या दोष?' पार्वतीजी ने कहा— हे देवाधिदेव शिवजी! जैसे आपने इसे अब तक बारह वर्ष की आयु दी थी, वैसे ही जीवनपर्यन्त के लिए और आयु दे दीजिये, नहीं तो वह वणिक् पुत्र के वियोग में मृत्यु को प्राप्त होगा। तब पार्वतीजी के ऐसा कहने पर शिवजी ने वणिक् '-पुत्र को जीवित कर दिया। इस प्रकार वह शिवजी के वरदान से जीवित हो गया और शिव-पार्वती पुनः अपने धाम को अन्तर्धान हो गये।

फिर कुछ दिनों के पश्चात् वह बालक अपने मामा के साथ अपने नगर की ओर चल पड़ा तथा चलते-चलते पुनः उसी नगर में आया जिस नगर में राजकुमारी के साथ उसका विवाह हुआ था। वहाँ पहुंच उसने यज्ञ करके ब्राह्मण-भोजन दिया। जिससे भोजन करके जाते हुए पण्डितों द्वारा राजा को यह खबर लगी कि काशी से कोई वैश्य-पुत्र आया है, जो यज्ञ करके ब्राह्मण-भोजन दे रहा है, राजा उसे देखने के लिए गया और वहाँ पर उसने स्वयं अपने जामाता को देखा तो अति प्रसन्न हो आदर के साथ अपने महल में ले आया और कुछ दिन तक रखकर खूब आदर-सत्कार दिया और पुत्री को खूब दान-दहेज सहित उसके साथ विदा किया। तब वह वणिक-पुत्र स्त्री सहित मामा के साथ अपने नगर की ओर चला। जब वे लोग घर के थोड़ा नजदीक आये तो मामा ने कहा कि मैं जाकर पहले अपनी बहन को तुम्हारे आने की खबर कर आता हूँ, जिससे कि वे वधू सहित तुम्हारा स्वागत करें। इधर वह वैश्य अपनी स्त्री सहित छत पर जा बैठा था कि यदि मेरा पुत्र काशी से लौटकर नहीं आयेगा तो हम लोग यहीं से कूदकर प्राण दे देंगे। परन्तु जब साले ने जाकर कहा कि आपका पुत्र कुशल से अपनी स्त्री सहित आ रहा है, आप लोग विधिवत् उसका स्वागत कीजिये। साले की ऐसी बात सुनकर वे लोग अति प्रसन्न हुए और बड़े आदर के साथ पुत्र-वधू का स्वागत किया और अति प्रसन्न हो सोमवार व्रत करके शिवजी का विधिवत् पूजा-वन्दना किया। जो मनुष्य सोमवार का व्रत करके शिवजी का पूजन करता है और इस कथा को पढ़ता या सुनता है, वह सब कष्टों से छूटकर अपने समस्त मनोरथों को पाता है।

आरती श्री शिवजी की

शीश गङ्ग अर्द्धङ्ग पार्वती सदा विराजत कैलासी।
नंदी भृङ्गी नृत्य करत हैं गुण भक्तन शिव की दासी॥
शीतल मंद सुगन्ध पवन बह बैठे हैं शिव अविनाशी।
करत गान गन्धर्व सप्तस्वर राग-रागिनी अति गासी॥
यक्ष-रक्ष भैरव जहँ डोलत बोलत हैं बनके वासी।
कोयल शब्द सुनावत सुन्दर भँवर करत हैं गुंजासी॥
कल्पद्रुम अरू पारिजात तरू लाग रहे हैं लक्षासी।
कामधेनु कोटिक जहँ डोलत करत फिरत हैं भिक्षासी॥
सूर्यकान्त सम पर्वत शोभित चन्द्रकान्त सम हिम रासी।
छहों तो ऋतु नित फलत रहत हैं पुष्प चढ़त हैं वर्षासी॥
देव मुनिजन की भीड़ पड़त हैं निगम रहत जो नित गासी।
ब्रह्मा विष्णु ध्यान धरत हैं कुछ शिव हमको फरमासी॥
ऋद्धि-सिद्धि के दाता शंकर सदा अनन्दित सुख रासी।
जो कोइ सुमिरन सेवा करता टूट जाय यम की फाँसी॥
त्रिशूलधरजी को ध्यान निरन्तर मन लगाय कर जो गासी।
दूर करो विपदा शिव तनु को जन्म-जन्म शिवपद पासी॥
कैलासी काशी अविनासी मेरी सुध लीजो।
सेवक जान सदा चरणन को अपनो जान दरश दीजो।
तुम जो प्रभुजी सदा सयाने अवगुण मेरो सब ढकियों।
सब अपराध क्षमा कर शंकर किंकर की विनती सुनियो॥

*

सोलह सोमवार व्रत-कथा

एक दिन की बात है शिव-पार्वती जब पृथ्वी भ्रमण के लिए निकले तो मार्ग में एक शिवालय देख वहाँ ठहर गये। उस रमणीक शिवालय ने उनका मन मोहित कर लिया, जिससे वे वहीं रहने का विचार कर अपनी लीला से संसार को मोहित करने के निमित्त वहीं ठहर गये। एक दिन पार्वतीजी शिवजी से चौसर खेलने का आग्रह करने लगीं, शिवजी भार्या

(पार्वतीजी) के आग्रह को न टाल सके और चौंसर (पासा) खेलने लगे। उसी समय उस शिवालय का पुजारी आया, जिसे देख पार्वतीजी ने उससे पूछा हम दोनों में-से कौन जीतेगा मैं या भगवान् शिवजी?

देवी पार्वतीजी के ऐसा पूछने पर ब्राह्मण बोला— इस खेल में महादेवजी जीतेंगे, परन्तु जीत पार्वतीजी की हुई, जिससे पार्वतीजी उस ब्राह्मण के मिथ्या भाषण पर क्रुद्ध हो गयीं और शाप देने को उद्यत हुईं। यद्यपि शिवजी ने उन्हें बहुत समझाया, परन्तु वे न मानी और शाप देती हुई बोलीं— रे ब्राह्मण ! तू मिथ्याभाषी है इसलिये जा मैं तुझे कोढ़ी होने का शाप देती हूँ। देवी पार्वतीजी द्वारा शापित होने के कारण वह ब्राह्मण कोढ़ी हो गया, जिससे अत्यन्त कष्ट पाते हुए वहाँ निवास कर रहा था कि एक दिन देवलोक की कुछ देवांगनायें वहाँ आईं और उस ब्राह्मण को दुःखित देख पूछने लगीं— हे ब्राह्मण देव ! आपको यह रोग क्यों हुआ, जिसके कारण आप दुःखी हैं? ब्राह्मण ने अपना सब वृत्तान्त वर्णन किया। उस वृत्तान्त को सुन तथा उसके ऊपर माता पार्वती का कोप जान उन्होंने कहा— हे ब्राह्मण ! तुम भगवान् शिवजी की आराधना करो और उनके प्रसन्नार्थ सोलह सोमवार व्रत करो, तुम्हारा कल्याण होगा और उनकी कृपा से तुम्हारा यह दुःख भी दूर हो जायेगा। फिर तो उस दुःखी ब्राह्मण ने सोलह सोमवार के व्रत की विधि पूछी।

अप्सरायें बोलीं— हे ब्राह्मण! ध्यान से सुनो, सोलह सोमवार के व्रत में व्रतकर्त्ता को चाहिए कि वह शिवजी का ध्यान करते हुए स्नान करके स्वच्छ वस्त्र धारण करे और बड़ी भक्ति-भावना के साथ शिवजी का व्रत करे तथा पूजा के निमित्त आधा सेर गेहूँ का आटा लेवे और उसका चूरमा बनाकर तीन भाग करे तथा प्रदोषकाल प्राप्त होने पर धूप, दीप, घी, गुड़, नैवेद्य, पूंगीफल, बेलपत्र, जनेऊ, चन्दन, अक्षत तथा पुष्पादि से भगवान् शिव और माता पार्वतीजी का पूजन करें तथा जो तीन भाग करके चूरमा रखा है उसका भोग लगावे तथा एक भाग शिवजी के निमित्त अर्पण कर दे तथा दूसरा भाग उपस्थित सज्जनों में बाँट दें और तीसरे भाग को स्वयं खा लेवें। इस प्रकार प्रति सोलह सोमवारों तक व्रत रखें, सत्रहवें सोमवार को पाँच सेर गेहूँ के आटे की बाटी बनावें तथा घी, गुड़ मिलाकर चूरमा बनावें और पूर्वोक्त नियमानुसार सबको बाँटकर स्वयं भोजन करें।

इस प्रकार सोलह सोमवार तक जो मनुष्य व्रत करक सत्रहवें सोमवार को उसे पूर्ण करता है। वह भगवान् शिवजी की कृपा से समस्त मनोरथों को पाता है। इसलिये हे द्विजवर्य! तुम इस व्रत को करो, इसके करने से तुम्हारे समस्त संकट नष्ट हो जायेंगे। ऐसा कह वह अप्सरायें वहाँ से अपने धाम को चली गयीं। पश्चात् उस ब्राह्मण ने सोलह सोमवारों का व्रत किया और भगवान् शिवजी की कृपा से रोग मुक्त हुआ।

कुछ समय पश्चात् शिवजी तथा पार्वतीजी पुनः उस मंदिर में आये तथा उस ब्राह्मण को स्वस्थ तथा निरोग देखकर अत्यन्त आश्चर्य में पड़ गये, ब्राह्मण को निरोग देख पार्वतीजी ने उससे कारण पूछा। ब्राह्मण ने सोमवार-व्रत का समस्त वृत्तान्त कह सुनाया। पार्वतीजी भी उस व्रत के माहात्म्य से अति प्रसन्न हुईं और उन्होंने भी ब्राह्मण से व्रत के समस्त विधान को पूछा और व्रत किया, जिसके फलस्वरूप उनके रूठे हुए पुत्र स्वामी कार्तिकेयजी घर लौट आये तथा माता के प्रति अनुगामी हुए। अपने विचारों में एकाएक परिवर्तन हो आया, उसका कारण वे स्वयं न जान सके। एक दिन उन्होंने अपनी माता पार्वती से पूछा तो पार्वतीज़ी ने उन्हें व्रत का समस्त विधान वर्णन किया। स्वामी कार्तिकेयजी ने भी व्रत किया, जिससे उनका बहुत दिनों से बिछुड़ा हुआ द्विज मित्र उनसे आकर मिला। बहुत दिनों पर एकाएक मिलन होने के कारण उस विप्र मित्र को बड़ा आश्चर्य हुआ, जिसका वर्णन उसने कार्तिकेयजी से किया तो कार्तिकेयजी ने सोलह सोमवार व्रत की कथा का वर्णन माहात्म्य सहित किया। फिर तो उस ब्राह्मण ने जो कि अभी कुँवारा था, विवाह करने की इच्छा से व्रत किया तथा कुमार से पूछकर सब नियमों का पालन किया।

एक दिन किसी काम से वह किसी दूसरे नगर में गया। भाग्यवश वहाँ राजा की कन्या का उस दिन स्वयंकर होने वाला था। स्वयंवर में बड़े-बड़े महान् तथा शक्तिशाली राजा-महाराजा पधारे तथा बहुत से लोग केवल स्वयंवर देखने आये, दर्शकों में वह ब्राह्मण-पुत्र भी गया था। जब स्वयंवर की सारी तैयारी हो गयी तब तक एक खूब सजी हुई सुन्दर हथिनी वरमाला लिये हुए निकली तथा घूमते-घूमते उसने दर्शकों के मध्य बैठे हुए उस ब्राह्मण-पुत्र के गले में जयमाला डाल दी। राजा ने अपनी प्रथा के अनुसार राजकुमारी का विवाह उसी ब्राह्मण के साथ कर दिया तथा दान-दहेज में

बहुत-सा धन दिया। सुन्दर स्त्री तथा विपुल धन-धान्य पाकर वह ब्राह्मण अति प्रसन्न हुआ तथा सोलह सोमवार के व्रत की महिमा वर्णन करते एवं शिवजी में अत्यन्त प्रीति रखते हुए आनन्द से रहने लगा।

इस प्रकार बहुत दिन व्यतीत हो गये कि एक दिन राजकुमारी ने पति से पूछा— हे स्वामिन्! आपने ऐसा कौन-सा पुण्य किया था, जिसके प्रभाव से सब बड़े-बड़े राजाओं को छोड़कर हथिनी ने आपके गले में हार डाल दिया। जिसके कारण आपसे मेरा यह विवाह सम्पन्न हुआ, हे स्वामिन् ! आप कृपा करके सत्य-सत्य कहिये ? राजकुमारी के ऐसे वचनों को सुन उस ब्राह्मण ने सोलह सोमवार के व्रत का वर्णन किया। राजकुमारी ने भी पुत्र की कामना से व्रत किया तथा शिवजी से प्रार्थना करते हुई बोली— हे शिवजी! मुझे आपके ही समान पुत्र उत्पन्न हो, जो अति धर्मात्मा तथा आपकी भक्ति करने वाला हो। ऐसा कहकर वह सोमवार व्रत करने लगी, जिसके फलस्वरूप उसे सर्वगुण-सम्पन्न एक उत्तम पुत्र उत्पन्न हुआ, जिससे वह ब्राह्मण तथा राजकुमारी अर्थात् ब्राह्मणी अति प्रसन्न हुई और बड़े लाड़-प्यार से उसका पालन-पोषण होने लगा। इस प्रकार बहुत समय व्यतीत होने पर वह पुत्र युवक हुआ तो एक दिन उसने अपनी माता से अति आदर के साथ यह पूछा— हे माँ! आपने ऐसा कौन-सा पुण्य या व्रत किया था कि मेरे जैसा पुत्र आपको मिला? माता ने सोलह सोमवार-व्रत तथा शिवजी की महिमा का समस्त वृत्तान्त पुत्र को सुना दिया। पुत्र भी राज्य पाने की इच्छा से सोलह सोमवार का व्रत किया। शिवजी की असीम कृपा से किसी देश के वृद्ध राजा के दूतों ने आकर उस ब्राह्मण-पुत्र को सर्वगुण-सम्पन्न देखकर उसी को राजकन्या के निमित्त वरण किया। राजा के कोई पुत्र नहीं था, इस कारण राजा का देहान्त होने पर वह ब्राह्मण राजा नियुक्त हुआ। जिससे वह ब्राह्मणपुत्र अति सम्पन्न हुआ और राजा बनने पर भी मिथ्या गर्व न करके वह शिव-भक्ति प्रेमपूर्वक करता रहा और सोलह सोमवार का व्रत भी नियमपूर्वक करता रहा।

इस प्रकार नियमपूर्वक व्रत करते हुये राजा को जब सत्रहवाँ सोमवार आया तो राजा ने अपनी पत्नी को सब सामग्री के साथ शिवालय में आने के लिए कहा और स्वयं पहले चला गया, परन्तु राजकन्या ने मूढ़तावश अपने पति की बात न मानी तथा पूजा की सामग्री एवं नैवेद्य के लिए तीन

भाग बाटी के चूरमे के स्थान पर तीन थैली स्वर्ण मुद्रा दासी द्वारा पहुँचवा दिया और स्वयं न गयी। तदुपरान्त जब राजा शिवपूजन समाप्त कर चुका तो यह आकाशवाणी हुई कि— हे राजन् ! तुम्हारा कल्याण हो, तुम तो बड़े शिव-भक्त हो परन्तु तुम्हारी रानी बड़ी मूढ़ और कुलनाशिनी है, अतः तुम इस रानी को शीघ्र ही महल से निकाल दो, ऐसा कह आकाशवाणी चुप हो गयी।

राजा ने आकाशवाणी का समस्त वृत्तान्त अपने मंत्रियों से कहा। मंत्रियों ने उसकी बात को विश्वास न किया परन्तु राजा ने किसी की बात पर बिना विचार किये ही रानी को घर से निकाल दिया। रोती-बिलखती रानी अपने भाग्य को कोसती हुई, एक नगर में पहुँची, जहाँ एक वृद्धा सूत कात रही थी, उस वृद्धा का सूत बाजार में बेचना था। उसने उस दुःखी रानी को देखकर अपने पास बुलाया और बोली— मैं वृद्धा हूँ, जरा मेरा सूत अपने सिर पर रखकर बाजार चल और मोल-तोल करके बिकवा दे, मैं तुझे भोजन दूँगी और अपने पास रख लूँगी। रानी ज्योंही वृद्धा का सूत अपने सिर पर रखकर चली कि बड़ी जोर से आँधी आई और वृद्धा का सारा सूत हवा में उड़ गया। वृद्धा बड़ी दुःखित हुई और रानी को वास्तव में भाग्यहीन कहकर भगा दिया। रोती हुई रानी एक तेली के घर गई, ज्योंही उसने उसके घर में पैर रखा कि उसका तेल से भरा हुआ सारा घड़ा चटक गया और उसका तेल गिर गया। तेली ने भी उसे अपने घर से निकाल दिया। इस प्रकार सबके द्वारा निष्कासित रानी एक वन में गई तथा एक सुन्दर तालाब देख उसमें जल पीने गयी तो उसका कुछ जल सूख गया तथा जो बचा वह भी गंदा और छोटे-छोटे कीड़ों से युक्त हो गया। भाग्य की मारी रानी ने उसी गंदे जल को पिया और एक वृक्ष की छाया में बैठी तो उस के बैठते ही वृक्ष के भी भाग्य फूट गये और वह भी पत्तों से विहीन हो गया। फिर वहाँ से उठकर एक दूसरे वृक्ष के नीचे गयी। परन्तु वह जिस वृक्ष के भी नीचे जाती उसी का पत्ता झड़कर नीचे गिर जाता था।

उसी वन में कुछ ग्वाले अपनी गौओं के चरा रहे थे। जब उन्होंने वन की ऐसी दशा देखी तो वे बड़े अप्रसन्न हुए और रानी को पकड़ कर वहीं मन्दिर में स्थित शिवालय के पुजारी के समीप ले गये और उसकी सारी दशा कह सुनाई। तब उस पुजारी ने रानी की ओर देखा तो देखने में वह

भाग्य की मारी कुलीन स्त्री के समान प्रतीत हो रही थी। थोड़ी देर बाद वे विचार कर बोले—पुत्री तेरी यह दशा क्यों हो गयी है, तू तो किसी कुलीन घर की शोभा-सी प्रतीत हो रही है। तेरे ऊपर किसी देवता का कोप तो नहीं है? हे पुत्री, नि:संकोच अपना सारा वृत्तान्त मुझसे वर्णन करो। रानी से ऐसा कह वे ग्वालों को धैर्य देकर उन्हें विदा किया और पुन: रानी की ओर प्रश्नसूचक दृष्टि से देखने लगे। रानी ने अपना परिचय दिया तथा शिव-पूजन की सामग्री न ले जाने की भी बात कही। फिर उन पुजारी ने विचार कर कहा— पुत्री! तुम्हारे ऊपर शिवजी का कोप है, अत: तुम उसके निवारणार्थ सोलह सोमवार का व्रत करो, ऐसा करने से तुम्हारे सब कष्ट नष्ट हो जायेंगे। पुन: रानी उस पुजारी से सोलह सोमवार का व्रत विधिपूर्वक पूछ करके मन में शिवजी का ध्यान करती हुई सत्रहवें सोमवार को विधि-विधान से पूजन किया। शिवजी रानी के व्रत से अति प्रसन्न हुए और उनकी प्रसन्नता के प्रभाव से राजा ने फिर विचार किया कि रानी को घर से निकाले बहुत दिन व्यतीत हुए अब उसका प्रायश्चित हो गया होगा। अत: उसे घर लाना चाहिए। ऐसा विचार कर उन्होंने चारों तरफ रानी को खोजने के लिये दूत भेज दिये। कुछ दूत रानी को खोजते हुए उसी शिवालय में पहुँचे। परन्तु महात्माजी ने दूतों के साथ रानी को नहीं भेजा और कहा कि, जाकर राजा को भेज दो जिसने निकाला है, वही सब प्रमाण सहित अपनी पत्नी को ले जायँ। दूतों ने जाकर राजा से सब वृत्तान्त का वर्णन किया, जिसे सुन राजा स्वयं ही उस शिवालय में गये और वहाँ के पुजारी से पूर्व वृत्तान्त कहा और यह भी बताया कि मैंने शिवजी के शाप के कारण ही निकाला था। अब मुझे ऐसा लगता है कि शिवजी का क्रोध कुछ शान्त हो गया है, इसलिये अब मैं इसे ले जाना चाहता हूँ आप आज्ञा दीजिये। उन महात्मा पुजारी ने राजा के वचनों को सत्य माना और आज्ञा दे दी। बड़ी प्रसन्नता से राजा-रानी को अपने घर ले गये और समस्त नगर में खूब खुशी मनाई गई और राजा ने बहुत-सा दान-दक्षिणा दिया और शिवजी के अति भक्त हो गये तथा नियमपूर्वक सोलह सोमवार का व्रत करने लगे। जिससे उनके ऊपर शिवजी की अति कृपा हुई और वे मृत्यु के पश्चात् शिवधाम को गये।

*

मंगलवार-व्रत माहात्म्य और विधि

सूतजी बोले— हे ब्राह्मणों, जब सृष्टि के आरम्भ में सर्वज्ञ दयालु और सर्व-समर्थ महादेवजी सब लोगों के उपकारार्थ वारों की कल्पना की तो उन सबके अलग-अलग देवता भी निश्चित किये। इनमें उन सर्वसमर्थ महादेव ने आलस्य और पाप की निवृत्ति के लिये भगवान् विष्णु का मंगल नामक वार बनाया। मंगल व्याधियों का निवारण करते हैं। आलस्य और पाप को दूर करते हैं, यही इनका फल है। देव-पूजन की पद्धति से जो इनकी आराधना एवं पूजा करता है उनके सब मनोरथ पूर्ण होते हैं। मंगलवार को रोगों की शान्ति के लिये काली आदि की पूजा करें तथा उड़द मूँग एवं अरहर से युक्त अन्न से ब्राह्मणों को भोजन करावें। ऐसा करने से वह आरोग्य आदि फल का भागी होता है। साधारण मंगलवार का व्रत करने में एक ही समय गेहूँ और गुड़ का भोजन उत्तम कहा गया है। इक्कीस सप्ताह तक मंगलवार का व्रत करने से उपासक मंगल के दोषों से निवृत्त हो जाता है और यदि उसे रक्त विकार होता है तो वह दूर होकर उसके शरीर में बल की वृद्धि होती है। उसके सारे विघ्न दूर हो जाते हैं और वह राज-सम्मान का भी लाभ करता है। मंगल के व्रती को उचित है कि वह लाल रंग के पुष्प देवता पर चढ़ावे और लाल ही वस्त्र धारण करें। मुख्यतः इस दिन हनुमान्जी की पूजा करें और निम्नलिखित मंगलवार की कथा सुनें।

मंगलवार-व्रत कथा

पूर्वकाल की बात है कि एक ब्राह्मण तथा एक ब्राह्मणी थे जिसके कोई सन्तान न थी। इस कारण वे दिन-रात भगवान् से प्रार्थना करते थे कि उन्हें कोई पुत्र हो जाय। पुत्र की कामना करने वाला वह ब्राह्मण तो वन में रहकर हनुमानजी की आराधना किया करता था। उसकी स्त्री घर में ही रहकर पुत्र के लिए हनुमान्जी की पूजा करती थी और हर मंगलवार को व्रत करके हनुमान्जी को भोग लगाने के पश्चात् ही भोजन करती थी। परन्तु एक दिन कोई ऐसा व्रत पड़ गया जिसमें ब्राह्मणी को भोजन नहीं बनाना था, इस कारण उसने न भोजन बनाया और न ही भोग लगाया, जिसके कारण वह कुछ खा-पी भी न सकी। उसने मन में यह प्रण किया कि छः

दिन के बाद जब मंगलवार आयेगा तब भोजन निश्चय करूँगी। वह छः दिन तक लगातार व्रत कर गई। जब मंगलवार आया और ज्योंही वह कुछ करने को उठी कि त्योंही मूर्च्छा आ गयी और वह अचेत होकर गिर पड़ी। उसी समय हनुमान्‌जी ने ब्राह्मणी को दर्शन दिया और कहने लगे— हे ब्राह्मणी ! तेरी पूजा सफल हुई, मैं तुझ पर प्रसन्न हूँ और तुझे यह सुन्दर बालक देता हूँ, जो हर समय तुम्हारी सेवा करेगा तथा जिसके कामों से तुझे सर्वदा यश मिलता रहेगा। ऐसा कह हनुमान्‌जी ने एक खूब सुन्दर पुत्र उसे प्रदान किया और अन्तर्धान हो गये।

ब्राह्मणी पुत्र पाकर अति प्रसन्न हो अपने काम में लग गयी। उसी समय ब्राह्मण भी वन से पूजा करके आये और उन्होंने बालक को देखकर ब्राह्मणी से उसके विषय में पूछा कि यह बालक कौन है तथा किसका पुत्र है। ब्राह्मणी ने कहा— यह अपना ही पुत्र है। ब्राह्मण बहुत क्रुद्ध हुआ और स्त्री को कुलटा, पापिनी इत्यादि कहकर लांछित करने लगा। तब ब्राह्मणी ब्राह्मण को क्रोध करते देखकर समझाने लगी, परन्तु वह नहीं समझा। उस बालक को अपने साथ वन में ले गया तथा धोखे से उसे कुएँ में धक्का देकर गिरा दिया और घर चला आया। पुत्र मंगल को स्वामी के साथ न देखकर ब्राह्मणी पूछने लगी— मंगल कहाँ है? वह बोला— मैं क्या जानूँ, परन्तु माँ ने ज्योंही मंगल कहकर आवाज दिया कि त्योंही मंगल एक तरफ से हँसता हुआ चला आया। इस प्रकार ब्राह्मण ने कई बार मंगल को मारना चाहा, परन्तु वह बालक तो हनुमान्‌जी का था, अतः हमेशा ही बचता रहा और ब्राह्मणी के आवाज देने पर वह बालक तुरंत उपस्थित हो जाता, जिससे वह ब्राह्मण अत्यन्त आश्चर्य में पड़ा था।

किसी समय वह ब्राह्मण सो रहा था कि रात्रि में उसे हनुमान्‌जी ने दर्शन दिया और कहा कि— हे ब्राह्मणदेव! तुम अपनी स्त्री पर तथा बालक मगल पर किसी भी प्रकार का संदेह मत करो, क्योंकि वह बालक मेरा है। तुम्हारी स्त्री मेरी भक्ति बड़ी श्रद्धा से करती है इसलिए मैंने उसे पुत्र दिया है। पश्चात् नींद खुलने पर उस ब्राह्मण ने अपनी स्त्री से भला-बुरा कहने के कारण क्षमा माँगा तथा पुत्र मंगल को बहुत प्यार किया और प्रसन्नता से श्रीहनुमान्‌जी का पूजन करने लगा। इस प्रकार जो भी मनुष्य इस कथा को पढ़ता, सुनता या मंगलवार का व्रत करता है उसके समस्त

कष्ट हनुमान्‌जी की कृपा से दूर होते हैं और वह मनोवांछित फल पाता है।

मंगल देव की आरती

जय श्री भौम देवा, स्वामी जय श्री भौम देवा।
सब में आप शिरोमणि मानत सब देवा।।
सभी ग्रहों में बढ़कर महिमा अति भारी।
धरणी पुत्र कहायो मानत संसारी।।जय श्री०।।
क्रोध दशा में हो जाते तुम अनिष्ट कर्ता।
राजी हो बन जाते सब ही के दु:खहर्ता।।जय श्री०।।
राजा रामचन्द्रजी ने कष्ट सही भारी।
विमुख हुए से भुगता राजा ने विपदा सारी।।जय श्री०।।
सब में आप प्रबल हो जग में महिमा तव भारी।
धन-सम्पत्ति सुख देवो कर दो सुखियारी।।जय श्री०।।
भौमवार है वार आपका पूजत हैं सब नर-नारी।
दान-मान बहु करते प्रेम सहित भारी।।जय श्री०।।
भौम देव की आरती जो कोई नर गावे।
कहें 'पुनीत' सो नर सदा, भौम दया फल पावे।।जय श्री०।।

*

बुधवार व्रत माहात्म्य और विधि

सूतजी बोले— हे ऋषियों ! जब पुण्य-पाप की रचना हो चुकी तो उनके करने वाले लोगों को शुभाशुभ फल देने के लिये भगवान् शिव ने इन्द्र और यम के वारों का निमार्ण किया। ये दोनों वार क्रमशः भोग देने वाले तथा लोगों के मृत्यु-भय को दूर करने वाले हैं। भगवान् शिवजी संसार रूपी रोग को दूर करने के लिये वैद्य हैं। वही सबके ज्ञाता तथा समस्त औषधियों के भी औषध हैं। इस प्रकार भगवान् शिवजी ने सूर्य आदि सात ग्रहों को, जो अपने ही स्वरूप भूत तथा प्राणियों के लिये सुख-दु:ख के सूचक हैं। सात वारों की रचना कर उनके स्वामी को निश्चित किये। वे सब नक्षत्रों के ज्योति मण्डल में स्थित हैं। जैसे शिवजी के वार या दिन के स्वामी सूर्य हैं। शक्ति सम्बन्धी वार के स्वामी सोम हैं। कुमार सम्बन्धी दिन के अधिपति मंगल है। वैसे ही विष्णुवार के स्वामी बुध हैं।

ये बुध पुष्टिदायक हैं। उनके लिए होम करना, दान करना तथा जप करना अथवा अग्नि में ब्राह्मण के शरीर में आराध्यदेव की भावना करके षोडशोपचार से उनकी पूजा-आराधना करना योग्य है। बुधवार को विद्वान् पुरुष दधियुक्त अन्न से भगवान् विष्णु का पूजन करें। ऐसा करने से सर्वदा पुत्र, मित्र और कलत्र आदि की पुष्टि होती है। हे द्विजो ! इस व्रत को जो करता और इनकी कथा को सुनता है उसके समस्त मनोरथ पूर्ण होते हैं।

बुधवार-व्रत कथा

बहुत समय पहले की बात है कि, रामू नामक एक व्यक्ति अपनी ससुराल मेहमानी के लिए गया और मेहमान बनकर रहने लगा। जब इस प्रकार रहते हुए उसे बहुत दिन व्यतीत हो गये तो एक बुधवार के दिन उसने अपने ससुर से विदाई माँगी और कहा कि मैंने आपके यहाँ इतने दिन मेहमान के रूप में व्यतीत किये अतः अब आप मुझे सपत्नीक घर जाने की आज्ञा दें। उसके ससुर ने कहा— हम आज कैसे भेज दें, आज तो बुधवार है, आज तो विदाई नहीं हो सकती। हाँ, कल अवश्य कर देंगे। फिर तो ससुर की ऐसी बातों को सुनकर भी उसने न माना और जबरदस्ती बार-बार आग्रह करने लगा। तब ससुर ने दामाद को पुत्री सहित विदा कर दिया। इस प्रकार बुधवार के दिन ससुराल से विदाई लेकर चला और रास्ते में कुछ ही दूर पहुँचा था कि उसकी स्त्री को प्यास लगी और वह रथ से उतर कर पानी लेने चल पड़ा और जब थोड़ी देर में पानी लेकर आया तो देखता क्या है कि उसके स्थान पर उसी का स्वरूप धारण किये हुए एक अन्य पुरुष बैठा है। फिर तो उस अजनवी पुरुष को अपने ही समान पा वह बड़ा चकित हुआ और विचार करने लगा कि, मेरे ही स्वरूप का यह कौन व्यक्ति है? ऐसा विचार कर क्रुद्ध होते हुए रामू ने उस व्यक्ति से पूछा— तुम कौन हो, जो मेरी अनुपस्थिति में मेरी पत्नी के समीप रथ में बैठे हो? परन्तु वह व्यक्ति बोला— पहले यह तो बताओ कि तुम कौन हो? तुम मुझसे क्यों पूछ रहे हो और यदि पूछते हो तो मैं बताता हूँ कि यह मेरी स्त्री है। मैं इसे अपनी ससुराल से विदा कराके ला रहा हूँ और रथ में बैठा हूँ। इस प्रकार उन दोनों में परस्पर वाद-विवाद होने लगा, इससे बहुत से आदमी एकत्र हो गये, परन्तु कोई भी उन दोनों के झगड़े का निर्णय न कर सके और वह स्त्री भी दो पुरुषों को एक ही स्वरूप तथा

वस्त्रों वाला देखकर चकित रह गयी तथा वह जान न सकी कि इसमें मेरा पति कौन है।

इसी बीच राजा को इस झगड़े का समाचार मिला और उन्होंने अपने सिपाहियों को जाँच के लिए भेजा। फिर तो राजा के सिपाहियों ने रामू को पकड़ लिया और राजा के पास ले चले। सिपाहियों द्वारा पकड़े जाने पर रामू अत्यन्त दुःखी हुआ और रोते हुए विलाप करने लगा कि भगवन् ! यह सब क्या है, कौन झूठ है तथा कौन सच है ऐसा कहकर रामू रोने लगा तथा भगवान् कि दुहाई देने लगा। उसी समय आकाशवाणी हुई कि रामू नामका यह व्यक्ति जबर्दस्ती से अपने ससुर का कहना न मानकर पत्नी को बुधवार के दिन लेकर चला, जिसका यह फल है। बुधवार को विदाई लेकर चलने के कारण ही इसे यह दुःख प्राप्त हुए हैं। ऐसा कह आकाशवाणी चुप हो गयी। पश्चात् भगवान् बुधजी अन्तर्धान हो गये फिर तो रामू ने भगवान् बुध की आराधना की, जिसके कारण वह राजा के सिपाहियों द्वारा मुक्त हो गया और भगवान् बुध की स्तुति करता हुआ स्त्री-सहित घर आया और भगवान् बुध के प्रसन्नार्थ व्रत इत्यादि करने लगा।

जो मनुष्य इस बुधवार-व्रत को करता अथवा केवल कथा ही श्रवण करता या पठन-पाठन करता है, उसको बुधवार के दिन गमन करने पर कोई भी कष्ट नहीं पड़ता।

बुधदेव की आरती

जय श्री बुध देवा, स्वामी जय श्री बुध देवा,
सबमें आप शिरोमणि मानत सब देवा।
सभी ग्रहों में बढ़कर महिमा अति भारी,
चन्द्र-पुत्र कहायो मानत संसारी ॥जय श्री०॥
क्रोध दशा में हो जाते हो, तुम अनिष्टकर्ता,
राजी हो बन जाते, सब ही के दुखहर्ता ॥जय श्री०॥
सब में आप प्रबल हो जग में महिमा तव भारी,
धन-सम्पत्ति सुख देवो कर दो सुखियारी ॥जय श्री०॥
सौम्यवार है बार आपका पूजत हैं सब नर-नारी,
दान-मान बहु करते प्रेम सहित भारी ॥जय श्री०॥

चन्द्रपुत्र की आरती जो कोई नर गावे,
कहें 'पुनीत' भक्तियुत, सो नर बुध दया फल पावे।।जय श्री०।।

*

बृहस्पतिवार-व्रत माहात्म्य और विधि

सूतजी बोले -हे महर्षियो! सब वारों के समान भगवान् शिव ने पुष्टि और रक्षा के लिए आयुष्यकर्ता त्रिलोकस्रष्टा परमेष्ठी का आयुष्यकारक वार बनाया। जिससे सम्पूर्ण जगत् के आयुष्य की सिद्धि हो सके। ब्रह्माजी के इस वार के अधिपति बृहस्पति हैं। जैसे सूर्य आयोग्य के और चन्द्रमा सम्पत्ति के दाता हैं, मंगल व्याधियों के निवारणकर्ता हैं, बुध पुष्टि देते हैं। उसी प्रकार बृहस्पति आयु के वृद्धिकर्ता हैं। जो दीर्घायु होने की अभिलाषा रखता हो, वह गुरुवार को आयु की पुष्टि के लिए वस्त्र, यज्ञोपवीत तथा घृत मिश्रित हव्य से हवन-पूजन करे। जो इस प्रकार देवताओं की पूजा करेगा, वह आरोग्य आदि फल का भागी होगा।

बृहस्पतिवार-व्रत कथा

एक नगर में एक राजा रहता था, जो धन-धान्य एवं ऐश्वर्य से परिपूर्ण था। इतना धन-धान्य होते हुए भी उसकी स्त्री अति कृपण थी। यदि उसके द्वार पर कोई भिक्षार्थी आ जाता तो वह उसे कुछ न देती और बहाना बनाकर उसे विदा कर देती थी। एक समय बृहस्पतिवार के दिन वह रानी कुछ कार्य कर रही थी कि एक भिक्षार्थी साधु उसके द्वार पर आया और भिक्षा की याचना किया। रानी बोली— महराज! इस समय तो मैं कार्य कर रही हूँ, आपको कुछ भी नहीं दे सकती, कृपाकर आप फिर अवकाश के समय आवें। फिर तो गृहस्वामिनी द्वारा ऐसी बात सुन वह भिक्षार्थी साधु बिना कुछ पाये ही खाली हाथ चला गया और पुनः कुछ दिन पश्चात् वह साधु महात्मा आये और भिक्षा की याचना की। उस समय गृहस्वामिनी अर्थात् कृपण रानी भोजन कर रही थी। बोली— महाराज! इस समय भी मुझे अवकाश नहीं है, अतः आप फिर आवें। तीसरी बार वे महात्मा पुनः आये तो गृहस्वामिनी ने फिर बहाना बनाकर उन्हें टालना चाहा, परन्तु इस बार उन महात्मा ने कहा— मैं जब आता हूँ तब तुम्हें

अवकाश ही नहीं रहता तो क्या जब तुम्हें बिलकुल अवकाश हो जाय तब तुम मुझे भिक्षा दोगी? गृहस्वामिनी बोली— हाँ महाराज! यदि मुझे अभी अवकाश हो जाय तो अभी दे दूँ परन्तु क्या बताऊँ इस समय मुझे अवकाश नहीं है, नहीं तो अभी दे देती।

महात्मा बोले— अच्छा, यदि तुम अवकाश ही चाहती हो तो बृहस्पतिवार को देर से अर्थात् दिन चढ़े उठो और सारे घर में झाड़ू आदि लगाकर एक तरफ एकत्र करके रखो और घर में चौका आदि मत लगाओ। घर के पुरुषों के हजामत आदि बनवाने के लिए कह दो तथा रसोई बना कर चूल्हे रख देना, सामने मत रखना और सायंकाल जब अंधकार हो जाय तभी दीपक जलाना। बृहस्पतिवार को न तो पीली वस्तु का भोजन करो न तो पीला वस्तु ही धारण करो। ऐसा करने से तुम्हें अवकाश अवश्य मिलेगा। फिर तो गृहस्वामिनी ऐसा ही करने लगी जिसका फल हुआ कि उसके घर में भोजन एक दाना भी न रहा और उसे हर समय अवकाश रहता, कोई काम ही न करना पड़ता था। एक दिन अचानक वे ही महात्मा उसके द्वार पर गये तो उन्हें पुनः आया देख गृहस्वामिनी बोली— महाराज ! अब मैं आपको क्या दूँ, मेरे घर में तो एक भी दाना नहीं है। महात्मा बोले— अब मुझे तुम क्यों नहीं कुछ देती, अब तो तुम्हें बिल्कुल अवकाश है। जब तुम्हारे घर में सब कुछ था तब तुम धन-धान्य से पूर्ण थी तब तो तुम्हें अवकाश ही नहीं था। अब तो तुम्हें पूरा-पूरा अवकाश हो गया, अब तुम्हें क्या चाहिये, तुम तो अवकाश ही चाहती थी सो तुम पा गयी।

गृहस्वामिनी बोली— महाराज ! मैं हाथ जोड़कर प्रार्थना करती हूँ कि अब आप ऐसा कोई उपाय बतलाइये कि जिससे मैं पहले जैसी ही सम्पन्न हो जाऊँ, मैं प्रतिज्ञा करती हूँ कि आप जैसा कहेंगे मैं वैसा ही करूँगी। फिर तो उसकी प्रार्थना से महात्मा द्रवीभूत हो गये और बोले, अच्छा सुनो— प्रातः ब्राह्ममुहूर्त में उठकर स्नानादि से निवृत्त होकर अपने घर में गौ के गोबर से लीपकर स्वच्छ करो। घर के पुरुष बृहस्पतिवार को कभी भी हजामत न बनवाकर शुक्रवार को बनवावें, ठीक समय पर सायंकाल दीपक जलाओ। क्षुधा पीड़ितों को भोजन तथा प्यासों को पानी देती रहो। ऐसा करने से तुम धन-धान्य तथा ऐश्वर्य से पूर्ण रहोगी तथा भगवान्

बृहस्पतिजी की कृपा से सब मनोकामनाएँ पूर्ण होंगी, ऐसा कह वे महात्मा अन्तर्धान हो गये। फिर तो उस गृहस्वामिनी ने उनके कहे अनुसार समस्त कार्य करना प्रारम्भ किया, जिससे वे भगवान् बृहस्पति उसके ऊपर प्रसन्न हुए और वह धन-धान्य से पूर्ण हो गयी। इस प्रकार नियम पालन करने वाले सभी स्त्री-पुरुष बृहस्पतिजी के प्रिय होते हैं तथा उनकी समस्त मनोकामनायें पूर्ण होती हैं।

बृहस्पतिवार की आरती

ॐ जय बृहस्पति देवा, जय बृहस्पति देवा।
छिन-छिन भोग लगाऊँ, फल मेवा ।।ॐ जय०।।
तुम पूरण परमात्मा तुम अन्तर्यामी।
जगतपिता जगदीश्वर तुम सबके स्वामी ।।ॐ जय०।।
चरणामृत निज निर्मल, सब पातक हर्ता।
सकल मनोरथ दायक, कृपा करो भर्ता।
तन, मन, धन अर्पण कर जो जन शरण पड़े।
प्रभु तब प्रकट होकर आकर द्वार खड़े ।।ॐ जय०।।
दीन दयाल दयानिधि, भक्तन हितकारी।
पापदोष सब हर्ता, सब संशय हारी।
विषय विकार मिटाओ सन्तन सुखारी ।।ॐ जय०।।
जो कोई बृहस्पतिजी की करे आरती।
धन जन सुख सब पा लेता ।।ॐजय०।।

*

शुक्रवार-व्रत विधि

इस व्रत को करने वाले कथा कहत-सुनते समय हाथ में गुड़ और भुने चने रखें, सुनने वाले 'सन्तोषी माता की जय' 'सन्तोषी माता की जय' इस प्रकार जय-जयकार मुख से बोलते जावें। कथा समाप्त होने पर हाथ का गुड़-चना गाय को खिलावें। कलश पर रखा हुआ गुड़-चना सबको प्रसाद रूप में बाँट दें। कथा के पूर्व कलश को जल से भरें, उसके

ऊपर गुड़-चना से भरा कटोरा रखें। कथा समाप्त होने और आरती होने के बाद कलश के जल को घर में सब जगह पर छिड़कें और बचा हुआ तुलसी की क्यारी में सींच देवें। सवा आने का गुड़ और चना लेकर माता का व्रत करें। सवा पैसे का भी लेवें तो भी कोई आपत्ति नहीं, गुड़ घर में हो तो उसे लेवें, कोई विचार न करें, क्योंकि माता तो भावना की भूखी हैं, कम-ज्यादा का कोई विचार नहीं है। व्रत के उद्यापन में अढ़ाई सेर का खाजा, खीर और चना का शाक नैवेद्य रखें। घी का दीपक जला संतोषी माता का जयकार बोल नारियल तोड़ें। इस दिन घर में कोई प्राणी खटाई न खावें। खट्टा वस्तु खाने से माता का कोप होता है, इसलिए उद्यापन के दिन दाल, शाक आदि किसी भी वस्तु में खटाई न डालें न आप खावें न खटाई किसी दूसरे को खाने को दें। इस दिन आठ लड़कों को भोजन करावें, देवर, जेठ, कुटुम्ब का मिलता हो तो दूसरों को बुलाना नहीं, अगर कुटुम्ब के न मिलें तो ब्राह्मणों के, रिश्तेदारों के अथवा पास-पड़ोसियों के लड़के बुला लें, उन्हें खटाई की वस्तु न देनी तथा भोजन करा यथाशक्ति दक्षिणा देनी चाहिए। नगद पैसा न दें, कोई वस्तु दक्षिणा में देवें। व्रत करने वाला कथा सुनकर प्रसाद ले और एक समय भोजन करे। इस प्रकार व्रत करने से माता जैसे उसे बाई पर प्रसन्न हुई वैसे ही सब पर प्रसन्न होंगी।

कथा

एक बुढ़िया थी, उसके सात बेटे थे, जिसमें छः काम करने वाले और एक निकम्मा था। परन्तु उसकी माता उसे भी उसी में-से किसी प्रकार खिलाती-पिलाती थी। एक दिन वह अपमानवश वह परदेश चल पड़ा। जाते समय उसने अपने बहू से भेंट की, जो गौशाले में कण्डे थाप रही थी। वह वहाँ जाकर बोला—

'हम जावें परदेश को, आवेंगे कछु काल।
तुम रहियो संतोष से, धर्म आपनो पाल।।'

बहू बोली—

'जाउ पिया आनन्द ते, मन से सोच हटाय।
राम भरोसे हम रहें, ईश्वर तुम्हें सहाय।।

देउ निशानी आपुनी, देख धरूँ मैं धीर।
सुधि मति हमरी बिसारियो, रखियो मन गंभीर।।'

यह सुन उसने अँगूठी दे दी और बहू से अपने लिये कुछ निशानी माँगी। वह बोली— मेरे पास क्या है? यह गोबर भरा मेरा हाथ है, यह कह उसकी पीठ पर गोबर की थाप मार दी, वह चल दिया और परदेश में पहुँचकर सेठ के यहाँ नौकरी कर उसे ऐसा मुनाफा दिखाया कि सेठ मुनाफे में आधा-साझा कर लिया और बारह वर्षों में वह नामी सेठ बन गया। इधर सास-ससुर उसकी बहू से गृहस्थी का सारा कार्य करा लकड़ी लेने को जंगल में भेजते। इस बीच में भूसी की रोटी बनाकर उसके लिये रख दी ज़ाती और फूटे नारियल की नरेली में पानी। बहू को इस प्रकार गुजर करते कुछ दिन बीता कि एक दिन उसने रास्ते में स्त्रियों को शुक्रवार का व्रत अर्थात् संतोषी माता का व्रत करते देख पूछा— बहनों! यह किस देवता का व्रत करती हो? इसके करने से क्या फल होता है? यह सुनकर एक स्त्री बोली— यह शुक्रवार-व्रत अर्थात् संतोषी माता का व्रत है, इसके करने से निर्धनता का नाश होकर लक्ष्मी घर में आती है। मन की चिंताओं का भार दूर होता है और घर में सुख आता है, निपुत्री को पुत्र मिले, स्वामी बाहर गया हो तो शीघ्र घर आ जावे, कन्या को मन पसन्द पति मिले, बहुत साल से मुकदमा चलता हो तो शीघ्र निपट जाय, क्लेश जाय, सुख-शान्ति आवे,-घर में धन जमा हो, जायदाद का लाभ हो, रोग दूर हो। इस प्रकार सभी मनोकामनायें संतोषी माता की कृपा से पूरी हो जाती हैं।

बहू ने व्रत क़ी विधि पूछा, उस स्त्री ने कहा— सवा आने का गुड़-चना लेना। इच्छा हो तो सवा पाँच आने का लेना सा सवा रुपये का भी सहूलियत के अनुसार लेना। तात्पर्य यह कि बिना परेशानी श्रद्धा और प्रेम से जितना भी बन सके सवाया लेना। प्रत्येक शुक्रवार को निराहार रह कथा सुने, क्रम टूटे नहीं, लगातार नियम पालन करना। सुननेवाला न मिले तो घी का दीपक जला उसे सामने रख अथवा जल का पात्र आगे रख कथा कहनी चाहिए पर नियम नहीं टूटे, जब तक कार्य सिद्ध न हो जाय नियम पालन करना, कार्य सिद्ध हो जाने पर व्रत का उद्यापन करना। तीन मास में माता फल पूरा करती हैं। यदि किसी के ग्रह खोटे हों तो भी तीन वर्षों

में माता अवश्य कार्य सिद्धि करती हैं। इस व्रत को करने वाले कथा कहते-सुनते समय हाथ में गुड़ और भुने चने रखें और 'संतोषी माता की जय-संतोषी माता की जय' प्रारम्भ, अन्त और बीच में बोलते जावें। कथा समाप्त होने पर हाथ का गुड़-चना गाय को खिला दें और कटोरे का गुड़-चना प्रसाद रूप में बाँट दें, कलश के जल को घर में सब जगह छिड़के और बचा तुलसी की क्यारी में छोड़ दे। कार्य सिद्धि होने पर उद्यापन में अढ़ाई सेर आटे का खाजा (मोयनदार पूड़ी) इसी प्रमाण से खीर तथा चने का शाक बनाना और आठ लड़कों को इसमें भोजन कराना, जहाँ तक बने कुटुम्ब के लड़के बुलाना, न मिलें तो रिश्तेदार, पड़ोसियों के लड़के बुलाना, उन्हें भोजन करा यथा-शक्ति दक्षिणा दे माता का नियम पूरा करना। उस दिन घर में कोई खटाई न खावें। यह सब व्रत का विधान सुन बुढ़िया के लड़के की बहू चल दी और रास्ते में लकड़ी का गट्ठा बेचकर व्रत प्रारम्भ कर दिया और माता के मन्दिर में जा दीन हो विनती करने लगी। माता को दया आई। एक शुक्रवार बीता कि दूसरे शुक्रवार को उसके पति का पत्र आ गया और तीसरे शुक्रवार को पति का भेजा हुआ पैसा पहुँचा। यह देख जेठ-जिठानी व्यङ्ग वचन बोलने लगे, बहू माता से प्रार्थना की कि, हे माता! अपने सुहाग से काम है। फिर तो संतोषी माता की कृपा से उसका पति असंख्य सम्पत्ति तथा बहू के वास्ते गहना, कपड़ा आदि लेकर परदेश से तुरंत घर को रवाना हो गया। यहाँ बिचारी बहू जब जङ्गल से लकड़ी लेकर माता के मन्दिर पर पहुँची तो कुछ दूर पर धूल उड़ती देख माताजी से पूछने लगी हे माता! यह धूल कैसी उड़ रही है? माता कहने लगीं— पुत्री! तेरा धनी ही तो आ रहा है। अब लकड़ियों के तीन बोझ बना ले, एक नदी के किनारे रख, एक मेरे मंदिर पर रख, एक अपने सिर पर रख। यहाँ लकड़ी का बोझ देख तेरे धनी को मोह उत्पन्न होगा और वह यहाँ नाश्ता-पानी बना-खाकर घर जायेगा। तब तू लकड़ियों का बोझ आँगन में पटक देना और सासु से भूसी की रोटी और नरेली में पानी माँगना। फिर तो बहू ने वैसा ही किया। बुढ़िया पुत्र मन्दिर से विश्राम कर अपने घर पहुँचा एवं अपने परिवार में बहू की दुर्दशा देख दूसरे घर में चला गया।[पश्चात् अपने धनी के साथ अलग महल में तीन मंजिले पर रहने लगी और शुक्रवार आने पर सविधि उद्यापन किया। इसमें कुटुम्ब के

लड़के औरों के सिखाने से दक्षिंणा में पैसे ले इमली खटाई खरीदकर खाये। जिससे माता कुपित हो गईं। फिर बहू ने क्षमा-याचना कर दुबारा उद्यापन किया और इसमें ब्राह्मणों के लड़कों को भोजन कराया, दक्षिणा में एक-एक मीठा फल प्रदान किया, जिससे माताजी प्रसन्न होकर बहू को बड़ा ही सुन्दर पुत्र प्रदान कीं। जैसे बहू को प्रसन्न होकर माता ने फल दिया। वैसे ही माता सबको फल दें। जो इस कथा को पढ़े-सुने अथवा सुनावे उसके मनोरथ पूर्ण करो करुणामयी माँ!

माताजी की आरती

जय संतोषी माता जय संतोषी माता।
अनेक सेवक जन की सुख सम्पति दाता ।।जय०।।१।।
सुन्दर चीर सुनहरी माँ धारण कीन्हों।
हीरा पन्ना दमके तन सिंगार लीन्हों ।।जय०।।२।।
गेरू लाल छटा छवि बदन कमल सोहै।
मंद हसत करुणामयि त्रिभुवन मन मोहै ।।जय०।।३।।
स्वर्ण सिंहासन बैठी चमर ढुरै प्यारे।
धूप दीप मधु मेवा भोग धरे न्यारे ।।जय०।।४।।
चना गुड़ ही में माँ संतोष कियो।
संतोषी कहलाई भक्तन विभव दियो ।।जय०।।५।।
शुक्रवार प्रिय मानत आज दिवस सोही।
भक्त मण्डली छाई कथा सुनत मोही ।।जय०।।६।।
मंदिर जगमग ज्योति मंगल ध्वनि छाई।
विनय करें तेरे बालक चरनन सिर नाई ।।जय०।।७।।
भक्ति-भाव मय पूजा अंगीकृत कीजै।
जो मन बसै हमारो इच्छा फल दीजै ।।जय०।।८।।
दुखी दरिद्री रोगी संकट मुक्त किये।
बहुत धन-धान्य भरे घर सुख-सौभाग्य दिये ।।जय०।।९।।
ध्यान धरो जाने तेरो मनवांछित फल पायो।
पूजा-कथा श्रवण कर घर आनन्द छायो ।।जय०।।१०।।

शरण गहे की लज्जा रखियो जगदम्बे ।
संकट तुही निवारै दयामयी अम्बे ।।जय०।।११।।
संतोषी माँ की आरती जो कोई जन गावै ।
कहत पुनीत प्रसाद ते सुख-सम्पति बहु पावै।।जय०।।१२।।

*

शनिवार-व्रत माहात्म्य और विधि

सूतजी कहते हैं-हे ऋषियों ! जिस प्रकार शिवजी ने अन्य सब वारों की रचना की इसी प्रकार शनिवार की भी रचना की और इसे उन्होंने यम वार भी कहा तथा शनैश्चरदेव को इस दिन का स्वामी नियत किया। शनिवार को शनिदेव का पूजन करने से वे मृत्यु का निवारण करते हैं। इस दिन जो शनि देवता की पूजा करता है उसे शनिदेव प्रसन्न होकर अभीष्ट फल देते हैं। उनके लिए उनके मंत्रों का जप, होम, दान और किसी वेदी पर, प्रतिमा में, अग्नि में अथवा ब्राह्मण के शरीर में आराध्य देवता की भावना करके षोडशोपचार से उनकी पूजा-अर्चना करे। पूजा के उत्तरोत्तर आधार श्रेष्ठ हैं। पूर्व-पूर्व के अभाव में उत्तरोत्तर आधार का अवलम्बन करना चाहिए। शनैश्चर अपमृत्यु का निवारण करने वाले हैं। शनिवार के दिन बुद्धिमान् पुरुष रुद्र आदि की पूजा करे। तिल के होम से, दान से देवता को संतुष्ट करके ब्राह्मणों को तिल मिश्रित अन्न का भोजन करावे।

जो इस प्रकार शनि की पूजा करता है वह आरोग्य आदि फल का भागी होता है। एक दिन, एक मास, एक वर्ष, तीन वर्ष तक ऐसी साधना करनी चाहिए। प्रारब्ध के निर्माण होते ही संकट को दूर होते देर नहीं लगी, क्योंकि महादेवजी आराधना करने वाले को आरोग्य आदि फल देते हैं। देवताओं का यजन सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओं को देने वाला है। निर्धन मनुष्य तपस्या द्वारा और धनी धन के द्वारा देवताओं की आराधना करे।

कथा

किसी समय सूर्य, मंगल, चन्द्रमा, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु इन नवग्रहों में इस बात का परस्पर विवाद हुआ कि हममें-से बड़ा

कौन है। आपस में सभी अपने को बड़ा मानते। इस कारण कोई निश्चय न हो सका तो सब इन्द्र के पास गये और कहने लगे कि,. आप देवताओं के राजा बनाये गये हैं, अतः इस बात का निर्णय दीजिये कि हमसे कौन बड़ा है। उनकी ऐसी बात सुन इन्द्र घबड़ा गये और विचार करने लगे कि अब मैं क्या करूँ, किसे छोटा कहूँ और किसे बड़ा। ऐसा विचारकर तथा अपने को आपत्ति से बचने के लिए उन्होंने उन ग्रहों को पृथ्वी के राजा विक्रमादित्य के पास भेज दिया और कहा कि आप लोग उन्हीं के पास जाइये वे ही आपका निर्णय करेंगे। इन्द्र द्वारा प्रेषित वे सब देवता पृथ्वी के राजा विक्रमादित्य के पास गये और अपने प्रश्न को उनके सम्मुख रखा। राजा विक्रमादित्य भी बड़ी चिन्ता में पड़े कि मैं किसे छोटा तथा किसे बड़ा बताऊँ, जिसे ही छोटा बताऊँगा वही नाराज होगा, अतः राजा ने मुँह से न कहने वाला एक उपाय सोचा और सोना, चाँदी, काँसा, पीतल, शीशा, राँगा, जस्ता, अभ्रक तथा लोहा नवों धातुओं के नौ आसन बनवाये और सब आसनों को क्रम से रख दिया तथा सब ग्रहों से अपने-अपने आसनों पर बैठने के लिए कहा। जिसका आसन सबसे आगे है वही बड़ा माना जायेगा। लोहे का आसन सबसे पीछे था वह शनि देवता का आसन होता है, अतः शनि देवता ने सोचा कि मुझे सबसे छोटा बनाया गया है इसलिए वे नाराज हो गये और अत्यन्त क्रोध करते हुए बोले— हे राजा! तुम मेरे पराक्रम को नहीं जानते कि मुझमें कितना बल है, जब कि सूर्य एक राशि पर एक माह, चन्द्रमा सवा दो दिन, मंगल डेढ़ माह, बृहस्पति तेरह मास, बुध तथा शुक्र एक-एक माह तथा राहु और केतु दोनों उलटे चलते हुए केवल अट्ठारह माह रहते है। परंतु मैं तो एक ही राशि पर तीस माह तक रहता हूँ।

बड़े-बड़े देवता तक मुझसे दुःखी रहते हैं। हे राजन्! मेरे प्रभाव को कान खोलकर सुन लो कि जब भगवान् राम पर साढ़े-साती आई तो वे वन को गमन कर गये और रावण पर साढ़े साती आई तो राम-लक्ष्मण ने लंका पर चढ़ाई की तथा रावण के समस्त कुल का नाश कर दिया। अतः हे राजन् ! अब तुम सावधान हो जाओ कारण कि अब तुम मेरे कोप का भाजन बन चुके हो। ऐसा कहकर क्रुद्ध हुए शनि देवता वहाँ से चले गये। देवता तो प्रसन्न होकर गये परंतु शनि देवता क्रुद्ध होकर चले गये। अब

तो राजा के ऊपर साढ़े साती आ गयी तथा शनि देवता ही घोड़ों के सौदागर के रूप में विक्रमादित्य की राजधानी उज्जयनी में गये और जब राजा ने घोड़ों के सौदागर के आने की खबर सुनी तो अश्वपाल को अच्छे घोड़े खरीदने की आज्ञा दी। फिर तो अश्वपाल सौदागार के पास जा घोड़े देखने लगा तो घोड़ों की नस्ल तथा उनका मूल्य देख-सुनकर चकित हो गया और तुरन्त ही राजा को खबर दी कि वे स्वयं ही घोड़ों को आकर देखें फिर तो राजा स्वयं घोड़ा देखने आये और एक घोड़े को चुनकर ज्योंही उस पर बैठे कि वह घोड़ा राजा को लेकर बड़ी तेजी से भागा और बहुत दूर एक बड़े जंगल में राजा को छोड़कर अन्तर्धान हो गया। पश्चात् मार्ग न जानने के कारण राजा जंगल में भटकने लगा। -इस प्रकार क्षुधा से पीड़ित भटकते हुए राजा को एक ग्वाल दिखाई पड़ा। जिसने राजा के प्रार्थना करने पर उन्हें पानी पिलाया, पानी पीकर राजा ने ग्वाले से शहर का मार्ग पूछा, उसने बता दिया, तब राजा ने अपनी अँगुली से अँगूठी उतार उस ग्वाले को दे दी, और स्वयं शहर जानेवाले मार्ग पर चल पड़े तथा शहर में पहुँचकर राजा एक सेठ की दुकान पर गये तथा अपना नाम बीका बतलाया। तब सेठ ने उन्हें अच्छा आदमी समझकर जलपान कराया। भाग्य से उस दिन सेठ की दुकान पर बहुत बिक्री हुई जिससे सेठ और भी प्रसन्न हुआ और भोजन करने के लिए बीका को अपने घर ले गया। भोजन करते हुए राजा ने सेठ के घर में एक विचित्र बात देखी कि खूँटी पर एक हार लटक रहा था, जिसे वह खूँटी निगल रही थी। भोजन करने के पश्चात् सेठ जब हार लेने खूँटी पर गया तो उसे हार न मिला, फिर सारे घर में हार की खोज पड़ गयी और सबने बीका को ही अपराधी ठहराया, क्योंकि बीका ही एक नया व्यक्ति था। सब उसे पकड़कर फौजदार के समीप ले गये और कहने लगे कि, यह आदमी देखने में तो भला लगाता है परंतु सेठ का कहना है कि इसके अतिरिक्त और कोई घर में आया ही नहीं जो हार लेता, अतः शंका तो इसीपर होती है। फिर तो राजा ने चोरी के अपराध में उसे चौरंग्या करने की आज्ञा दे दी। फिर तो जल्लादों ने तुरंत बीका का हाथ-पैर काटकर चौरंग्या बना दिया, जिससे उनकी दशा अत्यन्त दयनीय हो गयी। क्योंकि हाथ-पैर थे नहीं, यदि कोई दया करके उनके मुँह में पानी या रोटी डालता तो वे कुछ पा जाते नहीं तो यूँ ही पड़े रहते।

इस प्रकार कष्ट सहते हुए बीका को बहुत दिन बीते कि एक तेली आकर उन्हें अपने घर ले गया और कोल्हू पर बैठा दिया और उसने बोला कि तुम इस पर बैठे-बैठे केवल मुँह से बैल को हाँकते रहो। इस प्रकार बीका का काफी समय व्यतीत हो गया। एक दिन बीका बहुत प्रसन्न हुआ तो वर्षा ऋतु के समय रात में सुन्दर गाना गाने लगा। जिसे सुन उस नगरी की राजकुमारी अति प्रसन्न हुई और दासी को इस बात का पता लगाने को भेजा कि इतना सुन्दर गाना कौन गा रहा है। दासी घूमते-घूमते तेली के घर में गयी और वहाँ उसने देखा कि चौरंग्या गाना गा रहा है। दासी ने आकर राजकुमारी से बाताया कि तेली के घर में जो चौरंग्या रहता है, वही इतना सुन्दर गाना गा रहा है। दासी की बात सुनकर राजकुमारी ने यह निश्चय किया कि अब मैं चौरंग्या से ही विवाह करूँगी। प्रातःकाल हुआ, परंतु राजकुमारी न उठी तो महारानी अपनी पुत्री को जगाने आयी और उसके दुःख का कारण पूछने लगी तो राजकुमारी ने कहा कि मैं जब भी विवाह करूँगी तो उसी चौरंग्या से विवाह करूँगी। जिसे सुन रानी अत्यन्त आश्चर्य में पड़ गयी और बहुत समझाने लगी, परंतु राजकुमारी न मानी और अनशन व्रत का निश्चय किया। फिर जब राजा को खबर मिली कि राजकुमारी ने चौरंग्या से विवाह करने का निश्चय किया है। तो पुत्री के भाग्य विषय में चिन्ता करते हुए उसे समझाने आये।

राजा बोले-पुत्री यह तुमने नादानी का हठ क्यों किया है। क्या तुम चौरंग्या से (जिसके हाथ-पाँव बिल्कुल है ही नहीं) विवाह करके सुखी रह सकोगी? क्या यह सम्भव है कि वह तुम्हें सुख देगा? अतः हे पुत्री! तुम यह व्यर्थ का हठ मत ठानो इससे तुम्हें दुःख होगा। तुम एक प्रतिष्ठित राजा की पुत्री हो। अतः तुम्हारा विवाह भी राजकुल में होना चाहिए। मैं अभी समस्त देशों में तुम्हारे विवाह का प्रस्ताव दूतों के द्वारा भेजता हूँ तथा रूपवान् राजंकुमार के साथ विवाह कर देता हूँ। परन्तु राजकुमारी ने राजा की बात को ठुकरा दिया और अत्यन्त नम्र स्वर में बोली कि, पिताजी! अब आप मुझे अधिक न समझाइये यदि आप और कुछ कहिएगा तो मैं अपने प्राण त्याग दूँगी। मैंने अपनी इच्छा से एक बार जिस वर का वरण किया है यदि वह मुझे नहीं प्राप्त होगा तो मैं विवाह ही नहीं करूँगी। राजकुमारी के ऐसे वचनों को सुन राजा क्रुद्ध हो गये और कहने लगे कि

जा, यदि तू चौरंग्या से विवाह कर स्वयं ही अपना भाग्य फोड़ना चाहती है तो फोड़ मैं क्या कर सकता हूँ। समझाने का जो कर्तव्य था वह मैंने कर दिया अब आगे तुम जानो।

राजकुमारी से ऐसा कहकर राजा ने उस तेली को बुलवाया कि जिसके घर में चौरंग्या रहता था, और बोला कि तुम्हारे घर में जो चौरंग्या रहता है मैं उससे राजकुमारी का विवाह करना चाहता हूँ, अतः विवाह की तैयारी करो। फिर तो तेली अत्यन्त आश्चर्य में पड़ गया। परन्तु राजा के समझाने पर उसने विवाह की तैयारी की। चौरंग्या से राजकुमारी का विवाह हो गया। रात्रि में चौरंग्या तथा राजकुमारी महल में सोये तो अर्धरात्रि के समय शनिदेव ने चौरंग्या को स्वप्न दिया और कहने लगे कि, राजन्! क्या अब भी मेरे प्रभाव को तुमने नहीं जाना कि मुझमें कितना बल है, तुम स्वयं ही देख लो कि तुमने मुझे छोटा बनाकर कितना फल पाया है। अब बोलो तुम्हारा क्या विचार है। तब राजा ने शनि देवता से क्षमा-प्रार्थना की और कहने लगे कि, महाराज! अब आप मुझे क्षमा कीजिए मैं आपकी प्रार्थना करता हूँ तथा जैसा दुःख आपने मुझे दिया है वैसा दुःख और किसी को मत दीजिएगा। फिर शनिदेवता राजा विक्रमादित्य की प्रार्थना से प्रसन्न होकर 'तथास्तु' कहकर अन्तर्धान हो गये और उनकी कृपा से राजा के हाथ-पाँव पहले जैसे हो गये और पूर्णतया स्वस्थ एवं कान्तिमान् दीखने लगे। फिर तो जब राजकुमारी की आँखे खुलीं और उसने विक्रमादित्य को खूब स्वस्थ तथा सुन्दर पाया तो बड़ी प्रसन्न हुई और आश्चर्य करती हुई पूछने लगी। राजा ने सारा वृत्तान्त कह सुनाया यह वृत्तान्त सुन सब लोग राजा विक्रमादित्य की तथा राजकुमारी की खूब प्रशंसा और आदर करने लगे। सेठ को यह बात मालूम हुई तो वह आया और उनके चरणों पर गिर कर क्षमा माँगने लगा तथा बोला— महाराज, आप मेरे अपराध को क्षमा कीजिए, मुझ पर दया कीजिए तथा मेरे यहाँ चलकर प्रीति पूर्वक भोजन कीजिए। ऐसा कह वह राजा को लिवाकर अपने घर गया तथा अनेक प्रकार के सुमधुर मिष्ठान्न तथा व्यंजन बनवाया और उच्च आसन दे भोजन कराया। उसी समय राजा ने एक आश्चर्य की बात देखी कि जो खूँटी हार निगल गयी थी वह पुनः उगल रही थी। जिसे राजा ने सबको दिखाया और कहा कि आप देख लीजिए, पहले मेरे ऊपर शनि देवता का प्रकोप था

जिसके कारण यह खूँटी हार निगल गयी थी, परन्तु अब प्रकोप हट गया, अतः खूँटी हार उगल रही है। जिसे देख सब लोग आश्चर्य में पड़ गये और उनके मस्तक लज्जा से नीचे झुक गये। क्योंकि उन्होंने राजा को हार की चोरी लगाई थी। भोजन समाप्त होने पर सेठ ने राजा को अपना जामात्र बनाना चाहा तथा अपनी कन्या श्री कुँआरी का विवाह राजा से कर दिया और साथ ही में दहेज में बहुत कुछ धन दिया।

इस प्रकार सुखपूर्वक उस नगर में रहते हुए राजा का अपनी राजधानी उज्जैन की याद आई और वे अपनी दोनों पत्नियों और उनके साथ मिले हुए दहेज को लेकर चल पड़े। जब उज्जैन निवासियों ने अपने राजा के आगमन का समाचार सुना तो अति प्रसन्न हुए और राजा के स्वागत की तैयारी करने लगे। इस प्रकार बड़ी प्रसन्नता से राजा अपने भवन में पधारे। फिर तो सारे शहर में बड़ी खुशी मनाई गयी और रात्रि में दीपक जलाया गया। राजा ने सारे शहर में शनिदेव की महिमा का गुणगान करवाया तथा यह कहा कि, शनिदेव सब ग्रहों में बड़े हैं, सब लोग शनिदेवता की प्रसन्नता के लिए चींटियों को आटा डाला करें। जो मनुष्य इस कथा का पठन-पाठन या श्रवण करता है उसके समस्त दुःख दूर जो जाते हैं और उनकी मनोकामना शनिदेव की कृपा से पूर्ण होती है।

शनिदेव की आरती

जय श्री शनिदेवा, स्वामी जय श्री शनिदेवा,
सब में आप शिरोमणि मानत सब देवा।
सभी ग्रहों से बढ़कर महिमा अति भारी,
सूरज पुत्र कहायो मानत संसारी ।।जय श्री०।।
क्रोध दशा भुगताओ छार-छार करता,
राजी हो भुगताओ सब ही दुख हरता।।जय श्री०।।
विक्रामादित्य राजाजी ने भूल करी भारी,
साढ़े साती भुगताई कर दानी ख्वांरी।।जय श्री०।।
सब में आप प्रबल हो महिमा अस्र भारी,
धन सम्पत्ति सुख देवो कर दो सुखियारी।।जय श्री०।।

शनिवार है वार आपका पूजत नरनारी,
दान मान बहु करते प्रेम सहित भारी।।जय श्री०।।
शनिदेव की आरती जो कोई नर गावे,
कहत पुनीत भगवत दया वही पावे।।जय श्री०।।

*

श्रीसत्यनारायण व्रत कथा

हमारे देश में प्रायः पूर्णिमा (पूर्णमासी) के दिन भगवान् श्रीसत्यनारायण का व्रत व कथा की जाती है। वैसे सत्यनारायण व्रत किसी भी दिन किया जा सकता है।

व्रत वाले दिन प्रातःकाल स्नानादि से निवृत्त होकर व्रत का संकल्प लेकर दिनभर निराहार रहकर विष्णु भगवान् का ध्यान और गुणगान करना चाहिए। सायंकाल स्नान करके पूजन की तैयारी करें। केले के खम्भों (पत्तों सहित) और आम के पत्तों के वंदनवारों से एक सुंदर मण्डप बनाकर, एक चौकी पर भगवान् सत्यनारायण की प्रत्तिमा स्थापित करें। उसके पास ही कलश, गणेश-गौरीजी और नवग्रह भी स्थापित करें तथा षोडशोपचार से पूजन करें। तत्पश्चात् ध्यानपूर्वक भगवान् सत्यनारण की कथा सुनें। कथा समाप्त होने पर भगवान् के प्रसाद का वितरण करें।

कथा– एक बार नैमिषारण्य में तपस्या करते हुए शौनकादि ऋषियों ने सूतजी से पूछा— जिसके करने से मनुष्य मनोवांछित फल प्राप्त कर सकता है, ऐसा व्रत कौन-सा है? सूतजी ने कहा— एक बार नारदजी ने भी विष्णु भगवान् से ऐसा ही प्रश्न किया था। तब विष्णु भगवान् ने उनके सामने जिस व्रत का वर्णन किया था, वही मैं आपसे कहता हूँ।

प्राचीनकाल में काशीपुरी में एक निर्धन ब्राह्मण रहता था। वह भूख-प्यास से व्याकुल हो यहाँ-वहाँ भटकता फिरता था। एक दिन उसकी दशा से व्यथित होकर विष्णुजी ने वृद्ध ब्राह्मण के रूप में प्रकट होकर ब्राह्मण को सत्यनारण व्रत का विस्तापूर्वक विधान बताया और अंतर्धान हो गए।

ब्राह्मण अपने मन में श्रीसत्यनारायण व्रत करने का निश्चय करके घर लौट आया और इसी चिंता में उसे रात भर नींद. नहीं आई। सबेरा होते ही वह सत्यनारायण के व्रत का संकल्प करके भिक्षा माँगने के लिए चल दिया। उस दिन उसे अल्प परिश्रम से बहुत अधिक धन-धान्य भिक्षा में प्राप्त हुआ। सायंकाल घर पहुँचकर उसने बड़ी श्रद्धा के साथ श्रीसत्य-नारायण भगवान् का विधिपूर्वक पूजन किया। भगवान् सत्यदेव की कृपा से वह थोड़े ही दिनों में धनवान हो गया। वह जब तक जीवित रहा तब तक हर मास श्रीसत्यनारायण का व्रंत और पूजन करता रहा। देह छोड़ने के बाद वह विष्णलोक को गया।

सूतजी पुनः बोले कि एक दिन वह ब्राह्मण अपने बंधु-बांधवों के साथ बैठा ध्यान मग्न हो श्रीसत्यदेव की कथा सुन रहा था। तभी भूख-प्यास से व्याकुल एक लकड़हारा वहाँ जा पहुँचा। वह भी भूख-प्यास भूलकर कथा सुनने बैठ गया। कथा की समाप्ति पर उसने प्रसाद ग्रहण किया और जल पिया। फिर उसने ब्राह्मण से इस कथा के बारे में पूछा तो उसने बताया—'यह सत्यनारायण भगवान् का व्रत है, जो मनोवांछित फल देने वाला है। पहले मैं बहुत दरिद्र था। इस व्रत के प्रभाव से ही मुझे यह सब वैभव प्राप्त हुआ है।'

यह सुनकर लकड़हारा बहुत प्रसन्न हुआ और मन-ही-मन श्रीसत्य-नारायण के व्रत और पूजन का निश्चय करता हुआ लकड़ी बेचने के लिए बाजार की ओर चल पड़ा। उस दिन लकड़हारे को लकड़ियों का दुगुना दाम मिला। उन्हीं पैसों से उसने केले, दूध, दही आदि पूजन की सारी सामग्री खरीद ली और घर चला गया। घर पहुँचकर उसने कुटुम्बियों और पड़ोसियों को बुलाकर विधिपूर्वक भगवान् श्रीसत्यनारायण का पूजन किया। भगवान् सत्यनारायण की कृपा से वह थोड़े ही दिनों में सम्पन्न हो गया।

सूतजी ने फिर कहा— 'प्राचीन काल में उल्कामुख नाम का राजा हुआ था। वह और उसकी रानी दोनों बड़े धर्मनिष्ठ थे। एक समय राजा-रानी भद्रशीला नदी के किनारे श्रीसत्यनारायण भगवान् की कथा सुन रहे थे कि एक बनिया वहाँ पहुँच गया। उसने रत्नों से भरी अपनी नौका को किनारे पर लगा दिया और पूजन स्थान पर पहुँच गया।

वहाँ का चमत्कार देख उसने राजा से इसके बारे में पूछा। राजा ने

बताया— हम विष्णु भगवान् का पूजन कर रहे हैं। यह व्रत सभी मनोकामनाएँ पूर्ण करने वाला है। राजा के वचन सुन और प्रसाद पा बनिया अपने घर चला आया।

घर पहुँचकर उसने अपनी पत्नी से व्रत का वृत्तान्त कहा और संकल्प किया— 'मैं भी संतान होने पर यह व्रत करूँगा।' उसकी पत्नी का नाम लीलावती था। सत्यदेव की कृपा से वह कुछ ही दिनों बाद गर्भवती हो गई और दस महीने पूरे होने पर उसने एक कन्या को जन्म दिया। कन्या का नाम कलावती रखा गया और वह चंद्रमा की कलाओं के समान धीरे-धीरे बढ़ने लगी। एक दिन अवसर पाकर लीलावती ने अपने पति को सत्यदेव का व्रत करने की बात याद दिलाई, तो उसने कहा— मैं यह व्रत कन्या के विवाह के समय करूँगा।' यह कहकर बनिया अपने कारोबार में लग गया। जब कन्या विवाह के योग्य हो गई तो उसने दूतों द्वारा खोज कराकर कंचनपुर नगर के बनिए के सुंदर, सुशील और गुणवान लड़के के साथ उसका विवाह कर दिया। फिर भी बनिए ने सत्यनारायण का व्रत नहीं किया। इससे श्रीसत्यनारायण भगवान् अप्रसन्न हो गए।

कुछ ही दिनों बाद बनिया अपने दामाद को साथ लेकर समुद्र के किनारे रत्नसारपुर में व्यापार करने लगा। एक दिन रत्नसारपुर के राजा चंद्रकेतु के खजाने से चोरों ने बहुत सा धन चुरा लिया। राजा के सिपाही चोरों का पीछा कर रहे थे। चोरों ने जब देखा कि सिपाहियों से बचना कठिन है तो उन्होंने राजकोष से चुराए धन को एक जगह फेंक दिया और स्वयं भाग गए।

वहीं बनिए का डेरा था। सिपाही चोरों को ढूढ़ते हुए उसी जगह पहुँच गए और उन्होंने दोनों बनियों को चोर समझकर पकड़ लिया। राजा ने दोनों बनियों को जेल में डालने का आदेश दिया और उनका सारा धन कोष में जमा करा दिया।

श्रीसत्यनारायण भगवान् के कोप से लीलावती और कलावती भी दुःख भरे दिन काट रही थी। एक दिन कलावती भूख-प्यास से व्याकुल होकर एक मंदिर में चली गई। वहाँ श्रीसत्यनारायण की कथा हो रही थी।

वहाँ बैठकर उसने कथा सुनी और प्रसाद लेकर रात होने पर घर पहुँची। माता ने देरी का कारण पूछा तो उसने सब बात कह दी।

उसकी बात सुनकर लीलावती को अपने पति की भूल की बात याद आ गई और उसने श्रीसत्यदेव के व्रत का निश्चय किया। उसने अपने बंधु-बांधवों को बुलाकर श्रद्धापूर्वक कथा सुनी और नम्र भाव से आर्त होकर प्रार्थना की— मेरे पति ने संकल्प करके भी जो आपका व्रत नहीं किया उसी से आप अप्रसन्न हुए थे। अब कृपा करके उनका अपराध क्षमा करें। लीलावती की प्रार्थना से श्रीसत्यदेव प्रसन्न हो गए।

उसी रात्रि में श्रीसत्यदेव ने राजा चंद्रकेतु को स्वप्न में दर्शन देकर कहा— प्रातःकाल होते ही दोनों बनियों को जेल से छोड़ दो और उनका धन उन्हें लौटा दो, वरना पुत्र-पौत्र समेत तुम्हारा राज्य नष्ट हो जाएगा।

इतना कहकर भगवान् सत्यदेव अंतर्धान हो गए। राजा ने सबेरा होते ही दोनों बनियों की मुक्ति का आदेश दिया। साथ ही उनका धन उन्हें लौटा दिया और सम्मानपूर्वक उन्हें बिदा किया।

दोनों बनिए आनंदित हो अपनी नौका लेकर घर की ओर चल पड़े। तभी श्रीसत्यनारायण भगवान् संन्यासी के वेश में उनके समीप आए और बोल— तुम्हारी नौका में क्या है? बनिए ने हँसते हुए उत्तर दिया— नौका में पत्तों के सिवाय और कुछ भी नहीं है। यह सुनकर संन्यासी ने कहा— तुम्हारा वचन सत्य हो। संन्यासी के चले जाने पर बनिए ने देखा कि नौका हल्की होकर ऊपर को उठ रही है। उसे बड़ा कौतूहल हुआ और यह देखकर कि नौका में तो सचमुच ही पत्ते भरे हैं, वह बेहोश होकर गिर पड़ा।

किंतु दामाद ने कहा— इस प्रकार घबराने से काम न चलेगा। यह सब उन्हीं स्वामीजी का अभिशाप है। उनसे जाकर प्रार्थना की जाए तो फिर वैसा ही हो जाएगा। दामाद की बात मानकर बनिया स्वामी के पास पहुँचकर उनके चरणों में गिर पड़ा और उनसे क्षमा माँगने लगा। उसकी विनीत प्रार्थना से भगवान् से प्रसन्न होकर उसे इच्छित वरदान दिया और अंतर्धान हो गए।

बनियों ने नाव के पास जाकर देखा तो वह धन-रत्नों से भरपूर थी। तब उन्होंने वही श्रीसत्यनारायण भगवान् का पूजन किया और कथा सुनी। फिर घर की ओर चल दिए।

अपने नगर के समीप पहुँचकर बनिए ने पत्नी लीलावती के पास अपने आने का समाचार भेजा। लीलावती उस समय श्रीसत्यनारायण की कथा सुन रही थी। उसने अपनी पुत्री कलावती से कहा— तुम्हारे पति और पिता आ गए हैं। मैं उनके स्वागत के लिए चलती हूँ, तुम भी प्रसाद लेकर शीघ्र ही नदी तट पर पहुँच जाना।

कलावती प्रसन्नता के कारण इतनी विमुग्ध हो गई कि वह कथा का प्रसाद लेना भूल गई और तुरन्त ही नदी के तट की ओर दौड़ पड़ी। वह ज्योंही नदी के किनारे पहुँची त्योंही उसके पति समेत नौका जल में डूब गई।

यह देख बनिया हाहाकार करके छाती पीटने लगा। लीलावती भी दामाद के शोक में विलाप करने लगी और कलावती अपने पति के खड़ाऊ लेकर सती होने को उद्यत हुई। तभी आकाशवाणी हुई—हे वणिक्! तेरी कन्या सत्यनारायण के प्रसाद का निरादर करके पति से मिलने के लिए आतुर होकर दौड़ आई है। यदि वह प्रसाद लेकर फिर आए तो उसका पति जी उठेगा। यह सुनकर कलावती घर की ओर दौड़ गई और श्रीसत्यनारायण भगवान् का प्रसाद लेकर नदी के किनारे आई तो देखा कि उसके पति समेत नौका जल पर तैर रही है। यह देख बनिया भी प्रसन्न हो गया और अपने घर पहुँच गया। तथा श्रद्धापूर्वक कथा हर महीने सुनने लगा।

इसके पश्चात् सूतजी बोले— एक समय तुंगध्वज राजा शिकार खेलने के लिए वन में गया हुआ था। वहाँ उसने देखना कि एक वटवृक्ष के नीचे बहुत से गोप-ग्वाल एकत्रित होकर सत्यनारायण भगवन् की कथा सुन रहे हैं। राजा ने न तो सत्यनारायण भगवान् को नमस्कार किया और न पूजन स्थल के पास ही गया। गोपगण राजा हो देखकर स्वयं प्रसाद लेकर उसके पास आए और प्रसाद राजा के सामने रख दिया। राजा ने प्रसाद की कुछ परवाह न की और महल की ओर चला गया। राजद्वार पर पहुँचते ही राजा का मालूम हुआ कि उसके पुत्र-पौत्र और धन-सम्पत्ति सब नष्ट हो गए हैं। उसे वन की घटना स्मरण हो आई और उसने विचार किया— 'श्रीसत्यदेव के प्रसाद का निरादर करने के कारण ही मुझे यह दु:ख प्राप्त हुआ है।'

यह सोचकर राजा पुन: वन में गया और सब गोप-ग्वालों के साथ मिलकर श्रद्धा और भक्ति के साथ श्रीसत्यदेव का पूजन करके प्रसाद ग्रहण किया। इसके बाद वह घर पर लौट आया तो उसके मृत पुत्र-पौत्रादि भी

जी उठे और नष्ट हुई सम्पत्ति भी ज्यों की त्यों हो गई। तब से राजा जीवन भर समय-समय पर श्रीसत्यदेव का व्रत और पूजन करता रहा।

मासोपवास व्रत

मासोपवास व्रत वर्ष के तीन मासों आषाढ़, श्रावण भादों इत्यादि तीन मासों के किसी भी मास के शुक्ल पक्ष में किये जा सकते हैं। इस व्रत में एकाग्रचित्त होकर मनसा, वाचा, कर्मणा इन्द्रियों को वश में करके पूर्ण इन्द्रिय निग्रह कर पंचगव्य (१गोदुग्ध, २ गोमूत्र, ३ गो दधि, ४. गो घृत तथा ५. गोबर) पीकर भगवान् विष्णु का वेदपाठी ब्राह्मणों से पूजन कराया जाय। विष्णु पूजन के लिये वेदमंत्री को प्रयुक्त करना चाहिए स्वयं भी व्रत का संकल्प धारण करे। इस प्रकार व्रत को समर्पण करके प्रत्येक दिन मासान्त तक पंचामृत से स्नान कराते हुए भगवान् का पूजन करें।

भगवान् की आरती उतारी जाय तथा उनके सामने दीपक भी जलाया जाय। नित्य प्रति चिर-चिरा की दौतुन की जाय। भगवान् का स्मरण चिन्तन किया जाय। इस प्रकार नियमों का पालन करते हुए मासान्त पर ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा देकर प्रणाम कर उनका आशीष ग्रहण कर उन्हें विदा करें। तदुपरान्त आप स्वयं भोजन करें।

इन विधियों को १३ वर्षों में १३ व्रतों को पूर्ण करें। यह व्रत विशेष रूप से वीतरागी संन्यासियों, ब्रह्मचारियों, वानप्रस्थियों तथा विधवा महिलाओं को अवश्य करना चाहिए।

इनके अतिरिक्त और सभी इस व्रत को कर सकते हैं। इस व्रत को करने से व्रतकर्त्ता को मोक्ष की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार व्रत और त्यौहार की कथाएँ समाप्त।

*

पुस्तक प्राप्ति स्थान—

श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार

कचौड़ीगली-वाराणसी-२२१००१

मुद्रक — **भारतप्रेस कचौड़ीगली, वाराणसी**

पुस्तक	मूल्य
विष्णुयाग पद्धति भाषा टीका	१५०)
विवाह पद्धति भाषा टीका	२५)
पंचरत्न विवाह-पद्धति भाषा टीका	२५)
प्रेत-मञ्जरी भाषा टीका	३०)
उपनयन पद्धति भाषा टीका	२५)
वाशिष्ठी हवन पद्धति भाषा टीका	२५)
नित्यकर्म पद्धति भाषा टीका	१०)
गणपति प्रतिष्ठा पद्धति भा० टी०	२५)
कुम्भविवाह-प्रयोग भाषा टीका	८)
पार्वण श्राद्ध पद्धति भाषा टीका	८)
धनिष्ठादि पञ्चक शान्ति भा०टी०	२०)
मूल शान्ति भाषा टीका	५)
विश्वकर्मा कथा-पूजा पद्धति भा० टी०	८)
लक्ष्मी उपासना भाषा टीका	२५)
गृहवास्तुशान्ति पद्धति भा० टी०	३०)
सुगम वास्तु शान्ति प्रयोग भा०टी०	१५)
सत्यनारायण व्रत कथा ७ अध्याय भाषा टीका	१०)
सत्यनारायण व्रत कथा ५ अध्याय भाषा टीका	८)
अन्नपूर्णा व्रत कथा भाषा टीका	१५)
शिवरात्रि व्रत कथा भाषा	८)
संकष्टीगणेशचतुर्थी व्रत कथा भाषा टीका	६०)
संकष्टीगणेशचतुर्थी व्रत कथा भाषा	२५)
वटसावित्री व्रत कथा भाषा टीका	६)
प्रदोष व्रत कथा भाषा	५)
अनन्त व्रत कथा भाषा टीका	५)
ऋषिपञ्चमी व्रत कथा भाषा टीका	५)
महालक्ष्मी वसना पूजन भा० टी०	६)
महालक्ष्मी व्रत कथा भाषा टीका	५)
हरितालिका (तीज) व्रत कथा भा०टी०	५)
जीवित्पुत्रिका व्रत कथा भाषा टीका	३)
संकटा व्रत कथा भाषा	५)
एकादशी माहात्म्य भाषा	१५)
कार्तिक माहात्म्य भाषा टीका	५०)
हनुमद्रहस्य भाषा टीका	६०)
गायत्री-रहस्य भाषा टीका	६०)
ऋणमोचन मङ्गलस्तोत्र भा० टी०	१०)
संकटा-स्तुति भाषा टीका	१०)
बटुक भैरव स्तोत्र भाषा टीका	६)
महामृत्युञ्जय जप-विधान भा०टी०	८)
शिव-महिम्न स्तोत्र भाषा टीका	६)
बृहत्-स्तोत्र रत्नाकर बड़ा	७५)
रघुवंश महाकाव्य प्रथम सर्ग	१५)
हितोपदेश मित्रलाभ भाषा टीका	२०)
किरातार्जुनीयम् १-२सर्ग भाषा टीका	१५)
अमर कोष प्रथम काण्ड	१०)
मूल रामायण संस्कृत हिन्दी टीका	१०)
सोरठी बृजाभार ९ ६ भाग	७५)
हनुमान चालीसा भाषा टीका	८)
दुर्गा-चालीसा भाषा टीका	८)
शिव-चालीसा भाषा टीका	८)
हनुमान नवरत्न	५)
अकबर बीरबल	५)

पुस्तक प्राप्ति-स्थान :

श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार

कचौड़ीगली, वाराणसी–२२१००१

मुद्रक : *भारत प्रेस,* कचौड़ीगली, वाराणसी।

हमारे यहाँ की प्रकाशित पुस्तकें एक बार वी.पी. द्वारा मँगाकर अवश्य पढ़ें।

पुस्तक	मूल्य
चालीसा पाठ संग्रह सचित्र बड़ा	२०)
चालीसा पाठ संग्रह गुटका	६)
दुर्गा चालीसा सचित्र फोटो बड़ा	१०)
दुर्गा चालीसा सचित्र फोटो छोटा	१०)
शिव चालीसा सचित्र फोटो बड़ा	१०)
शिव चालीसा सचित्र फोटो छोटा	१०)
हनुमान चालीसा सचित्र फोटो बड़ा	१०)
हनुमान चालीसा सचित्र फोटो छोटा	१०)
सुन्दर काण्ड सचित्र	१०)
हरितालिका तीज व्रत कथा सचित्र	१०)
ऋषीपंचमी व्रत कथा सचित्र	१०)
जीवित्पुत्रिका व्रत कथा सचित्र	१०)
बृहस्पतिवार व्रत कथा सचित्र	१०)
रामरक्षा बड़ा रंगीन	१०)
आरती संग्रह सचित्र बड़ा	१०)
आरती संग्रह सचित्र छोटा	१०)
गणेश चालीसा रंगीन	५)
तुलसी चालीसा रंगीन	५)
लक्ष्मी चालीसा रंगीन	५)
काली चालीसा रंगीन	५)
भैरव चालीसा रंगीन	५)
राम चालीसा रंगीन	५)
श्रीकृष्ण चालीसा रंगीन	५)
गंगा चालीसा रंगीन	५)
सरस्वती चालीसा रंगीन	५)
गायत्री चालीसा रंगीन	५)
शीतला चालीसा रंगीन	५)
सूर्य चालीसा रंगीन	५)
शनि चालीसा रंगीन	५)
विन्ध्यवासिनी चालीसा रंगीन	५)
बजरंग बाण रंगीन	५)
रामायण मनका रंगीन	१०)
आदित्यहृदयस्तोत्र (वाल्मीकि कृत)	५)
संकटाष्टक रंगीन	५)
अपराजितास्तोत्र रंगीन	५)
काली कवच रंगीन	५)
गणेशाथर्वशीर्षस्तोत्र रंगीन	५)
लक्ष्मीस्तोत्र रंगीन	५)
प्रत्यङ्गिरास्तोत्र रंगीन	१०)
विपरीतप्रत्याङ्गिरास्तोत्र भा.टी.	१०)
श्रीसूक्त पुरुषसूक्त भा.टी.	१०)
शिवपुराण भाषा ग्लेज	२००)
रामायण मध्यम भा.टी.	२५०)
वाल्मीकीय रामायण भाषा	२५०)
आनन्द रामायण भाषा	२००)
राधेश्याम रामायण	८०)

पुस्तक	मूल्य
भृगुसंहिता भाषा	१५०)
प्रेमसागर	७५)
श्रीमद्भागवत महापुराण भा.टी.	५००)
श्रीमद्देवीभागवत भा.टी.	६००)
भागवत रहस्य श्रीडोंगरे जी	२५०)
सुखसागर भाषा मध्यम	२००)
दुर्गार्चन-पद्धति भा.टी.	१००)
दुर्गासप्तशती भा.टी.	६०)
दुर्गा सप्तशती भा.टी.	२५)
दुर्गा सप्तशती भाषा	२०)
दुर्गाकवच भा.टी.	८)
दुर्गाकवच ३२ पेजी मूल	५)
दुर्गा रामायण	१५)
मन्त्र-सागर भाषा-टीका	७५)
बगलोपासनपद्धति बगलामुखी-रहस्य भाषा-टीका	४०)
दत्तात्रेय तन्त्र- भाषा टीका	२०)
उड्डीश तन्त्र भाषा-टीका	२०)
रसराजमहोदधि पाँचो भाग	२००)
मानसागरी भाषा-टीका	१००)
जातकाभरण भाषा-टीका	९०)
बृहज्जयौतिषसार भाषा-टीका	७५)
ताजिक नीलकण्ठी भाषा-टीका	७५)
कर्मविपाक संहिता भाषा-टीका	७५)
भावकुतूहल भाषा-टीका	७५)
मुहूर्तचिन्तामणि भाषा-टीका	६०)
लग्नचन्द्रिका भाषा-टीका	४०)
घाघ-भड्डुरी की कहावते भा.टी.	२५)
विश्वकर्मा प्रकाश भाषा-टीका	७५)
स्त्री जातक भाषा-टीका	३०)
शीघ्रबोध भाषा-टीका	२०)
प्रभुविद्या प्रतिष्ठार्णव	२००)
कुण्ड निर्माण स्वाहाकार पद्धति	६०)
विष्णुयाग पद्धति भाषा-टीका	२००)
विवाह पद्धति भाषा-टीका	२५)
उपनयन पद्धति भाषा-टीका	२५)
वाशिष्ठी हवन पद्धति भा.टी.	२५)
संकष्टी हवन पद्धति भा.टी.	६०)
एकादशी माहात्म्य भाषा	१५)
कार्तिक माहात्म्य भाषा	१५)
कार्तिक माहात्म्य भाषा-टीका	४०)
हनुमद्-रहस्य भाषा-टीका	६०)
गायत्री-रहस्य भाषा-टीका	६०)
बृहत्-स्तोत्र रत्नाकर बड़ा	१००)